# "ज्ञा नं-सुज्ञानम्"

A to Z

# Jainism

स्वाध्याय एवं संस्कार पाठशाला के लिये भरपूर विषयवस्तु प्रदान करने वाली एवं
नन्हें-मुन्ने बच्चों के कदमों को सही राह दिखाने वाली एक सरल सचित्र पुस्तक

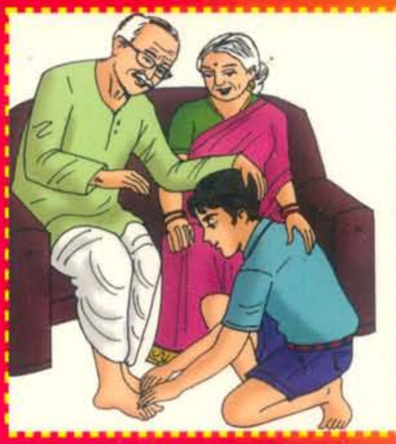

आशीर्वाद :
आचार्य श्री विजयराज जी म. सा.

A to Z

अ
र्थ
सौ
ज
न्य

हार्दिक धन्यवाद

A to Z के प्रकाशन में मिला आपका सहयोग,
सहयोग की ये रश्मियाँ बिखेरेंगी नव आलोक।
संघ का आभार ये भाव से स्वीकार हो,
आप दानदाताओं का नित प्राप्त सहकार हो ॥

- **धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्रीमान् रिखबचन्द जी सा बोहरा, धर्मपत्नी श्रीमती कमलाकंवर जी बोहरा**
  पुत्र-पुत्रवधु : श्री राजेश जी-मंजू जी तथा श्री दिलीप जी-उर्मिला जी बोहरा
  पौत्र : श्रेयांश, अरमान, अर्पण व समस्त बोहरा परिवार, वड़पलनी (चेन्नई) मरुधरा में कुशालपुरा द्वारा
- **धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती पुष्पाबाई जी तालेड़ा धर्मपत्नी स्व. श्री मीठालाल जी तालेड़ा की सद्प्रेरणा एवं आशीर्वाद से**
  सुपुत्र : श्री अशोक जी, श्री महावीर जी, श्री गौतम जी तालेड़ा,
  पौत्र : आशीष, विकास, उज्ज्वल
  परपौत्र : धीर व समस्त तालेड़ा परिवार-कोडम्बाक्कम् (चेन्नई) मरुधरा में ब्यावर द्वारा
- **अनन्य श्रद्धानिष्ठ गुरुभक्त परिवार, कोयम्बटूर (T.N.) द्वारा**
- **धर्मनिष्ठ सुश्राविका स्व. श्रीमती झमकुबाई चाँदमल जी कोठारी की पावन स्मृति में**
  धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्रीमान् किशनलाल जी सज्जनराज जी कोठारी, अलसूर-बेंगलोर द्वारा
- **धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती सौभागबाई जी मूथा धर्मपत्नी स्व. श्री बीजेराज की सद्प्रेरणा व आशीर्वाद से**
  पुत्र-पुत्रवधु : श्री चन्द्रप्रकाश जी-इन्द्राबाई जी, श्री जयन्तीलाल जी-कविता जी, श्री उगमराज जी-रूपा जी मुथा
  पौत्र-पौत्रवधु : महेन्द्र-सपना जी, नीतिन-वन्दना जी एवं ऋषभ मुथा, अलसूर-बेंगलोर (मरुधर में रास) द्वारा
- **महावीर सेल्स कार्पोरेशन, बेंगलोर**
  श्री भैरूमल जी भण्डारी और श्री विनोद जी जैन, बेंगलोर (कर्नाटक) द्वारा
- **धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्रीमान् मांगीलाल जी बोरा (पिपाड़ सिटी) की सद्प्रेरणा एवं आशीर्वाद से**
  सुपुत्र : श्रीमान् राजेन्द्र (राजू) जी बोरा, इलकल (कर्नाटक) द्वारा
- **श्रद्धाशील सुश्रावक श्रीमान् विजय सिंह जी सा. बैद एवं समस्त बैद परिवार कोलकात्ता (W.B.)**
- **पितुश्री श्री मदनलाल जी सेठिया, मातुश्री श्रीमती प्रेमदेवी जी सेठिया की सद्प्रेरणा एवं आशीर्वाद से**
  सुपुत्र : श्रीमान् राजेन्द्र कुमार जी सेठिया, सूरत (गुजरात) मरुधरा में चित्तौड़गढ़ द्वारा
- **श्रद्धाशील सुश्रावक श्रीमान् शान्तिकुमार जी कोठारी, धर्मपत्नी श्रीमती मंजूदेवी कोठारी**
  पुत्र-पुत्रवधु : श्री अमित-शुचि जी कोठारी,
  पौत्र : आदी कोठारी, अहमदाबाद राजस्थान में बीकानेर

**आभार**

**आप सभी के द्वारा सत्साहित्य के प्रकाशन में दिये गये औदार्य भावपूर्वक सहयोग के लिए संघ की ओर से बहुत-बहुत आभार। आपकी श्रुत भक्ति निरन्तर बढ़ती रहे, यह मंगल मनीषा.....**

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी शान्तक्रान्ति जैन श्रावक संघ (राज.)

**सहयोग**

# "ज्ञानं-सुज्ञानम्"

# A to Z Jainism

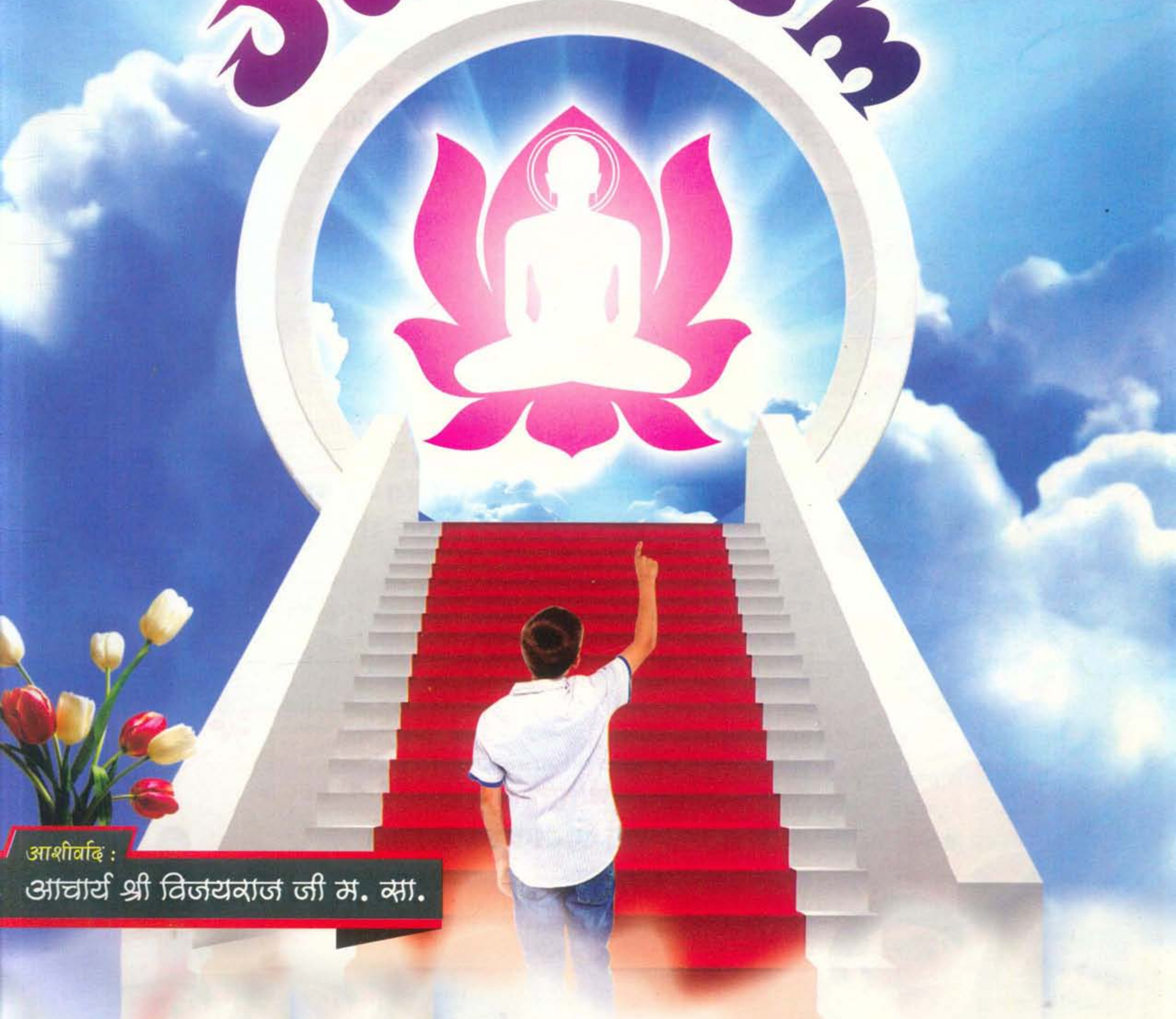

आशीर्वाद :

आचार्य श्री विजयराज जी म. सा.

"ज्ञानं-सुज्ञानम्"

# A to Z Jainism

दिशा-निर्देश एवं कृपा वर्षण
आचार्य श्री विजयराज जी म.सा.
महासती श्री पुष्पावती जी म.सा.
महासती श्री साधनाश्री जी म.सा.

संकलन-सम्पादन
नन्हा फूल

प्रथम संस्करण
वि. सं. 2073, ईस्वी सन् 2016

प्रतियाँ
6,000

मूल्य
₹ 200/- मात्र

प्रकाशक एवं प्राप्ति-स्थान :
**श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी**
**शांत क्रांति जैन श्रावक संघ**
नं. 279 एच, नवकार भवन, हिरणमगरी,
सेक्टर-3, उदयपुर-313 002 (राजस्थान)
फोन : 0294-2461588, फैक्स : 0294-2461338
ईमेल : shramansanskriti@rediffmail.com

मुद्रक एवं साजसज्जा :
संजय सुराना
**श्री दिवाकर प्रकाशन**
आगरा

दिशा

# आचार्य श्री विजयराज जी म. सा. का जीवनवृत्त

| | | |
|---|---|---|
| जन्म | : | बीकानेर (राजस्थान) में वि. सं. 2015, आश्विन शुक्ला 4, दिनांक 17-10-1958 |
| माता-पिता | : | श्रीमती भँवरीदेवी सोनावत–पीहर बोथरा परिवार (दीक्षा के बाद महासती श्री भँवरकंवर जी म. सा.) तथा श्रीमान् जतनमलजी सा. सोनावत (दीक्षा के बाद श्री जितेन्द्र मुनि जी म. सा.) दोनों देवलोक गमन। |
| बहिनें | : | बड़ी बहिन श्रीमती सुन्दर देवी रांका आसींद (जिला-भीलवाड़ा, राज.)। छोटी बहिन–वर्तमान में महासती श्री प्रभावती जी म. सा. (आचार्यश्री, उनके माता-पिता और छोटी बहिन ने एक साथ आचार्य श्री नानेश के श्रीचरणों में दीक्षा ग्रहण की, तदन्तर आपश्री की भांजी महासती श्री युगप्रभाजी म. सा. आपश्री से दीक्षित हुए)। |
| दीक्षा पूर्व | : | बीकानेर में अध्ययन। माताजी द्वारा धार्मिक संस्कारों का बीजारोपण। धार्मिक पाठशाला व बालक मंडली की प्रवृत्तियों से भी संस्कारों का उन्नयन। वैराग्यकाल लगभग डेढ़ वर्ष। |
| दीक्षा ग्रहण | : | जवाहर विद्यापीठ (गंगाशहर-भीनासर, राज.) के प्रांगण में वि. सं. 2029 माघ शुक्ला 13, दिनांक 15-2-1973 को गुरुदेव आचार्य श्री नानेश के समीप। |
| अध्ययन | : | सम्पूर्ण जैनागम, व्याकरण न्याय, दर्शन (बौद्ध, सांख्य, मीमांसक, नैयायिक आदि), काव्य-महाकाव्य (संस्कृत, प्राकृत भाषाओं में), जैन सिद्धान्त रत्नाकर (प्रथम श्रेणी)। |
| गुरु सान्निध्य एवं चातुर्मास | : | गुरुदेव आचार्य श्री नानेश के समीप 17 चातुर्मासों में विनय, वैयावृत्य में निरत, अन्तेवासी शिष्य रूप में समर्पित। 16 चातुर्मास स्वतंत्र किये। पहला स्वतंत्र चातुर्मास 1986 में रतलाम में किया। |
| विचरण क्षेत्र | : | राजस्थान, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, दिल्ली, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश व तमिलनाडु आदि। |
| व्यक्तिगत विशेषताएँ | : | युवा मनस्वी, कविरत्न, शरीर सम्पदा के धारक, सरलता-सहजता-समरसता की प्रतिमूर्ति, जनमानस को भक्तिरस में भावविभोर कर देने वाले स्वर माधुर्य के धनी, तेजस्वी, प्रतिभाशाली, प्रभावीवक्ता, दृढ़ संयमी, जीवन कल्याण के साथ जन कल्याण के अनेक आयामों के प्रणेता, पृथ्वी-सम क्षमाशील, संयत वर्ग की सेवा में सन्नद्ध, मन-वचन-काया के तीनों योगों की शुद्धता एवं शुभता के स्वामी, श्रमण संस्कृति के मंगलमय समन्वय हेतु समर्पित। |
| तरुणाचार्य पद की घोषणा | : | चैत्र वदी दूज 15 फरवरी 1998, चीकारडा |
| तरुणाचार्य पद | : | श्री हुक्मगच्छीय शान्त क्रान्ति संघ के तरुणाचार्य पद पर प्रतिष्ठित, वि. संवत् 2056, माघ शुक्ला पूर्णिमा, दिनांक 31 जनवरी 1999 को चित्तौड़ दुर्ग पर विजयस्तंभ की छाँव में फतह प्रकाश की चौकी पर समारोह पूर्वक। |
| आचार्य पद प्रतिष्ठा | : | आपकी आचार्य पद पर प्रतिष्ठा अजमेर में दिनांक 27 अक्टूबर 1999 तदनुसार कार्तिक कृष्णा तृतीया को हुई। |
| विशेष चाहत | : | समग्र चरित्र निर्माण अभियान के सूत्रधार। |

विजय

# शुभाशंसा

भारतीय संस्कृति में जैन श्रमण संस्कृति का अनुपम गौरवपूर्ण स्थान रहा है । श्रमण संस्कृति आचार में अहिंसा, व्यवहार में अपरिग्रह, विचार में अनेकांत का संदेशा देती है। श्रमण संस्कृति को समर्पित चाहे संत हो या गृहस्थ, उनका जीवन स्वाध्याय और सेवा परायण होता है। स्वाध्याय से वे जहाँ जीवन को मंगल करते हैं वहाँ सेवा से जन को मंगल। जीवन मंगल और जन मंगल की आधारशिला पर ही जगत् कल्याण की कल्पना साकार होती है ।

वर्तमान युग में व्यक्ति अशांत है, परिवार विखंडित है, समाज विक्षुब्ध है, राष्ट्र आतंकित है और कहा जा सकता है कि विश्व विनाश के कगार पर है, ऐसे में सुरक्षा का एकमात्र आधार धर्म ही है। धर्म कोई रूढ़िगत परम्परा नहीं है, यह जीवन सृजन में अन्न, जल से भी ज्यादा आवश्यक प्राण वायु के समान होता है। व्यक्ति व्यसन मुक्त होगा तो परिवार क्लेश मुक्त, समाज आडम्बर मुक्त और राष्ट्र भ्रष्टाचार मुक्त हो सकेगा। व्यक्ति का प्रारम्भिक जीवन बचपन है, बचपन में जो संस्कार प्राप्त हो जाते हैं, वो आजीवन चलते हैं। संस्कारों का ही प्रभाव है कि माँ में ममत्व, बहन में स्नेह, भाई में प्रेम, मित्र में विश्वास और स्वजनों में अपनत्व का भाव पैदा होता है।

बच्चे संस्कारित हों, इसके लिए नवकार संस्कार शाला का कार्यक्रम चल रहा है, उसी के अन्तर्गत संस्कार पाठ्यक्रम की परियोजना में प्रतिभापुंज, कर्मठ व्यक्तित्व की धनी नन्हा फूल सुश्री रंजना बोहरा ने साधु-साध्वियों के निकट बैठकर जो संस्कार सामग्री का संकलन, समायोजन **"ज्ञानं-सुज्ञानम्" A to Z Jainism** के माध्यम से प्रस्तुत किया है, वह बालक-बालिकाओं के चारित्र निर्माण में सहयोगी बनेगा ।

भावी पीढ़ी का जागरण शुभ संस्कारों के साथ हो ऐसी शुभ-मंगल अभीप्सा है ।

नन्हा फूल का कर्मठ व्यक्तित्व तारीफे काबिले है । संघ-विकास में नन्हा फूल का अनवरत सहयोग प्राप्त होता रहेगा, इसी विश्वास के साथ ।

इसी शुभाशंसा के साथ.....

—आचार्य विजयराज

शुभ

# प्रकाशकीय

जब हमें अकेलापन महसूस हो रहा हो,
यात्रा में या मित्रों में, देश में या विदेश में,
संघ में या समाज में, तब आपका सुन्दर साथ निभाएगी
"ज्ञानं सुज्ञानम्" A to Z Jainism
जो जीवन को निखार दे, वचन को सुधार दे,
व्यवहार को संवार दे।

जैनधर्म पर आधारित,
महावीर के सिद्धांतों से आलोकित,
भव्य कलाकृति के साथ
"ज्ञानं-सुज्ञानम् A to Z Jainism" का उपहार,
मिले बच्चों को संस्कार, सुखी बने परिवार,
यही है अंतर उद्‌गार।

अंग्रेजी **Alphabet** के अनुसार बनी हुई यह पुस्तक जैनागमों में वर्णित तत्त्व ज्ञान, स्वर्ग, नरक, धार्मिक उपकरण, सामायिक सूत्र, 25 बोल इत्यादि बहुत सी जानने योग्य बातों को सचित्र दर्शाने वाली पुस्तक है । इन सभी विषयों की प्रारम्भिक जानकारी के साथ उपयोग एवं महत्त्व को भी सरल भाषा में प्रस्तुत किया गया है । खिलते हुए नन्हे फूलों के लिए यह एक अनूठा उपहार बनेगा जिससे बच्चों में धार्मिक संस्कारों का बीजारोपण होगा एवं उनके मन में उठने वाली बहुत सारी जिज्ञासाओं का समाधान भी प्राप्त हो सकेगा ।

जैनागमों में प्रवेश पाना अति कठिन है, क्योंकि उसके शब्द असाधारण हैं। इस पुस्तक में **A to Z** तक वर्णमाला के अनुसार शब्दों का संग्रह कर उनका स्पष्टीकरण किया गया है। यह पुस्तक आगमों का प्रवेश द्वार के समान है।

"ज्ञानं-सुज्ञानम् A to Z Jainism" में वर्णित जीव-अजीव, पुण्य-पाप, धर्म-कर्म चार गति का विवेचन सुनकर बच्चों में वीतराग भाव पैदा हो सकता है, माता-पिता के प्रति विनय एवं परिवार के प्रति प्रेम पैदा हो सकता है। जीव यतना करते-करते वे आगे चलकर अच्छे सुश्रावक पद को सुशोभित कर सकते हैं। इन बच्चों में से कोई गौतम जैसा विनयवान, ज्ञानवान बन सकता है। कोई चंदनबाला, मृगावती, राजीमति जैसी सती साध्वी बन सकती है।

भौतिकता की आँधी से यदि बच्चों की सुरक्षा करनी है, तो धार्मिक संस्कारों से भरी हुई यह पुस्तक "ज्ञानं-सुज्ञानम् A to Z Jainism" अवश्य पढ़ें एवं पाठशाला में पढ़ाएँ। इस एक पुस्तक में जैनधर्म के मूलभूत तत्त्वों को एवं सिद्धांतों को सचित्र, सरल भाषा में समझाया गया है। सपरिवार बैठकर इसे पढ़ें एवं एक सुन्दर समाज की रचना करें ।

हमें आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि यह कृति "ज्ञानं-सुज्ञानम् A to Z Jainism" जन-जन के लिए उपयोगी साबित होगी ।

इस पुस्तक के निर्माण में, प्रूफ संशोधनादि में जिन-जिन महानुभावों का सहयोग प्राप्त हुआ है, उन सभी को सहयोग के लिए संघ हार्दिक धन्यवाद ज्ञापित करता है। इसके प्रकाशन में श्रीयुत संजय जी सुराना का अथक योगदान प्राप्त हुआ है। प्रूफादि के सुधार का पूरा उपयोग रखा गया है, फिर भी कोई त्रुटि रह गई हो तो पाठकों से सुधार की अपेक्षा है।

विनीत : श्री. अ. भा. सा. शांत क्रान्ति जैन श्रावक संघ, उदयपुर

अध्यक्ष
नेमीचन्द कोठारी

महामंत्री
कमलकुमार खाबिया

प्रकाश

## Stop & Stare : What is where?
## रुकें और देखें : कहाँ क्या है?

# INDEX


| S.No. | Alphabet | धार्मिक अध्याय (शीर्षक) | सरगम | साधना की गहराई | कथारूपी विजय पथ | पृष्ठ संख्या |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1. | A | Abhigam – अभिगम<br>Abhaydaan – अभयदान | हम पाँच अभिगम धार... | 63 श्लाघनीय पुरुष, 20 विहरमान, 11 गणधर, 16 सतियाँ, 10 श्रावक | महाराज मेघरथ | 1–5 |
| 2. | B | Bowing down – झुकना<br>Birthday – जन्मदिन | झुक जाना रे... | कम बोलने के नव (9) गुण, बारह महिनों के नाम, अंक ज्ञान | सेवाभावी नंदीषेण मुनि | 6–10 |
| 3. | C | Careful – सावधान | हुआ है प्रभात... | धार्मिक Good Morning | भगवान् अरिष्टनेमि | 11–15 |
| 4. | D | Discipline – अनुशासन<br>Dharm – धर्म | सर जावे तो जावे... | संतों से सामान्य भाषा व्यवहार कैसे करें ? | श्रीपाल मैनासुन्दरी | 16–19 |
| 5. | E | Ego – अहं | दुनिया में आये तो... | 25 अनमोल वचन | भरत बाहुबली | 20–23 |
| 6. | F | Forgiveness – क्षमा<br>Festival – पर्व | ये क्षमा पर्व कैसा... | श्रृंगार – मूल – नहीं | क्षमाशील चण्डकौशिक सर्प | 24–29 |
| 7. | G | Guru – गुरु, Gochari – गौचरी<br>Gyan ki Aashatana – ज्ञान की आशातना | बनते हैं बिगड़े... | श्रुत स्तुति, ज्ञान सीखने से पहले, ज्ञान सीखने के बाद, ज्ञान वृद्धि के 11 बोल | कर्मों का फल (सीता) | 30–35 |
| 8. | H | Hell – नरक | पाप करेगा उसको... | छठे आरे के दु:ख की झलक | रोहिणेय चोर | 36–40 |
| 9. | I | Indra – इन्द्र<br>Indriya – इन्द्रियाँ | कितनी बार जगाया.. | छह काया | ईलाचिकुमार | 41–46 |
| 10. | J | Jai Jinendra – जय जिनेन्द्र<br>Jeevdaya – जीवदया | जय-जिनेन्द्र... | श्रावक जी के वचन व्यवहार | धर्मरूचि अणगार | 47–50 |
| 11. | K | Kandmool – कंदमूल<br>Kashay – कषाय | जो कर्ज लिया... | आठ धर्म के फल : अनुप्रेक्षा से | सनत्कुमार चक्रवर्ती | 51–55 |
| 12. | L | Love – प्रेम<br>Leshya – लेश्या | प्रेम बढ़ाना... | महापापी | अतिमुक्त कुमार | 56–60 |
| 13. | M | Muhapatti – मुँहपत्ती<br>Manorath – मनोरथ | मैं बनूँ आराधक... | तीर्थंकर भगवान के 34 अतिशय | आर्द्रकुमार | 61–63 |
| 14. | N | Namaskar Mahamantra – | नवकार जपने से... | 8 कर्म क्षयार्थ महावीर स्वामी की | अमरकुमार | |

| | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | | नमस्कार महामंत्र | | साधना, रोगोत्पत्ति के नव कारण<br>पच्चक्खाण की अंगूठी से क्या लाभ ?<br>भूखे रहे बिना बेले का लाभ... | | 64-68 |
| 15. | O | Ogha – ओघा | संयम जैसा स्थान... | श्रमण निर्ग्रंथ के सुख की तुलना | आर्य वज्रस्वामी | 69-72 |
| 16. | P | Promise – व्रत<br>Pratikraman – प्रतिक्रमण<br>Praayashchitt – प्रायश्चित्त | जैनधर्म को पाया... | अठारह पाप के फल | आनन्द श्रावक | 73-80 |
| 17. | Q | Quiet – शांति | अनुकूलता हो... | भ. महावीर स्वामी का संक्षिप्त परिचय | महारानी त्रिशला और देवानंदा | 81-85 |
| 18. | R | Ratri Bhojan – रात्रि भोजन | जीवन बहता पानी | भगवान महावीर स्वामी की घोरातिघोर.. | मेघकुमार | 86-89 |
| 19. | S | Saamaayik – सामायिक<br>Samvar – संवर | आजा रे-2 ओ मेरे... | छह आरों का वर्णन | राजा श्रेणिक और<br>सामायिक का महत्व | 90-93 |
| 20. | T | Tattva – तत्त्व | साधना के रास्ते... | पुण्य खपाने का... | स्थूलिभद्र | 94-99 |
| 21. | U | Upkaran – उपकरण | माला एक जपना... | जीव को 10 बोल मिलना दुर्लभ | देवभद्र-यशोभद्र | 100-103 |
| 22. | V | Vyasan – व्यसन | क्या ढूँढ़ता, है... | जैनधर्म की 12 शिक्षा | सुदर्शन सेठ - अर्जुनमाली | 104-108 |
| 23. | W | Watch – घड़ी<br>Water Safety – जल सुरक्षा | सुख आते हैं... | अवसर्पिणी काल के 10 आश्चर्य | नंदन मणियार | 109-113 |
| 24. | X | X-Ray – एक्स-रे | | | | 114 |
| 25. | Y | Yatana – यतना | दुनिया का सहारा | तीर्थंकर भगवंतों का विवरण, | जम्बूकुमार | 114-118 |
| 26. | Z | Zindagi – जिन्दगी | जिन्दगी में हजारों | तीर्थंकरों का छोटा लेखा | गजसुकुमाल | 119-123 |
| 27. | AA | साधना की नींव | | 1. सामायिक सूत्र अर्थ चित्र सहित<br>2. पच्चीस बोल सचित्र | | 124-133<br>134-147 |
| 28. | BB | साधना की शुरूआत | नवकार मंत्र है..., सेवो सिद्ध सदा..., साता कीजो जी..., अरिहंत जय जय..., जय बोलो महावीर..., अरिहंत देव मेरी..., अपना कर्त्तव्य करते चलो..., श्री आदि जिनंदं..., तुमसे लागी लगन..., संयम उसको मिले..., मेरे जीवन का..., उम्र थोड़ी सी..., माता की दया हम..., सहना ही जिन्दगी... । | | | 148-150 |
| 29. | CC | 32 आगमों के दस द्वार | | | | 151 |
| 30. | DD | पुरुषाकार चक्रम् | | | | 152 |


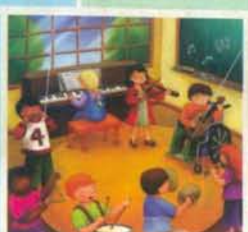
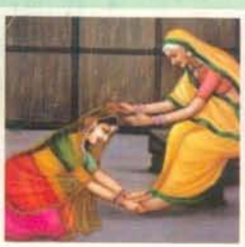

रुकें

# पंच परमेष्ठी के रंगों का वैज्ञानिक विश्लेषण

**प्र.1 जैन ध्वज में कितने रंग होते हैं?**

उ. पांच रंग - 1. श्वेत, 2. रक्त, 3. पीत, 4. हरा, 5. काला

**प्र.2 उपरोक्त पांच रंग किसके प्रतीक हैं?**

उ. ये पांच रंग पंचपरमेष्ठी के प्रतीक हैं-

1. श्वेत वर्ण अरिहंत परमात्मा का प्रतीक है।
2. रक्त वर्ण सिद्ध परमात्मा का प्रतीक है।
3. पीत वर्ण आचार्य भगवंत का प्रतीक है।
4. हरित वर्ण उपाध्याय भगवंत का प्रतीक है।
5. कृष्ण वर्ण मुनि भगवंत का प्रतीक है।

**प्र.3 अरिहंत परमात्मा का वर्ण श्वेत क्यों कहा गया?**

उ. 1. अरिहंत परमात्मा का ध्यान शुक्ल होता है।

2. वृषभ (बैल) का वर्ण श्वेत होता है और उसके द्वारा भूमि में धान्य का वपन होता है। उसी प्रकार परमात्मा देशना के द्वारा भव्य जीवात्माओं में सम्यक्त्व/संयम रूपी बीजारोपण करते हैं।

3. अरिहंत परमात्मा का रक्त श्वेत- वर्णीय होता है।

4. कषाय, काम, अज्ञान आदि अठारह पाप स्थानों के पाप-मल से सर्वथा शुद्ध उनकी आत्मा में केवलज्ञान, यथाख्यात चारित्र आदि निर्मल, अमल गुण प्रकट होने से अरिहन्त परमात्मा का श्वेत वर्ण कहा गया है।

5. चारों घाती कर्मों का सर्वथा क्षय होने से विश्व के समस्त चराचर, सूक्ष्म-स्थूल पदार्थों को हस्त आमलकवत् जानते हैं और स्फटिक की भांति पारदर्शी, पवित्र एवं विशुद्धि परिणति को प्राप्त होने से अरिहंत का श्वेत वर्ण कहा गया।

**प्र.4 सिद्ध परमात्मा का रक्त वर्ण क्यों कहा गया?**

उ. 1. जो व्यक्ति परम स्वस्थ एवं रोग रहित होता है, उसकी छाया रक्तवर्णीय चमकदार प्रतीत होती है, उसी प्रकार सिद्ध परमात्मा अष्ट कर्म रूपी रोग से मुक्त होकर परम निरामय-निरोगी अवस्था को प्राप्त हो चुके हैं, अत: सिद्ध परमात्मा का वर्ण रक्त कहा गया।

2. जैसे अशुद्ध स्वर्ण में विविध द्रव्य मिश्रित करके अग्नि में सुहागे आदि के सहयोग से गलाने पर जब रक्त अवस्था प्राप्त होती है तब सोना शुद्ध, चमकदार बन जाता है, उसी प्रकार आत्मा तपाग्नि में तपकर व रोग मुक्त होकर तेजोमय लाल वर्ण जैसा रूप धारण कर लेता है अत: सिद्धों का रक्त वर्ण कहा गया।

**प्र.5 आचार्य भगवंत का पीत वर्ण क्यों कहा गया?**

उ. 1. वन का राजा केसरी सिंह जब गर्जना करता है, तब समस्त वन्य प्राणी शांत होकर उसकी आज्ञा को धारण करते हैं, उसी प्रकार आचार्य प्रवर जब जिनोक्त सूत्रों की आज्ञा फरमाते हैं, तब समस्त श्रोता उनकी आज्ञा को शिरोधार्य करते हैं, अत: केसरी सिंह के वर्णानुरूप आचार्य भगवंत का पीत वर्ण कहा गया।

2. आचार्य भगवंत तीर्थंकर की अनुपस्थिति में सम्पूर्ण विश्व में स्वोपार्जित ज्ञान-विज्ञान की किरणों को प्रसारित करते हैं अत: इनका तेजोमय पीत वर्ण कहा गया।

**प्र.6 उपाध्याय भगवंत का वर्ण हरा क्यों कहा गया?**

उ. 1. हरा वर्ण आँखों की रोशनी को बढ़ाता है, उसी प्रकार उपाध्याय भगवंत आगम, शास्त्र, तत्त्व आदि का पठन-पाठन करवाते हैं अत: श्रुत रूपी नयन देने के कारण उपाध्याय भगवंत का हरित वर्ण कहा गया।

2. उपाध्याय स्व-पर ज्ञान, ध्यान एवं आत्म विकास में अत्यन्त निपुण एवं पारगामी होते हैं। जिस प्रकार हरा वर्ण कषाय-क्षय में महत्वपूर्ण है और कषाय-विजय से समता आती है, उसी प्रकार आगम ज्ञान से समता आती है और समता से ज्ञान-विज्ञान का विकास होने से उपाध्याय का हरा वर्ण कहा गया।

**प्र.7 मुनि भगवंत का वर्ण कृष्ण क्यों कहा गया?**

उ. 1. जिस प्रकार एक व्यक्ति जब युद्ध भूमि में जाता है तब काले वस्त्र धारण करता है, उसी प्रकार साधु कर्म शत्रु पर विजय प्राप्त करने के लिये संयम की रणस्थली में उपस्थित होता है, अत: उसका कृष्ण वर्ण कहा गया है।

2. जिस प्रकार काले रंग पर अन्य रंगों का प्रभाव नहीं होता, उसी प्रकार साधु पर राग-द्वेष का प्रभाव नहीं होने से उसका कृष्ण वर्ण कहा गया है।

**प्र.8 सम्यग्ज्ञान-दर्शन-चरित्र-तप का श्वेत वर्ण क्यों कहा गया?**

उ. रत्नत्रयी एवं तप का वर्ण श्वेत कहा गया क्योंकि ये चारों आत्मा के मूल गुण-धर्म है। धर्म आत्मा का विशुद्ध स्वभाव होने से इनका वर्ण भी श्वेत कहा गया।

**प्र.9 क्या इन श्वेत, रक्तादि वर्णों में कोई वैज्ञानिक कारण मौजूद है?**

उ. 1. हमारे मस्तिष्क तथा पृष्ठरज्जु में धुसर रंग का एक द्रव पदार्थ है, जो कि सम्पूर्ण ज्ञान शक्तियों का संवाहक है। 'नमो अरिहंताण' इस परम पद का मस्तिष्क पर श्वेत वर्ण के साथ यदि जाप किया जाये तो ज्ञान तंतुओं को जागृत/विकसित करने वाला द्रव स्रावित होता है। ज्ञान संवाहक ग्रंथियाँ स्वत: सक्रिय होती हैं और अज्ञान आवरण विलीन होते जाते हैं।

2. 'नमो सिद्धाणं' का जाप रक्त वर्ण से यदि भृकुटि पर किया जाये तो तृतीय नेत्र जागृत होता है, पिच्यूटरी ग्लैण्ड (पीयूष ग्रंथि) के स्त्राव संतुलित होते हैं। आलस्य, प्रमाद और सुस्ती नौ दो ग्यारह हो जाते हैं तथा तन, मन व बुद्धि में नयी स्फूर्ति भर जाती है।

3. 'नमो आयरियाणं' पद के ध्यान से व्यक्ति की प्रवृत्ति, मानसिक स्थिति और आवेग नियन्त्रित होते हैं। इसमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण यह है कि इस पद का कण्ठ पर तेजोमय पीत वर्ण के साथ ध्यान करने पर मन संतुलित, स्थिर, एकाग्र, निश्चिंत और पवित्र बनता है क्योंकि इससे कण्ठस्थ थाइराइड ग्लैण्ड के स्राव नियमित होते हैं।

4. 'नमो उवज्झायाणं' पद का हरा रंग है। हरा वर्ण शान्ति खुशहाली, समृद्धि का प्रतीक है और इनका स्थान हृदय है। अत: इस पद का हृदय पर जाप करें तो स्वत: स्वस्थता, शान्ति एवं आनंद से परिपूर्ण स्थिति बन जाती है।

5. पंचम पद का वर्ण है-काला। काला रंग बाह्य प्रभावों को रोकता है इसलिये छाता व न्यायाधीश एवं वकील का काला कोट होता है। 'नमो लोए सव्वसाहूणं' पद का नाभि पर ध्यान करने पर राग-द्वेष के प्रभाव दूर हो जाते हैं।

# पाँच अभिगम

*तीर्थंकरों के समवशरण या संत-सतियाँजी के दर्शनार्थ धर्मस्थान में जाते समय पालने योग्य नियम को 'अभिगम' कहते हैं।*

## 1. सचित्त का त्याग

देव, गुरु के समीप जाते समय इलायची, बादाम, फल-फूल, अनाज, सब्जी आदि सचित्त वनस्पति, कच्चा पानी, चालू टॉर्च, सेल की घड़ी, मोबाइल फोन, डिजीटल डायरी, जेब में मूँग, गेहूँ आदि धान्य के दाने इत्यादि साथ नहीं ले जाना चाहिए।

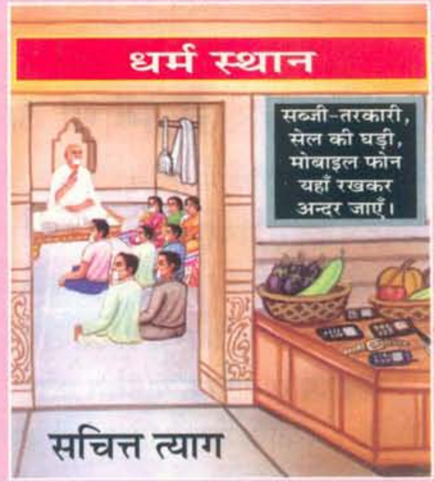


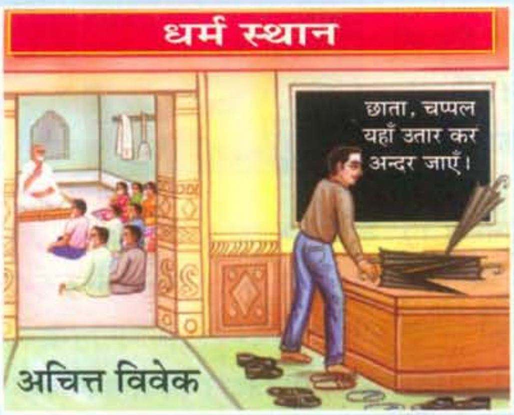

## 2. अचित्त का विवेक

अभिमान सूचक वस्तु, जैसे—छत्र, माला, जूते, टोपी, पगड़ी, मुकुट, शस्त्रादि एक तरफ रखकर देव-गुरु की वन्दना करनी चाहिए। भाईयों को सामायिक ग्रहण करते समय महासती जी व बहनों के सामने वस्त्र नहीं बदलकर एक तरफ जाकर वस्त्र बदलना चाहिए।

## 3. उत्तरासंग

देव-गुरु के समक्ष खुले मुँह से नहीं बोलना चाहिए। अर्थात् मुँहपत्ति लगाकर या रूमाल मुँह पर रखकर बोलना चाहिए।

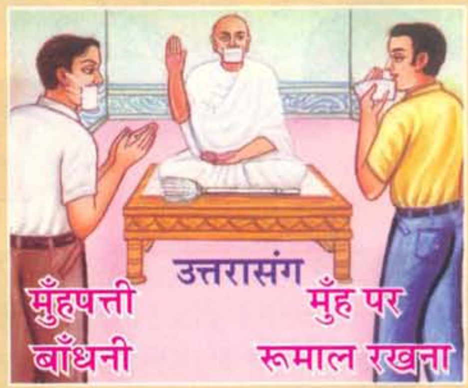


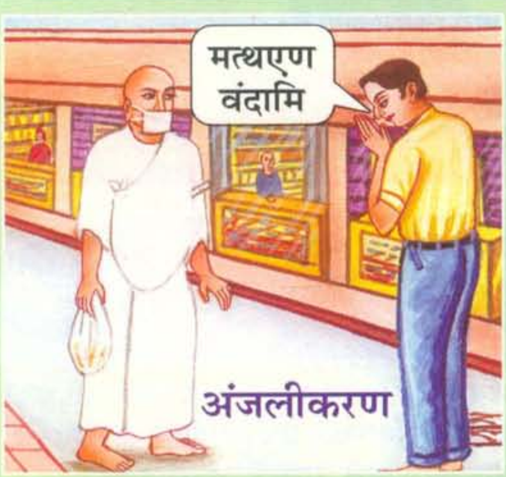


## 4. अंजलीकरण

जहाँ से देव गुरु नजर आये, वहीं से अंजली (हाथ जोड़कर) ललाट पर लगाकर, विनयपूर्वक सिर झुकाकर वंदना करनी चाहिए।

## 5. मन की एकाग्रता

गृह कार्य के प्रपंच तथा पाप कार्यों से मन हटाकर देव-गुरु की वाणी एकाग्रता से सुनकर उस पर पूर्ण श्रद्धा रखनी चाहिए।

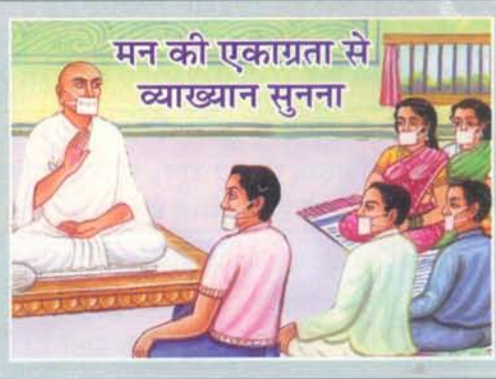

# ABHAYDAAN • अभयदान

*जीव मात्र को दुःख न देना, उनकी हिंसा न करना,*
*बन्धन, दुःख, मृत्यु से भयभीत प्राणियों को भयमुक्त करना अभयदान है।*

**अभयदान देने से सारे जगत के जीवों को साता मिलती है।**
**साता देने से हमें भी सातावेदनीय कर्म का बंध होता है।**

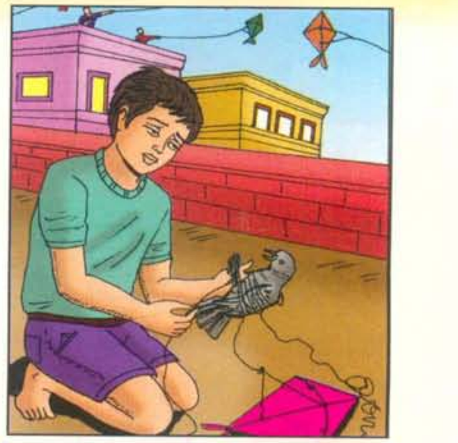

जैसे—खरगोश की दया करके अभयदान देने से हाथी का उद्धार हो गया। कबूतर को अभयदान देने से मेघरथ राजा को तीर्थंकर का पद प्राप्त हुआ। अरिष्टनेमि भगवान ने पशुओं की करुणा से प्रेरित होकर हजारों जीवों को अभयदान दिया।

### यह अभयदान कौन-कौन दे सकते हैं ?

1. जब हम सामायिक या संवर करते हैं, उतने समय में चौदह राजुलोक के जीवों को अभयदान देते हैं क्योंकि उनकी हिंसा नहीं करने का प्रत्याख्यान लेते हैं।
2. जो पंच महाव्रतों का पालन करते हैं, वे पूज्य साधु-साध्वीजी सारी जिन्दगी एक भी जीव की हिंसा स्वयं करते नहीं, करवाते नहीं और अनुमोदन भी नहीं करने का प्रत्याख्यान (नियम) लेते हैं। इसलिए वे सारी जिन्दगी यह अभयदान देते हैं। उन्हें हम श्रद्धा से सिर झुकाते हैं।

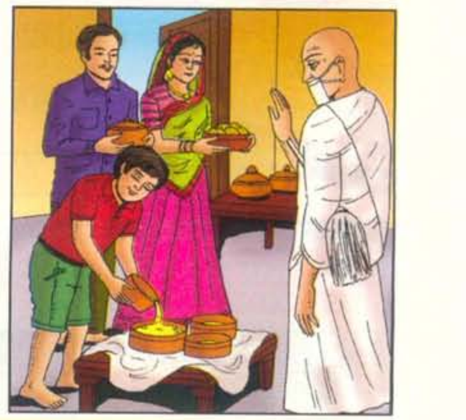

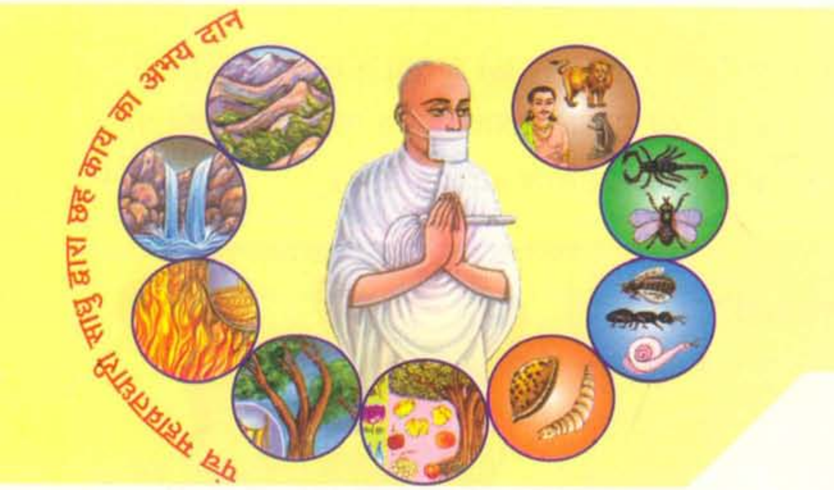


**सुपात्रदान—**(1) हमें अभयदान के दातार पँच महाव्रतधारी पूज्य साधु-साध्वीजी को भोजन के समय सुपात्रदान देने की भावना भानी चाहिए।

(2) साधु-साध्वी जी को सुपात्रदान देने से हम उनके ज्ञान में, दर्शन में, चारित्र में, तप में सहभागी बनते हैं। जिससे हमारे कर्मों की भारी निर्जरा होती है।

## साधना की गहराई

**तीर्थंकर** — साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविका रूप चतुर्विध संघ को धर्मतीर्थ कहते हैं। धर्मतीर्थ की स्थापना करने वाले सर्वज्ञ प्रभु "तीर्थंकर" कहलाते हैं।

**चक्रवर्ती** — छः खण्ड के अधिपति को चक्रवर्ती कहते हैं। जिनकी सेवा में 14 रत्न, 9 निधान, 64000 रानियाँ एवं 16000/25000 देव रहते हैं।

**वासुदेव** — 3 खण्ड के अधिपति को वासुदेव कहते हैं। जिसके पास 7 रत्न, 16000 रानियाँ एवं हजारों देवता सेवा में रहते हैं।

**बलदेव** — ये वासुदेव के बड़े भ्राता होते हैं। वासुदेव व बलदेव इन दोनों के पिता एक ही होते हैं; पर माताएँ भिन्न होती हैं।

**प्रतिवासुदेव** — वासुदेव के प्रतिशत्रु को प्रतिवासुदेव कहते हैं। इनका वध करके ही वासुदेव तीन खण्ड के मालिक बनते हैं।

**गणधर** — तीर्थंकरों की अर्थरूप में निकली जिनवाणी को सूत्ररूप में गूँथनेवाले एवं शिष्यों के गण को धारण करने वाले 'गणधर' कहलाते हैं।

**विहरमान** — महाविदेह में विचरण करने वाले तीर्थंकरों को 'विहरमान' कहते हैं।

**श्रावक** — गृहस्थ जीवन में रहकर आगार धर्म का पालन करने वाले उपासक 'श्रावक' कहलाते हैं।

**सती** — सत्य एवं शीलधर्म की रक्षा में तन-मन-धन कुर्बान करने वाली महिलारत्न 'सती' कहलाती हैं।

## 63 श्लाघ्य महापुरुष : 24 तीर्थंकर+12 चक्रवर्ती+9 वासुदेव+9 प्रतिवासुदेव+9 बलदेव

### चौबीस तीर्थंकर

1. श्री ऋषभदेव स्वामी जी
2. श्री अजितनाथ स्वामी जी
3. श्री संभवनाथ स्वामी जी
4. श्री अभिनंदन स्वामी जी
5. श्री सुमतिनाथ स्वामी जी
6. श्री पद्मप्रभ स्वामी जी
7. श्री सुपार्श्वनाथ स्वामी जी
8. श्री चन्द्रप्रभ स्वामी जी
9. श्री सुविधिनाथ स्वामी जी
10. श्री शीतलनाथ स्वामी जी
11. श्री श्रेयांसनाथ स्वामी जी
12. श्री वासुपूज्य स्वामी जी
13. श्री विमलनाथ स्वामी जी
14. श्री अनंतनाथ स्वामी जी
15. श्री धर्मनाथ स्वामी जी
16. श्री शान्तिनाथ स्वामी जी
17. श्री कुंथुनाथ स्वामी जी
18. श्री अरनाथ स्वामी जी
19. श्री मल्लिनाथ स्वामी जी
20. श्री मुनिसुव्रत स्वामी जी
21. श्री नमिनाथ स्वामी जी
22. श्री अरिष्टनेमि स्वामी जी
23. श्री पार्श्वनाथ स्वामी जी
24. श्री महावीर स्वामी जी

### बारह चक्रवर्ती

1. श्री भरतजी
2. श्री सगरजी
3. श्री मघवाजी
4. श्री सनत्कुमार जी
5. श्री शांतिनाथजी
6. श्री कुंथुनाथजी
7. श्री अरनाथजी
8. श्री सुभूमजी
9. श्री महापद्मजी
10. श्री हरीषेणजी
11. श्री जयषेणजी
12. श्री ब्रह्मदत्तजी

### नव वासुदेव

1. श्री त्रिपृष्ठ जी
2. श्री द्विपृष्ठ जी
3. श्री स्वयंभू जी
4. श्री पुरुषोत्तम जी
5. श्री पुरुषसिंह जी
6. श्री पुंडरिक जी
7. श्री श्रीदत्त जी
8. श्री नारायण जी (लक्ष्मण जी)
9. श्री श्रीकृष्ण जी

### नव प्रतिवासुदेव

1. श्री अश्वग्रीव जी
2. श्री तारक जी
3. श्री मेरक जी
4. श्री कैटभ जी
5. श्री निशुंभ जी
6. श्री बलि जी
7. श्री प्रह्लाद जी
8. श्री रावण जी
9. श्री जरासंध जी

### नव बलदेव

1. श्री अचल जी
2. श्री विजय जी
3. श्री भद्र जी
4. श्री सुप्रभ जी
5. श्री सुदर्शन जी
6. श्री आनन्द जी
7. श्री नन्दन जी
8. श्री पद्मरथ (राम)जी
9. श्री बलभद्र जी

### ग्यारह गणधर

1. श्री इन्द्रभूति जी
2. श्री अग्निभूति जी
3. श्री वायुभूति जी
4. श्री व्यक्त स्वामी जी
5. श्री सुधर्मा स्वामी जी
6. श्री मंडितपुत्र जी
7. श्री मौर्यपुत्र जी
8. श्री अकम्पित जी
9. श्री अचलभ्राता जी
10. श्री मैतार्य स्वामी जी
11. श्री प्रभास स्वामी जी

### बीस विहरमान

1. श्री सीमंधर स्वामी जी
2. श्री युगमन्दिर स्वामी जी
3. श्री बाहु स्वामी जी
4. श्री सुबाहु स्वामी जी
5. श्री सुजात स्वामी जी
6. श्री स्वयंप्रभ स्वामी जी
7. श्री ऋषभानन स्वामी जी
8. श्री अनन्तवीर्य स्वामी जी
9. श्री सूरप्रभ स्वामी जी
10. श्री विशालधर स्वामी जी
11. श्री वज्रधर स्वामी जी
12. श्री चन्द्रानन स्वामी जी
13. श्री चन्द्रबाहु स्वामी जी
14. श्री भुजंग स्वामी जी
15. श्री ईश्वर स्वामी जी
16. श्री नेमप्रभ स्वामी जी
17. श्री वीरसेन स्वामी जी
18. श्री महाभद्र स्वामी जी
19. श्री देवयश स्वामी जी
20. श्री अजितवीर्य स्वामी जी

### दस श्रावक

1. श्री आनन्द जी
2. श्री कामदेव जी
3. श्री चुलनीपिता जी
4. श्री सुरादेव जी
5. श्री चुल्लशतक जी
6. श्री कुंडकोलिक जी
7. श्री सकडालपुत्र जी
8. श्री महाशतक जी
9. श्री नंदिनीपिता जी
10. श्री शालिहीपिता जी

### सोलह सतियाँ

1. श्री ब्राह्मी जी
2. श्री सुन्दरी जी
3. श्री कौशल्या जी
4. श्री सीता जी
5. श्री राजीमती जी
6. श्री कुंती जी
7. श्री द्रौपदी जी
8. श्री चन्दनबाला जी
9. श्री मृगावती जी
10. श्री पुष्पचूला जी
11. श्री प्रभावती जी
12. श्री सुभद्रा जी
13. श्री दमयंती जी
14. श्री सुलसा जी
15. श्री शिवा जी
16. श्री पद्मावती जी

# महाराजा मेघरथ

जम्बूद्वीप के पूर्वमहाविदेह क्षेत्र में **पुष्पकलावती** विजय में **पुंडरिकिणी** नाम की नगरी थी। वहाँ **धनरथ** नाम का महाबली राजा राज्य करता था। उनकी **प्रियमती** और **मनोरमा** नाम की दो महारानियाँ थी। दोनो रानियों के एक-एक बेटे था। उनके नाम **मेघरथ** और **दृढ़रथ** थे। दोनों भाइयों को एक-दूसरे से बहुत प्रेम था। मेघरथ के जवान होने पर उसका विवाह **सुमंदिरपुर** के राजा **निहतशत्रु** की बेटियाँ '**प्रियमित्रा**' और '**मनोरमा**' के साथ हुआ। कुछ समय के बाद धनरथ राजा ने युवराज मेघरथ को राजा बनाया और स्वयं ने संयम स्वीकार कर लिया। महाराजा मेघरथ नीति और न्यायपूर्वक राज्य संचालन करने लगे।

एक दिन महाराजा मेघरथ राजसभा में सिंहासन पर बैठे थे उस समय एक भयभीत कबूतर उनकी गोद में आकर बैठ गया। वह बहुत ही घबराया हुआ था और काँप रहा था। वह मनुष्य की बोली में बोला-"राजन्! मुझे अभयदान दो, मुझे बचाओ।" यह सुनकर राजा ने कहा-"तू निर्भय हो जा, यहाँ तुझे किसी भी प्रकार का भय नहीं रहेगा।"

थोड़ी देर के बाद एक बाज़ आया और कबूतर को राजा की गोद में बैठा हुआ देखकर मानवी भाषा में बोला-"महाराज! इस कबूतर को छोड़ दो। यह मेरा भोजन है।" महाराजा मेघरथ ने बाज को समझाते हुए कहा-"अरे बाज! अब यह कबूतर तुझे नहीं मिलेगा, यह मेरी शरण में है। तूं ऐसा हिंसा का कार्य मत कर। तूं मांस भक्षण करता है, परन्तु इससे तुझे लाखों वर्षों तक नरक का दु:ख भोगना पड़ेगा। तुझे अगर भूख मिटानी हो, तो तुझे दूसरा अच्छा भोजन मिल जाएगा।"

बाज ने निवेदन किया-"हे राजन्! जिस प्रकार यह कबूतर मृत्यु के भय से बचने के लिए आपके पास आया है, वैसे ही मैं भी भूख से पीड़ित होकर आया हूँ। आप कबूतर की रक्षा कर रहे हो, तो मेरी भी रक्षा करो। मुझे भूख से तड़पकर मरने से बचाओ। ये कबूतर मेरा भोजन है। मैं ताजा मांस ही खाता हूँ। उसी से मुझे संतोष होता है। इसलिए आप कबूतर मुझे दे दो।"

यह सुनकर राजा मेघरथ ने कहा-"अगर ऐसा ही है तो मैं तेरी इच्छा पूरी करने के लिए तैयार हूँ। इस कबूतर के मांस जितना, मेरे शरीर का ताजा मांस मैं तुझे देता हूँ। वह खाकर अपनी भूख मिटा लो।"

बाज ने राजा की बात मान ली। राजा ने छुरी और तराजू मँगवाये। तराजू के एक पलड़े में कबूतर को बैठाया और अपने शरीर का मांस काट-काटकर दूसरे पलड़े में रखने लगे। यह देखकर राज्य में और परिवार में हाहाकार मच गया। रानियाँ और राजकुमार आदि आक्रन्दन करने लगे। मंत्री, सामंत और मित्र राजा को ऐसा न करने की विनंती करने लगे।

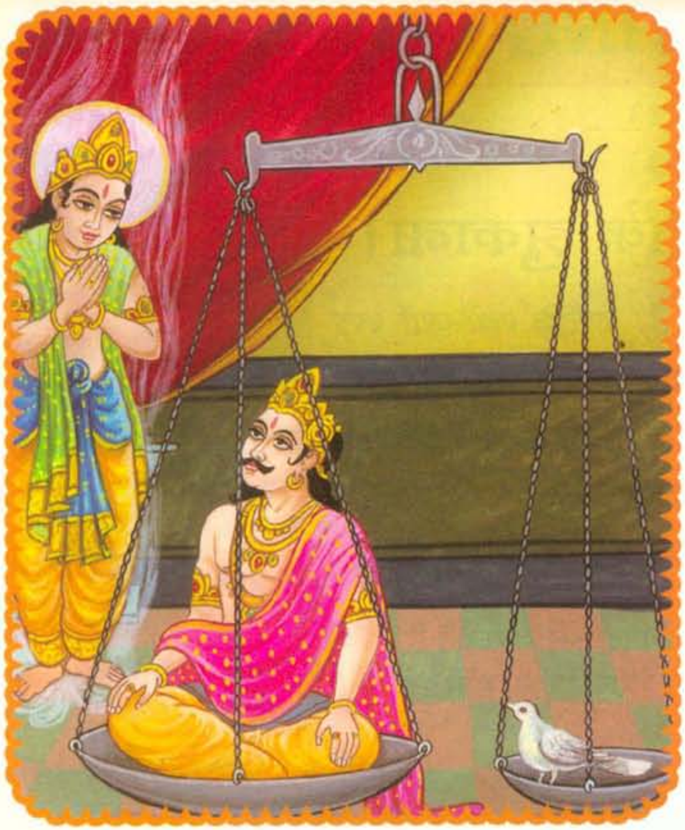

महाराजा मेघरथ अपने हाथ से खुद के शरीर का मांस काटकर पलड़े में रखते जा रहे थे, लेकिन कबूतर का पलड़ा ऊपर उठा ही नहीं।

यह दृश्य देखकर मंत्री बोला–"महाराज! यह धोखा है। कोई मायावी शत्रु षड्यंत्र रचकर आपका जीवन खत्म करने की इच्छा रखता है। अगर ऐसा न होता तो इतना सारा मांस रखने पर भी कबूतर का पलड़ा भारी कैसे रहता?"

मंत्री के इतना बोलते ही एक दिव्य देव प्रकट हुआ और महाराजा की जयजयकार करते हुए बोला–"जय हो, विजय हो! शरणागत के रक्षक राजा मेघरथ की जय हो! आपकी गुणगाथा दूसरे देवलोक में ईशानेन्द्र द्वारा हो रही थी। मैं भी उस देवसभा में था। मुझे आपकी प्रशंसा सुनकर विश्वास नहीं हुआ, इसलिए परीक्षा करने यहाँ आ गया। रास्ते में इन दो पक्षियों को लड़ते देखकर मैं उनमें प्रवेश करके आपके पास आया और आपकी महान अनुकम्पा, शरणागत की सुरक्षा तथा दृढ़ आत्मबल की परीक्षा की। मेरे इस कार्य से आपको कष्ट हुआ, इसलिए मैं आपसे क्षमा माँगता हूँ।" इस प्रकार माफी माँगकर मेघरथ राजा को पहले की तरह स्वस्थ बनाकर वह देव वापस लौट गया।

कुछ समय के बाद तीर्थंकर धनरथ जी राजा मेघरथ के राज्य में पधारे। उनकी वाणी सुनकर वैराग्य पाकर राजा मेघरथ ने भी दीक्षा ली। विशुद्ध संयम और उग्र तप करते-करते उन्होंने एक लाख पूर्व वर्ष तक दीक्षा पाली और तीर्थंकर नाम गौत्र कर्म उपार्जित करके सर्वार्थसिद्ध विमान में देव के रूप में उत्पन्न हुए।

सर्वार्थसिद्ध विमान में से च्यवकर (निकलकर) महाराजा विश्वसेन की रानी अचिरादेवी की कुक्षि में उत्पन्न हुए। उनके गर्भ में आते ही राज्य में फैला हुआ मिरगी का रोग शांत हो गया। इसलिए जन्म होने के बाद उनका नाम '**शान्तिनाथ**' रखा गया। बड़े होकर वे जैनों के 16वें तीर्थंकर श्री शान्तिनाथ स्वामी हुए।

धन्य हो राजा मेघरथ की **अहिंसा भावना** को!

## सरगम

(तर्ज–मेरी लगी प्रभु से प्रीत.......)

*हम पाँच अभिगम धार, आयेंगे स्थानक में,*
*आयेगें भई आयेंगे, धार अभिगम आयेंगे*
*शुद्ध श्रावक का आचार, आयेंगे स्थानक में॥टेर॥*

*1. सचित्त द्रव्य जो साथ है, सेल घड़ी जो हाथ है,*
*हम रख देंगे किनार, आयेंगे स्थानक में... ॥1॥*

*2. अचित्त द्रव्य जो साथ है, पगड़ी छाता हाथ है,*
*रख दरवाजे के बाहर, आयेंगे स्थानक में...॥2॥*

*3. मुख से वचन उच्चार हो, मुँहपत्ति का श्रृंगार हो,*
*है जैनों की पहचान, आयेंगे स्थानक में... ॥3॥*

*4. साधु संत का आना हो, नित दर्शन को जाना हो,*
*सिर झुक जाए तत्काल, आयेंगे स्थानक में... ॥4॥*

*5. गुरु उपदेश जो फरमावे, मन सुनने में लग जावे*
*गुरु विजय का ये संदेश, आयेंगे स्थानक में... ॥5॥*

# Bowing down

## अर्थात् अपना मस्तक झुकाना।

*विनम्रता परिपक्वता की निशानी है, क्योंकि ज्यों-ज्यों फल पकने लगते हैं, वृक्ष की डालियाँ स्वतः झुकनी शुरु हो जाती है। अतः हमें उम्र में, विद्या में, वय में और चारित्र में जो बड़े हैं उनके प्रति नम्र व्यवहार करना चाहिए, यही विनय है। विनय अर्थात् झुकना। विनय से व्यक्ति वैसे ही सबको प्रिय लगता है जैसे सुगंध के कारण चंदन।*

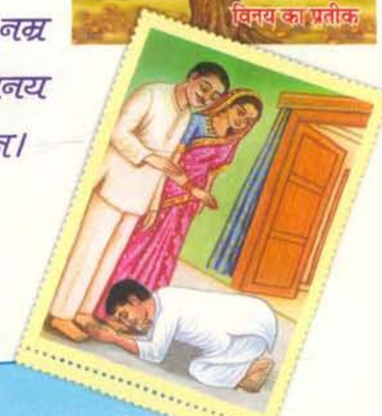

माता-पिता एवं गुरु हमारे परम उपकारी होते हैं क्योंकि माता-पिता हमें जन्म देते हैं, पालन-पोषण करते हैं और गुरु हमारे जीवन में संस्कार भरते हैं। हमारे शरीर में रक्त, माँस एवं मस्तक माता का होता है एवं हड्डी, मज्जा, रोम, नख आदि पिता के होते हैं।

- पेट में रहे हुए बालक की रक्षा करती है माता।
- जन्म होने के पश्चात् बड़ा करती है माता।
- स्वयं गीले में सोकर, संतान को सूखे में सुलाती है माता।
- स्तनपान करवा कर पोषण देती है माता।
- सुख-दु:ख में साथ देती है माता।
- गुरु दर्शन को ले जाती है माता।
- नवकार मंत्र सुनाती (सिखाती) है माता।
- स्वयं अच्छा न पहनकर हमें अच्छा पहनाती है माता।
- पैसे जोड़-जोड़कर हमारी इच्छाएँ पूरी करती है माता।

पिताजी इन सभी कार्यों में सहयोग देते हैं। बहुत परिश्रम से बच्चों के लिये पैसा कमाते हैं एवं सत्य बोलने की शिक्षा देते हैं। शास्त्रों में बताया है कि—1. अपने शरीर के चमड़े के जूते बनाकर पहनाएँ, 2. पूरी जिन्दगी माता-पिता की बन्दगी करें, 3. प्रतिदिन 32 भोजन 33 पकवान खिलाएँ तो भी माता-पिता का ऋण एक भव में नहीं चुकाया जा सकता।

हे माँ!
रिश्तों की दुनिया में तुमसे ही उजियारा है
मेरी हर सांस पर प्यार तुम्हारा है।
मेरे हर ख्याल पर अधिकार तुम्हारा है
मेरी रग-रग पर उपकार तुम्हारा है।
तुम्हारी लोरी की लय पर मीठी नींद लेकर
मैंने हर बार सुनहरी सुबह देखी है।

### स्मरणीय प्रेरक बिन्दु

- *जिस घर में बड़ों की बात कटती है, उस घर की पुण्याई घटती है और जिस घर में बड़ों की बात चलती है, उस घर की पुण्याई फलती है। पुण्य ही हमारी सुख-शांति, सुरक्षा और प्रगति का मूल आधार है।*
- *बड़ों की आज्ञा में मजा ही मजा है। जो बड़ों की आज्ञा का पालन नहीं करते उनके जीवन में सजा ही सजा है।*
- *आज आपने बड़ों की आज्ञा का पालन किया है तो कल आपके बालक भी आपकी आज्ञा का पालन करेंगे।*
- *बड़े हमारे पर शासन करें, इसमें मजेदारी नहीं है। मजेदारी इसमें है कि हम बड़ों के अनुशासन में चलें।*

*दोहा— माँ-बाप की कमी को कोई पाट नहीं सकता। ईश्वर भी उनके आशिषों को काट नहीं सकता।*
*विश्व में किसी भी देवता का स्थान दूजा है, माँ-बाप की सेवा ही सबसे बड़ी पूजा है।*

इसलिए प्रतिदिन माता-पिता के चरणों में झुकना चाहिए।

## माता-पिता एवं गुणीजनों के साथ विनय व्यवहार कैसे करें ?

(1) बड़े और गुणीजनों को मान देना।
(2) उनके चरण स्पर्श करें।
(3) उनका बहुमान करें।
(4) उनकी आज्ञा का पालन करें।
(5) उनको सुख साता पहुँचावें।
(6) उनकी राय स्वीकारें।
(7) उन्हें सम्मान के साथ देखें।
(8) हमेशा उनकी प्रशंसा करें।
(9) उनकी बात काटने से बचें।
(10) उनकी उम्र का सम्मान करें।
(11) उनका नेतृत्व स्वीकार करें।
(12) खाने से पहले उन्हें पूछें।
(13) कहने से पहले उनके काम करें।
(14) उनकी उपस्थिति में अपने फोन को दूर रखो।
(15) उनके साथ बुरा समाचार साझा करने से बचें।
(16) उनके दोस्तों और प्रियजनों से अच्छी तरह से बोलें।
(17) उनके द्वारा किये गए अच्छे काम सदैव याद रखें।
(18) उन्हें घूरें नहीं।
(19) नियमित रूप से उनके पास जायें।
(20) उनके आगे अथवा सामने से न चलें।
(21) उनके साथ ऊँची आवाज में बात न करें।
(22) उनकी सलाह और निर्देश स्वीकारें।
(23) वे क्या कह रहे हैं इस पर ध्यान दें।
(24) उनकी बातचीत में सम्मिलित हों।
(25) उनको अच्छे समाचार जरूर बताएँ।
(26) वे यदि एक ही कहानी दोहरायें तो भी ऐसे सुनें जैसे पहली बार सुन रहे हों।

## विनय से क्या लाभ होता है ?

(1) तीर्थंकर भगवान की आज्ञा का पालन होता है।
(2) अभिमान चला जाता है।
(3) अच्छी सोच बनती है।
(4) वाणी में मिठास आती है।
(5) हृदय विशाल और दयालु बनता है।
(6) दुश्मन भी मित्र बनता है।
(7) विद्या, त्याग, वैराग्य, विवेक आदि गुण आते हैं।
(8) आत्मा का विकास होता है, जिससे हम सुखी बन सकते हैं।

केवली केवलज्ञान प्राप्ति के बाद भी गुरु का विनय करते हैं। जैसे मृगावती ने चंदनबाला का किया

कृष्ण महाराजा भी अपनी माताओं को प्रतिदिन प्रणाम करने जाते थे।

बाहुबली ने जैसे ही झुकने के लिए पैर उठाया, तो केवलज्ञान की प्राप्ति हो गई।

## Birthday

क्या आज आपका Birthday है?

यदि हाँ! तो आपको बताते हैं कि इसे कैसे Celebrate करें, जिससे कई लोगों का भला हो।

गुरु भगवंतों के पास जाकर मंगल पाठ सुनें।

हॉस्पीटल में जाकर रोगियों को दवा, केला आदि देवें।

सभी जीवों को खाना देवें।

पार्टी न करके सबको आमंत्रित करके नवकार मंत्र का जाप एवं प्रार्थना के साथ ज्ञानोपयोगी उपहार देवें।

गरीब बच्चों को स्कूल फीस, ड्रेस, बैग, पैंसिल, पुस्तकें आदि देवें।

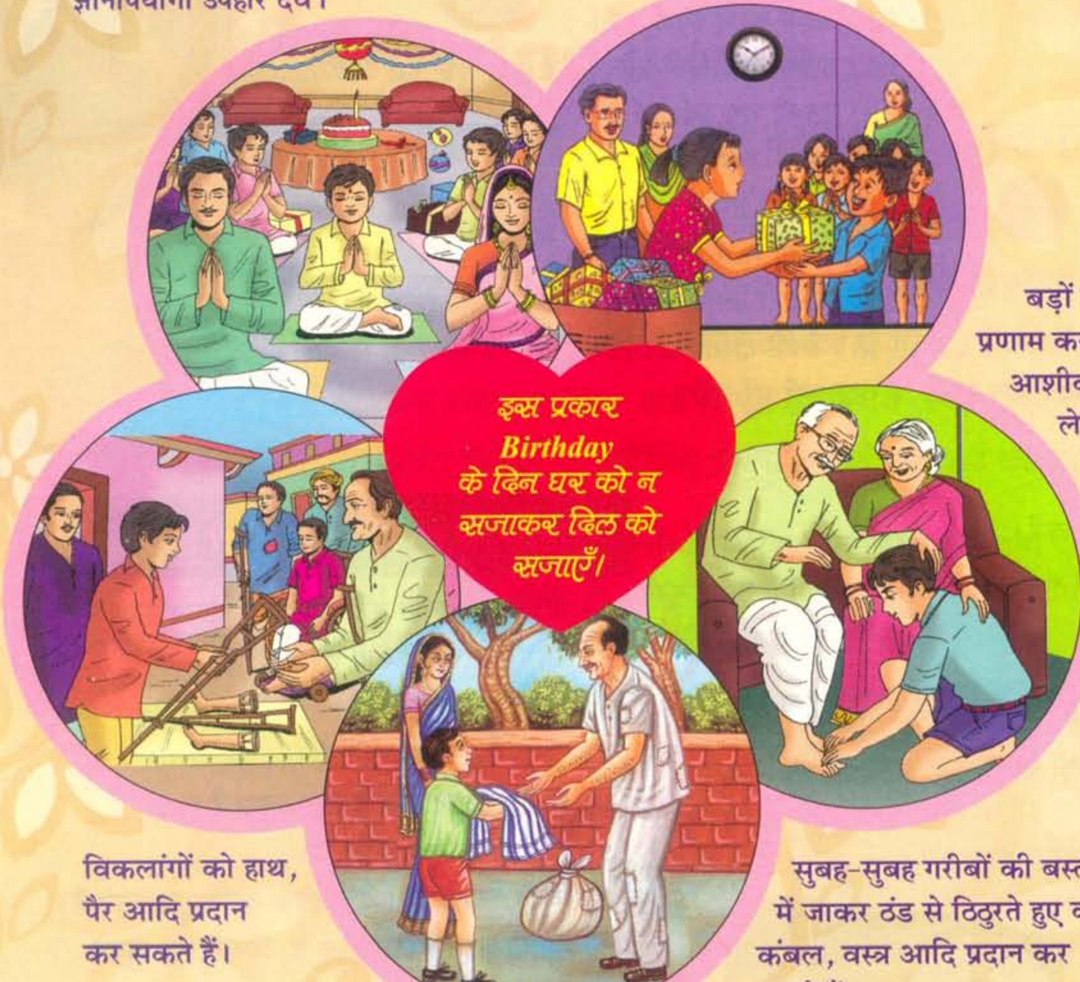


बड़ों को प्रणाम करके आशीर्वाद लेवें।

विकलांगों को हाथ, पैर आदि प्रदान कर सकते हैं।

सुबह-सुबह गरीबों की बस्ती में जाकर ठंड से ठिठुरते हुए को कंबल, वस्त्र आदि प्रदान कर सकते हैं।

## साधना की गहराई

### कम बोलने के नव गुण

1. क्रोध नहीं आवे,
2. लड़ाई न होवे,
3. झूठ बोला नहीं जाता,
4. घमण्ड नहीं आवे,
5. समय खराब नहीं होवे,
6. बुद्धि नहीं घटे,
7. शक्ति नहीं घटे,
8. कर्म नहीं बंधे,
9. नीच गति में नहीं जावे।

### बारह महिनों के नाम

| | |
|---|---|
| 1. चैत्र | 7. आसोज |
| 2. वैसाख | 8. कार्तिक |
| 3. ज्येष्ठ | 9. मिगसर |
| 4. आषाढ़ | 10. पौष |
| 5. श्रावण | 11. माघ |
| 6. भाद्रवा | 12. फाल्गुण |

### अंक ज्ञान

| | | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| हिन्दी में | ० | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ |
| अंग्रेजी में | 0 | 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |

## सरगम

*तर्ज—ओ साथी रे....*

झुक जाना रे! बड़ों के आगे झुक जाना,
रुक जाना रे! बड़ों के आगे रुक जाना,
झुकता वो ज्ञानी है, वरना अभिमानी है, झुकने में क्या शरमाना॥ टेर॥

1. झुकना आये, नमना आये, वो ही जग में प्रेम को पाये,
सबके प्यारे, नयन सितारे, घरवालों को खूब सुहाये,
खुशियाँ मिले तुझकोऽऽऽ, प्रेम मिले तुझको, छोटा सा सूत्र अपनाना॥ 1॥

2. बड़ों का कहना, मानना चाहिए, विनय मूल है, जिनशासन का,
कहते बड़े जो, करना हमें वो, करना न कहना अपने मन का,
इसी में भलाई हैऽऽऽ, छूटे बुराई है, टूटेगा कर्मों का ताना॥ 2॥

3. बड़ों का आशीष, पाने की कोशिष, करते हो तो, कर लेना जी,
संस्कार ऊँचे, अपने घर में, भरते हो तो, भर लेना जी,
झुकने का ये गानाऽऽऽ, रुकने का ये गाना, मुनि जिनेन्द्र नित गाना॥ 3॥

# सेवाभावी नंदीषेण मुनि (विनय)

एक युवक संसार से दु:खी होकर गले में फाँसी का फंदा लगाकर आत्महत्या के लिये तत्पर था। अचानक वहाँ एक मुनिराज आ पहुँचे और उसे रोकते हुए बोले–"अरे भाई! तू यह क्या कर रहा है?" लड़के ने कहा–"मरना चाहता हूँ।" मुनिराज ने पूछा–"क्यों भाई? तुझ पर ऐसा कौन-सा संकट आ पड़ा है कि तूं मरना चाहता है?" लड़का बोला–"**मैं बहुत दु:खी हूँ, बचपन में मेरे माता-पिता की मृत्यु हुई। मैं बदसूरत हूँ, इसलिए मुझसे कोई बोलता नहीं है और सब मुझे तिरस्कार की दृष्टि से देखते हैं। ऐसी स्थिति में मेरे लिए मर जाना ही अच्छा है।**"

मुनिराज ने उस दु:खी बालक को प्रेमपूर्वक समझाया–"**यह सब तो तेरे पूर्वभव के पापों का फल है, इसलिए तूं दु:खी हो रहा है और यह दु:ख तो तुझे भोगना ही पड़ेगा। आत्महत्या करने से तेरे पाप छूटेंगे नहीं, किन्तु ज्यादा बढ़ेंगे। इससे अच्छा तो तूं तेरे बँधे हुए कर्मों को शांति से और हँसते हुए सहन कर, तो तेरा भला होगा।**"

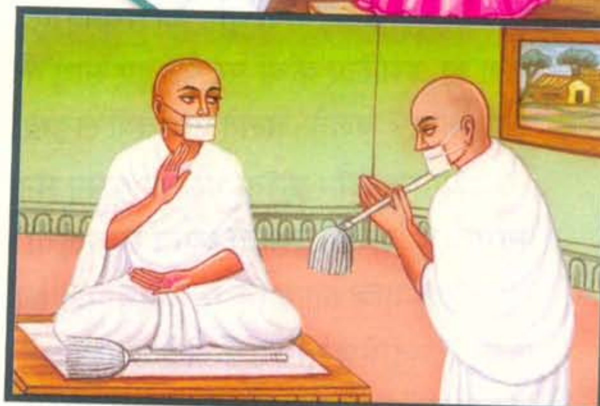

मुनि के ऐसे प्रेम भरे वचनों से युवक को संतोष हुआ और वह मुनि से विनंती करने लगा–"मुझे इस संसार में कुछ भी रस नहीं है, इसलिए मुझे संसार के इन दु:खों से छुटकारा पाने का कोई मार्ग बताइए।"

मुनि ने कहा–"**भाई! इस जगत में कई दु:खी जीव हैं, उनकी प्रेम से सेवा कर, सेवा करने से तूं अपना दु:ख भूल जाएगा। सेवा संसार में रहकर भी की जा सकती है परन्तु छह काय जीवों की सच्ची सेवा साधु बनकर ही की जा सकती है। साधु बनकर सेवा करना यही उत्तम मार्ग है। तेरी भावना हो और शक्ति हो, तो साधु जीवन अपनाकर सेवा कर।**" मुनि के वचनों का उस युवक के ऊपर गहरा असर हुआ। उसने **दीक्षा** अंगीकार करके मुनिव्रत स्वीकार कर लिया।

अब वह **मुनि नंदीषेण** बन गया। सेवा करना उनका परम धर्म बन गया। वृद्ध, अपंग या रोगी कोई भी मुनि हो, तो उनकी सेवा करने के लिए वे आनंद और उमंग से दौड़े चले जाते। धीरे-धीरे उनकी सेवाभावना की कीर्ति चारों ओर फैल गई और **देवलोक के इन्द्र** भी उनकी सेवा की प्रशंसा करने लगे। उनकी प्रशंसा सुनकर दो देवों को, उनकी सेवा की परीक्षा करने का मन हुआ। वो दोनों देव, जहाँ नंदीषेण मुनि थे, उस गाँव के बाहर आये। एक देव वृद्ध साधु और दूसरा रोगी साधु बनकर रहने लगे। एक दिन नंदीषेण मुनि **दो उपवास (छठ्ठ)** का पारणा करने की तैयारी में थे, उसी समय वे वृद्ध साधु वहाँ आये और बोले–"**देखा! बड़ा सेवाभावी साधु बना हुआ है। गाँव के बाहर एक वृद्ध, अशक्त और रोगी मुनि दु:खी हो रहे हैं और यह तो यहाँ अच्छा-अच्छा खाने की तैयारी में लगा है। जा, जाकर उनकी सेवा कर।**"

उनके ये वचन सुनकर नंदीषेण मुनि ने अन्न का एक कण भी मुँह में नहीं डाला। अपना पात्र एक तरफ रख दिया और उन साधु से बोले—"मुझे जल्दी उन रोगी और अशक्त साधु के पास ले चलो, मैं यथाशक्ति उनकी सेवा अवश्य ही करूँगा।"

दोनों साधु गाँव के बाहर गये। नंदीषेण मुनि ने वहाँ पहुँचकर रोगी साधु को नमस्कार किया, तब वो साधु गुस्से से बोला—"तुझे कब से संदेश भेजा है और तूं कितनी देर से आया है? देख ली तेरी सेवाभावना।" नंदीषेण मुनि ने विनयपूर्वक कहा—"मुनिराज माफ करना। मुझे आने में थोड़ी देर हो गई, लेकिन चलो, मैं आपको गाँव के स्थानक में ले जाता हूँ।" बीमार साधु यह सुनकर क्रोधित हो गया—"अरे मूर्ख! मैं जरा भी चल नहीं सकता और तूं मुझे चलकर जाने की बात करता है।"

"प्रभु! मेरी भूल हो गई, आप चिंता न करें। मैं आपको अपने कंधों पर बैठाकर गाँव की ओर ले जाता हूँ।" यह कहकर **मुनि नंदीषेण ने रोगी साधु को अपने कन्धे पर बैठा लिया और गाँव की ओर चल दिये।**

अचानक उन रोगी मुनि का वजन भारी होने लगा। तपस्वी नंदीषेण मुनि का शरीर दो दिन के उपवास के कारण कमजोर हो गया था, इसलिए कंधों पर बैठे हुए साधु को उठाकर वो बहुत मुश्किल से चल पा रहे थे। "अरे! जवान होकर भी तुझे चलना नहीं आता? चलते-चलते ऐसा क्यों लड़खड़ाता है? क्यों झुकता है?" कन्धे पर बैठे साधु ने कठोरता से कहा।

अपमान और क्रूरता भरे ऐसे वचन सुनने के बाद भी नंदीषेण मुनि शांति से बोले—**"मुनिराज! मेरी भूल के लिए मैं क्षमा माँगता हूँ, अब मैं ज्यादा ध्यान से चलूँगा।"**

रोगी मुनि को इतने से संतोष नहीं हुआ। इसलिए उसने कहा—"मुझे मल-मूत्र विसर्जन करना है, इसलिए मुझे नीचे उतार।" नंदीषेण मुनि उन्हें नीचे उतारने लगे, तब तक उन्होंने वहीं गंदगी कर दी। नंदीषेण मुनि के कपड़े मलमूत्र वाले हो गये। उनका शरीर भी गंदा हो गया। चारों ओर बदबू आने लगी। फिर भी नंदीषेण मुनि ने मन से भी रोगी मुनि के प्रति द्वेषभाव नहीं किया। परन्तु मन में सोचने लगे कि **"इन रोगी मुनि को कितना कष्ट होता होगा? इन्हें मैं जल्दी स्थानक में ले जाऊँ और ऐसी सेवा करूँ कि ये जल्दी ठीक और निरोगी हो जायें।"**

थोड़ी देर में चलते-चलते वो स्थानक में पहुँच गए। रोगी मुनि को नीचे उतारकर नंदीषेण मुनि मलमूत्र साफ करने के लिए कमरे में गये। थोड़ी देर के बाद बाहर आकर देखा तो, न तो रोगी मुनि थे न वृद्धमुनि। उनको दो देव नजर आये।

**उन देवों ने कहा—"धन्य हो मुनि नंदीषेण! आपकी सेवा बहुत अद्भुत और अद्वितीय है। आपकी प्रशंसा हमने इन्द्र महाराज के मुँह से सुनी थी, इसलिए हम मुनिवेश धारण करके आपकी परीक्षा लेने आये थे। आप हमारी परीक्षा में सफल हुए हैं।"**

नंदीषेण मुनि ने कहा—"हे देव! इस जगत में वीतराग का धर्म और सेवा धर्म के सिवाय दूसरा क्या महान् कार्य है? मैं तो सिर्फ अपना धर्म, अपना कर्तव्य निभाता हूँ, उसके अलावा कुछ नहीं करता। ऐसा करके मैं किसी के ऊपर कोई उपकार भी नहीं करता। मुझे सेवा के काम से बहुत ही आनंद और संतोष प्राप्त होता है।" इतनी बातें करने के बाद दोनों देव उन्हें वंदन करके, प्रसन्न होकर वापस चले गये।

**धन्य है सेवाभावी मुनि नंदीषेण को...**

**आप भी इस तरह माता-पिता तथा बड़ों की सेवा बहुत प्रेम से करना।**

## CAREFUL का अर्थ क्या है?

**CAREFUL**
**अर्थात् ध्यान से कार्य करना।**

देवाधिदेव प्रभु महावीर का परम सिद्धांत Live & Let Live यानि जीओ और जीने दो। जैसे हम सुख से जीना चाहते हैं, वैसे ही संसार के छोटे-बड़े सभी प्राणी सुख से जीना चाहते हैं। हमारी सजगता व सावधानी जीवों के यतना का कारण बन सकती है। अतः हमारा प्रयास रहे कि हमारी वजह से किसी को शारीरिक, मानसिक तकलीफ न हो। जैसे मान लो आपने रात को लेट खाना खाया। प्लेट आदि बर्तन यों ही रख दिए। लाइट के जीव पतंगे आदि बर्तनों में पड़कर मर गए। चींटियों की लम्बी कतार लग गई। छोटे-छोटे कुंथुए थाली आदि में छा गए। सुबह काम वाली आई। बर्तनों को नल के नीचे रखा, नल चालू किया। सारे पतंगे, चींटियाँ, कुंथुए पानी में बह गए। *बोलो? पाप किसे लगा?*

दरवाजे, खिड़की खोलते समय या बंद करते समय पहले टक-टक नहीं किया और छिपकली आदि प्राणी मर गये, तो..... *बोलो? पाप किसे लगा?*

दैनंदिन जीवन में इस तरह के कई कार्य हैं, जिनमें हमारी थोड़ी-सी असावधानी कितने ही जीवों की प्राणघातक बन जाती है और हमारा पाप बढ़ जाता है।

*अतः पाप से बचने के लिए छोटी-छोटी इन बातों में अपना विवेक जागृत रखें—*

- केले के छिलके सड़क पर न डालें, किसी का भी पैर फिसल सकता है।
- नाखुन काटकर खुले नहीं डालें, क्योंकि यदि किसी पक्षी ने मुँह में ले लिया तो उसके प्राण जा सकते हैं।
- बस की खिड़की में से पानी, पीक (थूक), कचरा आदि विवेकपूर्वक देख कर फैंके।
- बबलगम (Chewgum) को चूसने के बाद पेपर में लपेटकर फैंके जिससे उसमें चींटी आदि जीव चिपक कर मरे नहीं।
- स्नान के पश्चात् Bathroom के सारे सामान व्यवस्थित रखें एवं स्थान सूखा कर दें।
- होटल का खाना स्वास्थ्य एवं सम्पत्ति का नाश करने वाला है, अतः उससे बचें।
- घर में हो या बाहर झूठा नहीं डालें, क्योंकि झूठा डालना पाप है।
- मधुमक्खियों के छत्ते, मकड़ी के जाले, पक्षियों के घोंसले तोड़े नहीं एवं गाय, कुत्ते आदि पर पत्थर न फैंके।
- विद्युत् साधनों का उपयोग पूर्ण सावधानी पूर्वक करें। जैसे हीटर, गीजर, वॉशिंग मशीन, ए.सी. आदि।
- मकान के ऊपर से कचरा नीचे नहीं फैंके किन्तु डस्टबीन में डालें।

- रात को 9.30 बजे के बाद अपने घर के टी.वी. की अथवा किसी भी प्रकार की आवाज बाहर न जाये ताकि पड़ोस में रहने वाले विद्यार्थी, वृद्ध, रोगी आदि को अध्ययन, विश्राम में अंतराय न पड़े।
- बालों को बनाने के बाद टूटे हुए बालों को खुला न फैंके बल्कि कागज में लपेटकर उचित स्थान पर डालें।
- पानी की टैंक कभी खुली नहीं छोड़ें वरना कई छोटे-बड़े प्राणी गिरकर प्राण गँवा सकते हैं।
- दूध, घी, तेल आदि पदार्थ खुला न छोड़ें।
- दाल, चावल, आटा आदि खाद्य पदार्थ पकाने से पहले प्रकाश में लेकर देखें कि कहीं इसमें जीव तो नहीं है।
- टी.वी. देखते हुए, बात करते हुए सब्जी न सुधारें वरना लट आदि जीव भी काटे जा सकते हैं।
- सोने से पूर्व गैस का रेग्युलेटर एवं मकान के दरवाजे अवश्य चैक करें।
- गैस को जलाने से पूर्व बरनॉल को अवश्य देखें, वहाँ कोई जीव तो नहीं है।
- कठिन से कठिन, विकट से विकट परिस्थितियों में भी धैर्य न छोड़ें।
- गीला आटा रात्रि में बासी न रखें। बचा हुआ भोजन मूक प्राणियों के लिए उपयोगी बन सके, ऐसा विवेक बरतें।

- जॉब पर जाने वाली लड़कियाँ पुरुष वर्ग से सावधान रहें। उनसे सम्पर्क, फ्रेंडशिप, हँसी-मजाक या गिफ्ट लेन-देन से अपने को बचाकर रखें।
- घर में स्वच्छता रखें ताकि जीवों की उत्पत्ति न हो। उत्पत्ति होने के बाद D.D.T., tik-20, Hit कॉकरोच, Good Night, All Out आदि कीटनाशक दवाओं के प्रयोग करने से जीव हिंसा का भारी पाप लग सकता है।
- ऊन के कपड़े एवं पुस्तकों में पारे की गोलियाँ रखने से जीवों की उत्पत्ति नहीं होती है।
- रसोई का काम समाप्त होने के बाद बर्नल पर कपड़ा बाँध दें जिससे छोटे-छोटे जीव वहाँ नहीं आ पायेंगे।
- रसोईघर में चूल्हे या गैस के ऊपर लाईट न लगायें।

## एक गहरी नजर इधर....

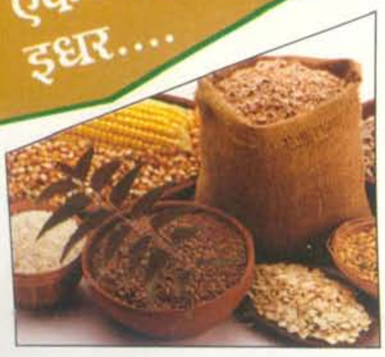

1. **सूखे नीम के पत्ते**—कपड़े व अनाज के बीच रखने से जीवोत्पत्ति नहीं होती।
2. **मोरपंख**—साँप या छिपकली आदि नहीं आते हैं।
3. **घासलेट**—मच्छर, मकोड़े, चींटी आदि चले जाते हैं।
4. **वार्निश**—लकड़ी के फर्नीचर सुरक्षित रहते हैं।
5. **कपूर/पारा की गोली**—ऊनी कपड़े सुरक्षित रहते हैं एवं चूहे से बचाव होता है।
6. **तम्बाकू के सूखे पत्ते**—अलमारी में रखने से कपड़े सुरक्षित रहते हैं।
7. **एरण्डी का तेल**—अनाज सुरक्षित रहता है।

जीवोत्पत्ति से पूर्व सावधानी रखना ही हमारी समझदारी है, यही श्रावक का आचार है।

# अपना दिन ऐसे बिताएँ.....

1. प्रात: ब्रह्ममुहूर्त्त में उठना उत्तम पुरुष का लक्षण है। सूर्योदय से 1 घण्टा 36 मिनिट पूर्व का समय ब्रह्ममुहूर्त कहलाता है। अत: 8 कर्म क्षय करने हेतु 8 नवकार गिनकर अपनी दोनों हथेलियों को मिलाकर अर्द्धचन्द्राकार रेखा में सिद्धशिला की कल्पना करें। आठ अंगुलियों के 24 पोरवों में 24 तीर्थंकरों के भावना से दर्शन करें।

## हाथों को देखते हुए ये उत्तम भाव मन में लाएँ-

*प्रभु! इन हाथों को आज सुपात्रदान का योग मिले। किसी की सेवा करने का अवसर मिले। किसी के आँसू पोंछ सकूँ, परन्तु इन हाथों से मैं किसी को पीड़ा नहीं दूँगा। झूठ लेख नहीं लिखूँगा। किसी की हिंसा नहीं करूँगा। प्रातः जागरण एवं प्रभु स्मरण से तन स्वस्थ, मन प्रसन्न एवं बुद्धि निर्मल बनती है।*

सिद्धशिला पर 24 भगवान की कल्पना

"Early to bed, Early to rise,
It makes the man, healthy, wealthy & wise"

2. इस प्रकार दिन का शुभारम्भ करने के पश्चात् माता-पिता एवं बड़ों को प्रणाम करें।
3. आवश्यक कार्य (स्नान आदि) से निवृत्त होकर गुरु दर्शन करें।
4. नवकारसी के पच्चक्खान पार कर नाश्ता करें।
5. स्कूल के लिए आवश्यक सभी सामग्री व्यवस्थित करके स्कूल में जाए।
6. स्कूल से लौटकर Shoe, Bag, Uniform, Tiffin Box आदि सही स्थान पर रखें।
7. हाथ-मुँह धोकर फिर भोजन के लिए आवश्यक पानी आदि लेकर पूर्व दिशा की ओर मुँह करके आसन पर बैठ कर सूर्यास्त से पूर्व भोजन करें।
8. फिर कुछ समय दादा-दादी, माता-पिता के कार्य में सहयोग, विश्राम और खेल-कूद में बिताएँ।
9. शाम को स्कूल का Home Work तन्मयता से करें।
10. परिवार के सदस्य कुछ समय के लिए एक साथ बैठें एवं आपस में दिन भर की चर्चा वार्ता करें और अगले दिन की रूपरेखा तैयार कर ले।
11. सोने से पहले सामुहिक पारिवारिक प्रार्थना करें।
12. सोते समय अपना मस्तक दक्षिण या पश्चिम दिशा की ओर रखें ताकि सामने उत्तर या पूर्व दिशा रहे। समय 9.30 बजे सोने से पूर्व सात भय दूर करने के लिए 'सात नवकार गिनें' खामेमि सव्वे जीवा का पाठ' बोलें। 84 लाख जीवायोनि से क्षमा याचना करें। तत्पश्चात् सुबह जितने बजे उठना हो, तकिए के ऊपर उतनी बार प्रेम से थपकी देकर उठने का संकल्प करके सो जाएँ।

सूर्यास्त से पूर्व भोजन करना

घर पर गृह कार्य पूरा करना

क्या आप खाते-पीते बेले का फल पाना चाहते हैं?

## हाँ, तो आईए! साधु-संतों को प्रात:कालीन आज्ञा देने से न चूकें!

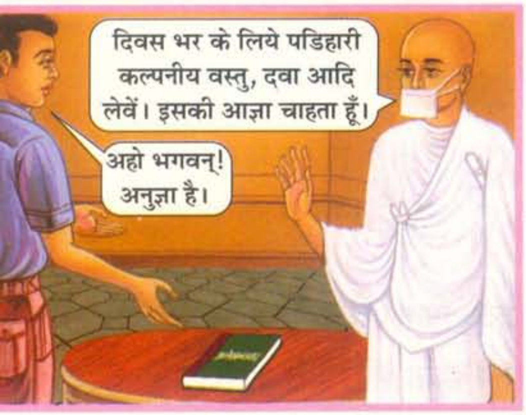


- साधु-साध्वी सूर्यास्त के बाद अपने पास दवा, पेन आदि **पडिहारी वस्तु** नहीं रखते हैं एवं तृण, काष्ठ, कंकर आदि कोई भी चीज गृहस्थ की बिना आज्ञा ग्रहण नहीं करते हैं।
- प्रात:काल गृहस्थ से आज्ञा लेकर ही वे **पडिहारी चीज** ग्रहण करते हैं। अत: सुबह-सुबह अवश्य साधु-संतों के दर्शन कर आज्ञा देने का महान् लाभ लेना चाहिए।
- दिन भर में साधु-साध्वी **ज्ञान-दर्शन-चारित्र की अभिवृद्धि** में जिन-जिन वस्तुओं का उपयोग करते हैं, उन सबमें आज्ञा देने वालों की भागीदारी होती है।
- पूर्वाचार्यों की धारणा है कि आज्ञा देने वालों को **बेले तप** का लाभ सहज ही प्राप्त हो जाता है।

आज्ञा देते समय हमें इस प्रकार बोलना चाहिए-

**अहो भगवन् ! आज दिन भर में कोई भी पडिहारी वस्तु लेवें, उनकी हमारी अनुज्ञा है।**

कथा रूपी विजय पथ

## भगवान अरिष्टनेमि (तीर्थंकर)

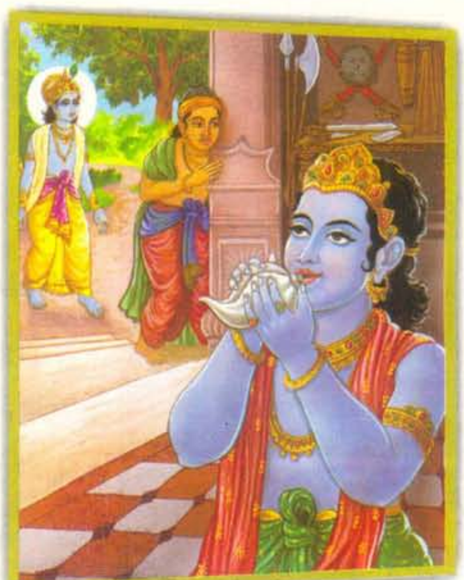

बाईसवें तीर्थंकर श्री नेमिनाथ भगवान शौर्यपुर नगर के राजा समुद्रविजय के महायशस्वी पुत्र थे। उनकी माता का नाम शिवादेवी था।

समुद्रविजय राजा के उनसे छोटे अन्य ९ (नौ) भाई थे, उनमें सबसे छोटे भाई का नाम वसुदेव था। वसुदेव राजा के दो पत्नियाँ थीं। उनमें रोहिणी के पुत्र बलदेव और देवकी के पुत्र श्रीकृष्ण वासुदेव थे। इस तरह श्रीकृष्ण और नेमिनाथ दोनों चचेरे भाई थे।

एक बार नेमिकुमार ने श्रीकृष्ण वासुदेव के पंचजन्य शंख को फूँक दिया। लोग और स्वयं श्रीकृष्ण भी सोच में पड़ गये कि ये शंखनाद किसने किया ? क्योंकि यह शंख श्रीकृष्ण के सिवाय कोई उठा ही नहीं सकता था। परन्तु शंख रक्षक ने समाचार दिया कि ये शंख नेमिकुमार ने बजाया है। नेमिकुमार के लिये तो यह खेल भर था, क्योंकि वे तीर्थंकर थे। नेमिकुमार के बल की इस तरह जगह-जगह प्रशंसा होने लगी। वे जितने बलवान थे, उतने ही सुन्दर भी थे।

युवा नेमिकुमार संसार में वैराग्यभाव से रहते थे। उनके माता-पिता को उनकी शादी करने की बहुत इच्छा थी। श्रीकृष्ण वासुदेव ने शौर्यपुर नगर में ही रहने वाले उग्रसेन राजा की कन्या राजीमती (राजुल) के साथ नेमिकुमार की शादी तय कर दी।

राजीमती अत्यन्त सुंदर, स्त्रियों के सभी शुभ लक्षणों से सम्पन्न, उत्तम दृष्टिवाली, धार्मिक संस्कारों से युक्त कन्या थी।

**शादी के लिए शुभ मुहूर्त** देखा गया और आखिर वह दिन भी आ गया। नेमिकुमार की बारात ने राजा उग्रसेन के नगर में प्रवेश किया। रथ में बैठकर आते हुए नेमिकुमार बहुत सुन्दर लग रहे थे। बारात महल के पास आ पहुँची। राजुल सोलह श्रृंगार सजकर सखियों के साथ बैठी थी।

लग्न मंडप के समीप पहुँचते ही अचानक नेमिकुमार ने बाड़े में बंधे हुए पशुओं और पिंजरों में भरे हुए पक्षियों को देखा। नेमिकुमार ने अपने रथ के सारथी से पूछा—"इन सब पशु-पक्षियों को यहाँ क्यों लाया गया है? सारथी बोला—"मांस भक्षण करने वाले बारातियों के लिए इन्हें यहाँ लाया गया है।" नेमिकुमार ने सोचा—'इतने सारे जीवों की हिंसा मेरी शादी के निमित्त हो रही है, यह तो मेरे लिए परलोक में अहितकर और अकल्याणकारी है। ऐसी शादी से क्या फायदा, जिसमें जीवों की हिंसा हो?' नेमिकुमार ने अपने सारथी से उन सभी पशु-पक्षियों को मुक्त करवाया और उनकी मुक्ति का आनन्द देखते-देखते वे चिन्तन करने लगे—'**मुझे अपनी शक्ति का उपयोग आत्म कल्याण के लिए करना चाहिए। संसार के कार्यों के लिए मेरी शक्ति लगाने से अच्छा दीक्षा लेकर साधना करना, यही परम हितकारी है।**' इस तरह चिंतन करके नेमिकुमार ने सारथी को रथ वापस अपने नगर की ओर मोड़ने को कहा।

अचानक नेमिकुमार का रथ वापस लौटा, तो राजुल और सहेलियाँ सोचने लगी—'यह क्या हुआ?'

तत्काल यह बात चारों ओर फैल गई कि 'नेमिकुमार ने पशु-पक्षियों की पुकार सुनकर उन्हें बंधन मुक्त किया और वे वापस लौट गये। अब वे शादी नहीं करेंगे किन्तु दीक्षा धारण करेंगे।'

यह समाचार सुनते ही राजुल शोक में डूब गई। वह चिन्तन करने लगी—'निश्चय ही मुझे धिक्कार है, क्योंकि नेमिकुमार द्वारा मेरा त्याग किया गया। परन्तु इस भव में अब मुझे दूसरा पति नहीं चाहिए। अब मेरे लिए यही श्रेष्ठ है कि मैं भी उनके पद्चिन्हों पर चलकर दीक्षा ले लूँ।' ऐसा सोचकर वह भी कुँवारी रही और योग्य समय आने पर दीक्षा लेने के लिए तत्पर हुई।

उसके बाद नेमिकुमार ने एक वर्ष तक वर्षीदान दिया, बाद में दीक्षा लेकर जैन साधु बने। फिर द्वारिका नगरी के पास रैवतक (गिरनार) पर्वत पर चले गए। नंगे पैर चलने लगे। गोचरी में जो भी रूखा-सूखा भोजन मिलता, उससे शरीर को भाड़े रूपी ईंधन देते। वे संसार के सभी जीवों को अपनी आत्मा के समान समझते थे। ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए धर्म-ध्यान में लीन रहते थे। **आदर्श साधुचर्या पालते-पालते उन्हें 54 दिन के बाद केवलज्ञान उत्पन्न हुआ।** साधु-साध्वी और श्रावक-श्राविका इस तरह चार तीर्थ की स्थापना करके वे **तीर्थंकर बने।**

**राजुल ने भी उनका मार्ग स्वीकारा और भगवान नेमिनाथ के पास दीक्षा ग्रहण की।** संयम, तप और त्याग के मार्ग पर जीवन जीकर भगवान नेमिनाथ और साध्वी राजीमती ने परम पद मोक्ष को प्राप्त किया। **धन्य है श्री 22वें तीर्थंकर नेमिनाथ भगवान को! धन्य है महासती श्री राजुल को!**

## सरगम

(तर्ज : छुप-छुप खड़े हो....)

*हुआ है प्रभात, अब जगिये जगाइए।*
*उठकर ध्यान प्रभु, वीर का लगाइए॥टेर॥*

**बड़ों को प्रणाम करें, धर्म यह हमारा है,**
**देव और गुरु का ही, हमको सहारा है,**
**जहाँ गुरुदेव हों, वहाँ बढ़ जाइए..... ॥1॥**

**सात भय दूर करे, सात नवकार हैं,**
**आठ कर्म दूर करे, आठ नवकार हैं,**
**शक्ति और बुद्धि को, खूब बढ़ाइए॥2॥**

हाथों में है सिद्धशिला, ध्यान से निहारिए,
चौबीस तीर्थंकरों के, दर्शन पाइए,
मोक्ष में जाने की, भावना जगाइए॥3॥

# FOR ➡ DISCIPLINE अनुशासन

**अनुशासन** का शाब्दिक अर्थ है आज्ञानुसार चलना। किसी की आज्ञा में रहने से स्वतंत्रता भंग नहीं होती अपितु आज्ञा में रहने से व्यक्ति योग्य बनता है। यही कारण है कि गुरुकुल में भी सर्वप्रथम अनुशासन में रहने की कला सिखाई जाती है। अनुशासन से जीवन का निर्माण और व्यवहार की निर्मलता प्रकट होती है। जिस प्रकार जो पत्थर हथौड़े की चोटें खा सकता है, छैनी से तराशे जाने पर बिखरता नहीं है वही प्रतिमा बनता है। ऐसे ही जो अनुशासन में रहता है वही महान् बनता है।

*आज हमारे परिवार टूट रहे हैं, क्योंकि अनुशासन के संस्कार छूट रहे हैं। पहले संयुक्त परिवार में शिक्षा का ज्ञान थोड़ा कम था पर व्यवहारिक ज्ञान का स्तर ऊँचा था। सहनशीलता, उदारता, सम्मान, सहयोग की भावना जैसे गुणों से सम्पन्न थे। अतः इन गुणों की स्थापना करने के लिए हम अनुशासन के महत्व को समझें।*

| | |
|---|---|
| D - | 4 |
| I - | 9 |
| S - | 19 |
| C - | 3 |
| I - | 9 |
| P - | 16 |
| L - | 12 |
| I - | 9 |
| N - | 14 |
| E - | 5 |
| Total-100% | |

## DISCIPLINE – यानि 100%

जैसे English के 26 Alphabet में इनका जोड़ 100 होता है यानि DISCIPLINE में जो रहता है उसके सारे काम 100% अच्छे होते हैं, उसे हर कार्य में सफलता मिलती है। इसलिये अनुशासन में रहना चाहिए।

**Implement good thoughts - अच्छे विचारों को अमल में लायें**

1. अनुशासन से शांति और खुशी मिलती है।
2. अनुशासन में रहने से अपना समय नहीं बिगड़ता है।
3. अनुशासन में रहने से पढ़ने में मजा आता है।
4. अनुशासन में रहने से शोभा बढ़ती है।
5. अनुशासन में रहने से ज्ञानावरणीय कर्म का बंध नहीं होता है।
6. अनुशासन में रहने वाला सबका प्रिय बनता है।
7. अनुशासन को स्वीकार करना जीवन की सबसे बड़ी विजय है। अनुशासन को अस्वीकार करना सबसे बड़ी पराजय है।
8. अनुशासन वह डोर है जिससे बँधी हमारी जीवन पतंग मुक्त आकाश में विचरण करती है।
9. अनुशासन में स्वानुशासन कठिन होता है, मगर उसका आनन्द अतुलनीय होता है।
10. अनुशासन में बँधा बल्व प्रकाश देता है, बाँध उपयोगी बनता है और सूर्य-चन्द्रमा उपकारी बनते हैं।
11. संसार में जितने भी महापुरुष हुए हैं, उन्होंने जो कुछ सीखा है, वो अनुशासन की पाठशाला में रहकर ही सीखा है।
12. शिष्य को ज्ञान में तर्क और अनुशासन पालन में सतर्क रहना चाहिए।
13. जिन शासन मिलना अभी भी सरल है, मगर गुरु का अनुशासन प्रिय लगना कठिन है।

## धन और धर्म में कौन महान् है?

| | | |
|---|---|---|
| 1. | धन की रक्षा करनी पड़ती है। | धर्म हमारी रक्षा करता है। |
| 2. | धन दुर्गति में ले जाता है। | धर्म सद्गति में ले जाता है। |
| 3. | धन के लिए पाप करना पड़ता है। | धर्म में पाप का त्याग होता है। |
| 4. | धन से धर्म नहीं होता। | धर्म आत्मा से होता है। |
| 5. | धन मित्रों को भी दुश्मन बना देता है। | धर्म दुश्मन को भी मित्र बना देता है। |
| 6. | धन भय को उत्पन्न करता है। | धर्म भय को समाप्त करता है। |
| 7. | धन रहते हुए भी व्यक्ति दु:खी है। | धर्म से व्यक्ति दु:ख में भी सुखी है। |
| 8. | धन से संकीर्णता आती है। | धर्म से विशालता आती है। |
| 9. | धन इच्छा को बढ़ाता है। | धर्म इच्छाओं को घटाता है। |
| 10. | धन में लाभ-हानि चलती रहती है। | धर्म से हर समय फायदा ही फायदा है। |
| 11. | धन से कषाय बढ़ती है। | धर्म से कषाय शान्त होती है। |
| 12. | धन चार गति में भटकाता है। | धर्म चार गति को पार कराता है। |
| 13. | धन से रोग बढ़ता है। | धर्म से जीवन स्वस्थ बनता है। |
| 14. | धन अशाश्वत है। | धर्म शाश्वत है। |
| 15. | धन का साथ इसी भव तक है। | धर्म परभव में भी साथ रहता है। |

***धर्म :** जो सच्चे मन से अपनाता है धर्म,*
*उसके निरंतर कटते रहते हैं कर्म।*

- धर्म के बिना हमारा जीवन बिना पानी के मछली की भाँति है।
- धर्म हमारे जीवन को सफल बनाता है।
- धर्म हमें बुराईयों से बचाता है।
- धर्म हमारे भविष्य को उज्ज्वल बनाता है।
- धर्म हमें हर समस्या से बचाता है।
- धर्म करने के लिए धन की नहीं मन की आवश्यकता है।
- धर्म सदा दूसरों को बचाने की शिक्षा देता है।

## सरगम

सर जावे तो जावे, मेरा जैन धर्म नहीं जावे ॥टेर॥
धर्म के खातिर प्यारे बच्चे, माला रोज फिरावे ॥1॥
धर्म के खातिर प्यारे बच्चे, सबको धोक लगावे ॥2॥
धर्म के खातिर प्यारे बच्चे, जमीकंद नहीं खावे ॥3॥
धर्म के खातिर प्यारे बच्चे, जीवों को बचावे ॥4॥
धर्म के खातिर प्यारे बच्चे, रात्रि न खाना खावे ॥5॥
धर्म के खातिर प्यारे बच्चे, जीवों को न सतावे ॥6॥
धर्म के खातिर प्यारे बच्चे, होटल में नहीं जावे ॥7॥
धर्म के खातिर प्यारे बच्चे, ज्ञानशाला में जावे ॥8॥

## धर्म की महिमा

1. धर्म आत्मा से निकला वह अमृत है जिसे पीने वाला जन्म-मरण से छूट जाता है।
2. धर्म आत्मा का कल्पवृक्ष है, जिसकी शीतल छाया में बैठने वाला परम सुख-शान्ति को पाता है।
3. धर्म सचमुच चिन्तामणी है, जिसको पाने वाला जगत् में सब कुछ पा जाता है।
4. धर्म वास्तव में कामधेनु है, जिसका मीठा दूध पीने पर आत्मा सबल व पुष्ट बन जाती है।
5. धर्म आत्मा की अमृत बेल है, जिसका फल खाने वाला अजर-अमर बन जाता है।
6. धर्म जीव का परम मित्र है, जो जीव को दुर्गति में गिरने से बचाता है।
7. धर्म जीवन की एक दिव्य दृष्टि है, जो जीवन को सुन्दर व सदाचारी बनाता है।
8. धर्म ही संसार में परम मंगल है क्योंकि यह स्वर्ग और मोक्ष सुख प्रदाता है।

# संतों से सामान्य भाषा-व्यवहार कैसे करें ?



| क्र. | ऐसा कहना उचित नहीं | ऐसा कहना उचित है |
|---|---|---|
| 1. | हाँ, हाँ ! | तहत्ति ! |
| 2. | आओ आओ ! | पधारो पधारो ! |
| 3. | कहाँ के हो ? | जन्म भूमि कहाँ की है ? |
| 4. | आप कब आये ? | आप कब पधारे ? |
| 5. | आप कहाँ से आये ? | भंते ! आप कहाँ से पधारे हैं ? |
| 6. | आप कब जाओगे ? | आप कब विहार करेंगे ? |
| 7. | आप मेरे घर ठहरे ? | मुझे शय्यातर का लाभ दिराएँ। |
| 8. | आप कितने लोग हैं ? | आप कितने ठाणे हैं ? |
| 9. | आप कहाँ ठहरें हैं ? | आप कहाँ पर विराजमान हैं ? |
| 10. | कुछ चाहिए ? | कुछ खप है। |
| 11. | वापिस कब आओगे ? | पुनः दर्शन देने कब पधारेंगे ? |
| 12. | पहली बार मिला हूँ। | पहली बार दर्शन कर रहा हूँ। |
| 13. | खुशी से मजे में रहें। | सुखे-सुखे विहार करें। |
| 14. | महाराज यहाँ बैठो। | मत्थएण वंदामि यहाँ विराजिए। |
| 15. | हमारा गाँव अच्छा है। | हमारा क्षेत्र साताकारी है। |
| 16. | म. सा. खाना लेने कब जाओगे ? | भंते ! गोचरी लेने कब पधारेंगे ? |
| 17. | म. सा. कोई कामकाज है क्या ? | कोई योग्य सेवा हो तो ? |
| 18. | म. सा. बात कर रहे हैं। | म. सा. चर्चा कर रहे हैं। |
| 19. | म. सा. खाना खाने बैठे हैं। | म. सा. आहार कर रहे हैं। |
| 20. | म. सा. कपड़े धो रहे हैं। | म. सा. वस्त्र प्रक्षालन कर रहे हैं। |
| 21. | म. सा. कपड़ा देख रहे हैं। | म. सा. प्रतिलेखन कर रहे हैं। |
| 22. | म. सा. किताब पढ़ रहे हैं। | म. सा. स्वाध्याय कर रहे हैं। |
| 23. | हम म. सा. के रिश्तेदार हैं। | म. सा. के हम सांसारिक ( भाई आदि ) हैं। |
| 24. | म. सा. मैं भी साथ चल रहा हूँ। | म. सा. मैं भी सेवा में चल रहा हूँ। |
| 25. | म. सा. मेरी बात का जबाव दो। | म. सा. मेरी जिज्ञासा का समाधान कीजिए। |
| 26. | म. सा. आप कहाँ सोयेंगे ? | मत्थएण वंदामि ! आप कहाँ पोढेंगे ? |
| 27. | म. सा. पोछा लगा रहे हैं। | म. सा. सीत ले रहे हैं। |
| 28. | म. सा. पानी फेंकने जा रहे हैं। | म. सा. पानी परठने पधार रहे हैं। |
| 29. | चलो, अब जाता हूँ। | अनुज्ञा गुरुदेव ! अब अवसर देखता हूँ। |
| 30. | आप बहुत जल्दी चलकर आये हैं। | म. सा. आप उग्र विहार करके पधारे हैं। |
| 31. | आपका स्वास्थ्य कैसा है ? | म. सा. आपके सुखसाता है ? |
| 32. | म. सा. रोज सुबह भाषण देते हैं। | म. सा. रोज सुबह व्याख्यान फरमाते हैं। |
| 33. | हमें आशीर्वाद दें। | म. सा. हमें मंगल पाठ सुनाएँ। |
| 34. | हमें याद करते रहना। | म. स. हम पर कृपा दृष्टि रखना। |
| 35. | क्या आपके पास बैठ सकता हूँ ? | क्या मैं आपकी सेवा में बैठ सकता हूँ ? |
| 36. | सॉरी मुझे खेद है। | म. सा. मैं आपको खमाता हूँ। |
| 37. | आपके सम्बन्धी लोग आये हैं। | म. सा. आपके न्यातिले आये हैं। |
| 38. | साथ वाला आदमी कहाँ है ? | म. सा. सेवा में रहने वाला सेवार्थी कहाँ है ? |
| 39. | अमुक व्यक्ति ने आपको याद किया। | अमुक ने आपको वंदना निवेदन की है। |
| 40. | रास्ते में कोई कष्ट तो नहीं हुआ ? | म. सा. विहार में कोई परीषह तो नहीं हुआ ? |

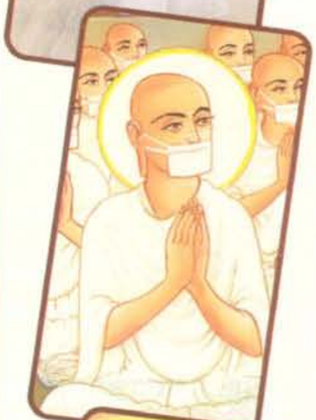

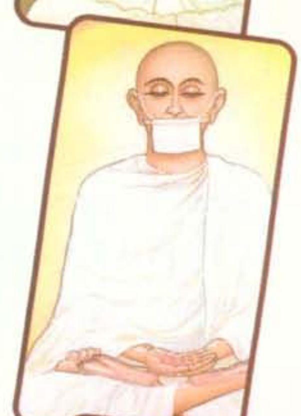

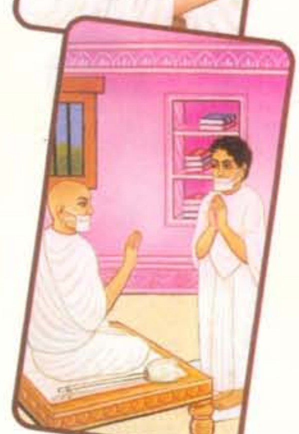

# श्रीपाल - मैनासुन्दरी

प्राचीन समय में अवन्ती (उज्जयनी) में राजा प्रजापाल राज्य करते थे। उनकी दो सुन्दर सुशील कन्याएँ थीं। बड़ी का नाम सुरसुन्दरी छोटी का नाम था मैनासुन्दरी। मैनासुन्दरी बहुत ही सुसंस्कारी, सुशिक्षित और स्वावलम्बी विचार की थी।

एक बार राजा प्रजापाल ने उसकी प्रतिभा और समझदारी पर प्रसन्न होकर कहा—"पुत्री! हम तुम पर बहुत प्रसन्न हैं, जो मन चाहे सो वर माँग ले।" मैनासुन्दरी ने हाथ जोड़कर कहा—"पिताजी! 'वर' या सुख-दु:ख कोई भिक्षा है जो माँगने से मिल जाये? यह तो प्राणी के अपने ही कर्म या भाग्य के अनुसार स्वत: मिलते हैं। फिर मैं एक क्षत्रिय कन्या हूँ, मैंने माँगना कब सीखा है?"

राजा प्रजापाल बड़े क्रोधी और अहंकारी स्वभाव के थे। मैनासुन्दरी की स्वाभिमानपूर्ण बातें उनके अहंकारी हृदय में तीर-सी चुभ गई। मन-ही-मन निश्चय किया—'मैना को अपने भाग्य पर बड़ा घमंड है तो अब इसे सिखा देना है कि सुख-दु:ख देने वाला भाग्य नहीं है, राजा प्रजापाल है।' एक दिन राजा प्रजापाल नगर के बाहर घूमने निकला। सामने ही कुष्ट रोगियों का एक झुण्ड आता दिखाई दिया। एक कुष्टी युवक घोड़े पर बैठा है। अनेक कुष्टी पीछे-पीछे चल रहे हैं। सब "उम्बर राणा" की जय बोलते हुए उधर ही आ रहे हैं। राजा ने उनसे पूछा—"तुम लोग कौन हो? कहाँ से आ रहे हो? यह युवक कौन है?"

तब एक कुष्टी व्यक्ति आगे आया, वह बोलने में चतुर था। राजा को प्रणाम कर बोला—"महाराज! हम सात सौ कुष्टियों का यह दल गाँव-गाँव घूमता हुआ आज यहाँ आपके नगर में आया है। घोड़े पर बैठे ये उम्बर राणा हमारे दल के राजा हैं। कुष्ट रोगी होने के कारण किसी एक गाँव में हमें टिकने नहीं दिया जाता है इसलिए हम गाँव-गाँव भटकते हुए आज यहाँ आये हैं।"

राजा प्रजापाल ने उम्बर राणा के विषय में पूछा तो पता चला कि वह अभी कुँवारा है। राजा ने सोचा—'मैनासुन्दरी को अपने भाग्य पर बड़ा अहंकार है। उम्बर राणा के साथ यदि उसका विवाह कर दिया जाए तो उसे भी पता चल जायेगा कि सुख-दु:ख देने वाला कर्म है या राजा।' मंत्री, पुरोहित, महारानी आदि सभी ने प्रजापाल राजा के इस विचार का विरोध किया, परन्तु राजा तो बड़ा जिद्दी था। उसने उम्बर राणा के साथ, लक्ष्मी-सरस्वती जैसी मैनासुन्दरी का विवाह कर दिया। मैना ने इसे ही अपना भाग्य समझा, न रोई, न क्रोध किया। प्रसन्न मन से माता-पिता से विदा लेकर कुष्टी पति उम्बर राणा के साथ नगर के बाहर एक तम्बू में आ गई।

उम्बर राणा की माता कमलप्रभा ने इतनी सुन्दर सुशील बहू आई देखकर अपने भाग्य को सराहा। दु:ख व निराशा के महासागर को तैरने के लिए जैसे यह सुख और आशा की एक दैवी-नौका ही मिल गई है।

रात के समय उम्बर राणा की माता ने दोनों को अपने पास बिठाकर कहा—"बेटी! तू घबराना मत। हम भी क्षत्रिय हैं। तुम्हारा पति चम्पानगरी का राजकुमार श्रीपाल है। यह जन्म का कोढ़ी नहीं है, किन्तु शत्रु राजा ने हमारा राज्य छीन लिया, इसके पिता महाराज सिंहरथ वीर गति को प्राप्त हो गये। श्रीपाल के चाचा ने हमारे साथ छल किया, तब हम अपनी जान बचाकर भागकर वन में छुप गये।वन मे कुष्टियों का यह दल हमें मिल गया। वर्षों इनके साथ रहने के कारण श्रीपाल को भी कुष्ट हो गया है। किन्तु अब तू आ गई है, हमारा भाग्य जाग गया है। सब आनन्द होगा।

मैनासुन्दरी पति और सास की सेवा के साथ ही सभी सात सौ कुष्टियों की व्यवस्था का भी ध्यान रखती। कुष्टी-दल को तो एक देवी मिल गई। उनकी पीड़ा का जैसे अन्त ही आ गया।

एक दिन नगर के बाहर उद्यान में एक प्रभावशाली आचार्य मुनिचन्द्रसूरी पधारे। मैना सुन्दरी को पता चला तो वह पति उम्बरराणा को साथ लेकर आचार्यश्री के दर्शनार्थ गई। ऐसी सुशील सुन्दर राजकन्या को एक कुष्टी की पत्नी के रूप में देखकर आचार्यश्री ने जिज्ञासा की, तो मैनासुन्दरी ने पूरी कहानी सुना दी। मैनासुन्दरी का धैर्य, दृढ़ता और आत्म-विश्वास देखकर आचार्यश्री ने कहा—"वत्से! तुम णमोकार महामंत्र के नवपद की आराधना करो, सब रोग, शोक, दु:ख दूर हो जायेंगे। निश्चित ही यह अचिन्त्य फल प्रदायी महामंत्र है। इसकी आराधना से तुम्हारे सौभाग्य का सूर्योदय होगा।"

आचार्यश्री के निर्देशानुसार चैत्र सुदी सप्तमी के शुभ दिन से श्रीपाल एवं मैनासुन्दरी ने आयम्बिल तप करके अनन्य भक्ति भाव तथा दृढ़ विश्वास पूर्वक णमोकार महामंत्र के नवपद की साधना/आराधना प्रारम्भ की।

मन, वचन, काया की पवित्रता के साथ श्रीपाल एवं मैनासुन्दरी ने निर्मल भाव पूर्वक नवपद की आराधना सम्पन्न की। श्रीपाल में आश्चर्यजनक परिवर्तन आ गया। उसका कोढ़ मिट गया। शरीर का सौन्दर्य खिल उठा। उसके शरीर में करोड़ योद्धा जैसा अद्‌भुत बल पराक्रम जाग उठा।

णमोकार मंत्र का अभिमंत्रित जल छिड़कने से सभी कुष्टियों का कोढ़ दूर हो गया। श्रीपाल के पुण्यों का प्रबल उदय हुआ, वह जहाँ भी गया, बिना माँगे ही विशाल वैभव, राज्य सम्पदा उसके चरणों में आने लगी। सभी प्रकार की विपत्तियाँ टलती गईं। एक दिन श्रीपाल कोटिभट योद्धा के रूप में भारतवर्ष का महान प्रतापी राज-राजेन्द्र बना। णमोकार महामंत्र दोनों के हृदय में सदा बसा रहता था। णमोकार मंत्र की आराधना के फलस्वरूप उन्हें जीवन में सर्वत्र आनन्द और जय-जयकार प्राप्त हुआ।

# E FOR ➡ EGO अहंकार

## Ego (अहं)– अपने आपको सब कुछ मानकर दूसरों को कुछ नहीं मानना यही अहं है।

अहंकार को Football की उपमा दी जाती है। जब तक Football में हवा भरी रहती है, तब तक लोग उसे ठोकरें मारते रहते हैं। हवा निकलने के पश्चात् उसे कोई भी नहीं छेड़ता। ठीक इसी तरह मन में भी जब तक झूठी शान–शौकत, शौहरत और धन के अहंकार की हवा भरी रहती है, तब तक मन हवा में उड़ता रहता है। ऐसा नशा छा जाता है, जो नशा अफीम के नशे से भी ज्यादा खतरनाक है। भगवान महावीर ने कहा है पत्थर के स्तम्भ के समान जीवन में कभी न झुकने वाला अहंकार आत्मा को नरक की ओर ले जाता है।

### आठ प्रकार के मद (अहंकार)–

**1. जातिमद–** **अपनी जाति का अभिमान करना**–हरिकेशी मुनि के जीव ने पूर्वभव में अपनी जाति का अभिमान किया, तो उन्हें बार–बार चण्डाल जाति में जन्म लेना पड़ा।

**2. कुलमद–** **अपने कुल का अभिमान करना**–ऋषभदेव भगवान के पौत्र मरीचि ने अभिमान किया कि मेरा कुल कितना उच्च है कि जिस कुल में

1. मेरी परदादीजी इस अवसर्पिणी काल के प्रथम मोक्षगामी बने।
2. दादाजी – प्रथम तीर्थंकर बने।
3. पिताजी –प्रथम भरत नामक चक्रवर्ती बने।
4. मैं स्वयं वासुदेव, चक्रवर्ती एवं 24वाँ तीर्थंकर महावीर बनूंगा।

ऐसा घमण्ड करने से उन्हें बार–बार याचक कुल में उत्पन्न होना पड़ा।

**3. बलमद–** **अपनी शक्ति का अभिमान करना**–रावण ने अपनी शक्ति का घमण्ड राम व लक्ष्मण के सामने किया, पर परिणाम यह आया कि पूरी लंका तबाह हुई, वंश का नाश हुआ और स्वयं चौथी नरक में गया।

**4. रूपमद–** **अपनी सुंदरता का अभिमान करना**–तीसरे चक्रवर्ती सनत्कुमार ने रूप का घमण्ड किया तो उनके थूक में 16 महारोगों के कीड़े पैदा हो गए।

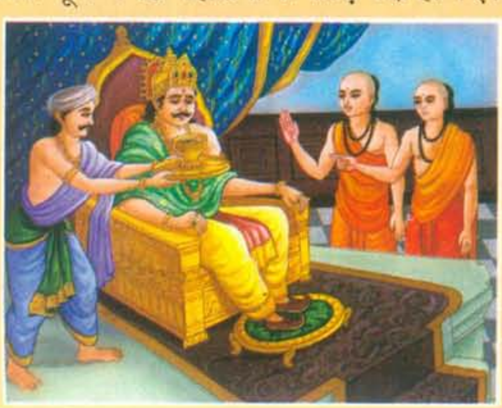

**5. तपमद–** **अपनी तपस्या का अभिमान करना**– कमठ तापस पंचाग्नि तप करता था, लोगों को चमत्कार दिखाता था। पार्श्वनाथ भगवान ने पंचाग्नि तप करते हुए कमठ के सामने ही जलती हुई लकड़ी को अग्नि से बाहर निकाला। उस लकड़ी को फाड़ कर उसमें जिन्दे जलते हुए नाग–नागिन के जोड़े को बचाया। जो आगे चलकर धरणेन्द्र–पद्मावति बने। परंतु कमठ तापस को गुस्सा आया, तप का घमण्ड आया तो, वो काल करके निम्न श्रेणी के देव बने।

**6. लाभमद—** **अपने धन का अभिमान करना**-सिकंदर को अपने धन पर अहं था। उसने कई राजाओं को लूटकर अपना अधिकार बढ़ाया, धन बढ़ाया। पर जब वो मर रहा था, तब धन के ढेर को देखकर हाय-हाय कर रहा था। शास्त्रकार कहते हैं जो धन में आसक्त होकर हाय-हाय करते हुए मरते हैं, वे उस धन के पास सर्प आदि बनकर तिर्यंच गति में पैदा होते हैं।

**7. श्रुतमद—** **अपने ज्ञान का अभिमान करना**-स्थूलिभद्र मुनि 14 पूर्वों का ज्ञान प्राप्त करने आचार्य भद्रबाहु के पास गए। 10 पूर्वों का ज्ञान पूरा हुआ था। उनकी सात बहनें दर्शन करने आईं। स्थूलिभद्र मुनि को अपने ज्ञान का घमंड आया। प्रदर्शन करने के लिये गुफा में शेर का रूप बनाकर बैठ गए। बहनें भयभीत हुई। आचार्य भद्रबाहु को जब पता चला, तो उन्होंने शेष चार पूर्वों की वांचना नहीं दी। श्री संघ के अत्यधिक आग्रह करने पर उन्होंने मात्र मूलसूत्र की वांचनी दी, पर उनका अर्थ नहीं बताया। जिससे स्थूलिभद्र मुनि 14 पूर्वों का पूरा ज्ञान प्राप्त नहीं कर सके। घमण्डी के दिल में ज्ञान वैसे ही नहीं टिकता जैसे फटी जेब में सिक्का नहीं टिकता।

**8. ऐश्वर्यमद—** **अपनी शान-शौकत-शौहरत का अभिमान करना**- दशार्णभद्र राजा को अपने ऐश्वर्य पर मान था। प्रभु महावीर के दर्शन करने के लिये गये तब भारी प्रदर्शन के साथ गये। उनके घमण्ड को चूर करने के लिये प्रथम देवलोक के इन्द्र शकेन्द्र ने उनसे भी अधिक प्रदर्शन —

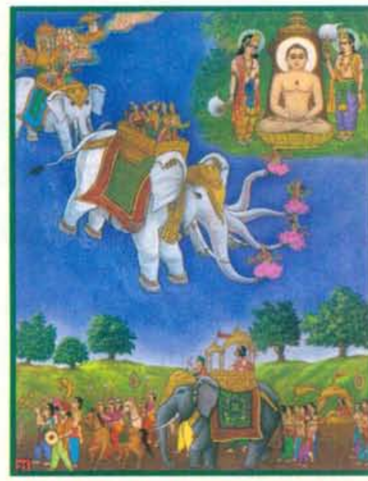

| | |
|---|---|
| एक - एक हाथी के 500 मुँह | एक - एक मुँह में 8-8 दांत |
| एक - एक दांत में 8-8 बावड़ी | एक - एक बावड़ी में बड़े-बड़े कमल |
| एक - एक कमल के 1 लाख पंखुडियाँ | एक - एक पंखुड़ी पर 32-32 नाटक |

ऐसे 64000 हाथी आकाश से उतरते हुए देखकर दशार्णभद्र का मान बर्फ के समान पिघल गया।

बड़ों-बड़ों का मान नहीं रहा। जिनके पास 14 पूर्वों का गहन ज्ञान था। ऐसे ज्ञानी मात्र अहं के कारण नरक-निगोद में चले गए। अत: किसी भी चीज का अहंकार न करके सरल परिणाम रखने चाहिए। आपका ज्ञान बढ़े तो गौतम स्वामी को याद करें। आपके पास धन अधिक हो, तो भरत चक्रवर्ती को याद करें। आप सुंदर हैं, तो तीर्थंकरों के रूप को स्मृति में लें।

## अहं या अर्हं निर्णय करें

***अहंकार के विपरीत परिणाम—*** 1. अहंकार-अभिमान एक कषाय है। 2. 'अर्हम्' नहीं बनने देता। 3. अहंकार करने से गुण चले जाते हैं। 4. अहंकार करने से देव-गुरु-धर्म के प्रति अहोभाव कम हो जाता है। 5. अहंकार में आकर बड़ों का आदर नहीं करने पर विनय गुण का नाश होता है। 6. ज्ञान की वृद्धि नहीं होती है। 7. जीवन में स्वच्छंदता आ जाती है। 8. नीच गौत्र का बंध होता है।

### *अहंकार पर विजय प्राप्त करने के लिए क्या करेंगे?*

1. नम्रता धारण करेंगे। 2. ईर्ष्या नहीं करेंगे। 3. विनय गुण बढ़ायेंगे।

# साधना की गहराई

## पच्चीस अनमोल वचन

ऐसी बातें, जिनसे आपका जीवन सँवर सकता है।
ऐसी शिक्षा, जिनसे आपका जीवन सुधर सकता है।
ऐसे बोल, जिनसे आपके जीवन का मोल बढ़ सकता है।

1. काम करके पछताना नहीं।
2. बात करके पलटना नहीं।
3. पराये घर ज्यादा जाना नहीं।
4. घर का भेद बताना नहीं।
5. अनजाना फल खाना नहीं।
6. काडी/तिनके से कान कुचरना नहीं।
7. पत्थर से ठोकर खाना नहीं।
8. गंदे पानी से नहाना नहीं।
9. गुप्त रोग छुपाना नहीं।
10. विपत्ति में घबराना नहीं।
11. झूठी सौगन्ध खाना नहीं।
12. हाथ किसी को दिखाना नहीं।
13. देखा-देखी करना नहीं।
14. जेठ की दुपहरी में जाना नहीं।
15. आत्मा को पाप से भरना नहीं।
16. परपुरुष के साथ हँसना नहीं।
17. वेषधारी साधु में फँसना नहीं।
18. ओछे लोगों की बस्ती में बसना नहीं।
19. कुत्ते जैसा भौंकना नहीं।
20. बड़ों की अवमानना करना नहीं।
21. बिना गवाह के धन रखना नहीं।
22. अपना इष्ट भूलना नहीं।
23. गली हुई डोरी से झूलना नहीं।
24. रात्रि भोजन करना नहीं।
25. अनछाना पानी पीना नहीं।

कथा रूपी विजय पथ

# भरत-बाहुबली

**भरत** और **बाहुबली** आदिनाथ भगवान के सौ पुत्रों में बड़े पुत्र थे। इन दोनों में भरत बड़े थे और बाहुबली छोटे। दोनों ही महापराक्रमी, बलवान और आनबान के अनूठे योद्धा थे। 'भरत' की माता का नाम 'सुमंगला' तथा 'बाहुबली' की माता का नाम 'सुनंदा' था। वैसे भरत के अट्ठानवे छोटे भाई और भी थे।

भगवान आदिनाथ ने दीक्षा लेते समय अयोध्या का राज्य भरत को सौंपा, बाहुबली को 'बहली' देश का राज्य दिया तथा अन्य पुत्रों को अन्य देशों का। भरत ने आयुधशाला में चक्ररत्न पैदा होने के बाद भरतक्षेत्र के छह खण्डों में अपना आधिपत्य जमाया। इस दिग्विजय में उन्हें 60,000 वर्ष लगे। जब दिग्विजय सम्पन्न करके विनीता नगरी में लौटे तो चारों ओर विजय का अपूर्व उल्लास छा गया। लेकिन तभी पता लगा कि चक्ररत्न आयुधशाला में प्रवेश नहीं कर पा रहा है।

एक भी राजा जब तक चक्रवर्ती की आज्ञा स्वीकार करने से अस्वीकार होता है, तब तक चक्र आयुधशाला में प्रविष्ट नहीं होता, ऐसा नियम है। विचार करने पर भरत का ध्यान अपने निन्यानवे भाईयों पर गया। जब भरत द्वारा अट्ठानवें भाईयों से आदेश मानने के लिए कहा गया, तब वे अनमने-से बन गये। 'पराधीन सपनेहु सुख नाही' मानकर भगवान आदिनाथ के पास दीक्षित हो गये। किन्तु जब 'बाहुबली' से कहलाया गया, तब उनका सोया हुआ स्वाभिमान जाग उठा, युद्ध की चुनौती स्वीकार कर ली।

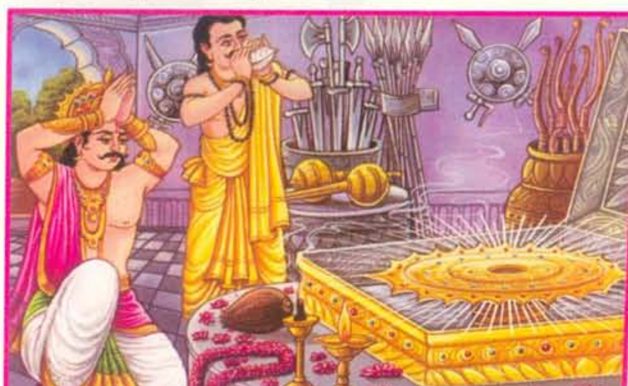

चक्रवर्ती की सेना उनके राज्य पर जा धमकी। वे भी सेना सहित मैदान में आ डटे। रणांगण का दृश्य भयानक दिखने लगा। अपरिमित नरसंहार की संभावना दर्शकों की आँखों में तैरने लगी। बीच-बचाव करने वाले पहले देवलोक के इन्द्र शकेन्द्र ने नरसंहार रोककर दोनों भाईयों को परस्पर युद्ध करके हार-जीत का निर्णय करने की राय दी। ध्वनियुद्ध, दृष्टियुद्ध, मुष्टियुद्ध, बाहुयुद्ध, दण्डयुद्ध-पाँच प्रकार के युद्ध किये गये। सभी युद्धों में बाहुबली विजयी रहे। भरत को बुरी तरह पराजय का मुँह देखना पड़ा।

पराजित व्यक्ति अपना भान भूल बैठता है। भरत ने भी औचित्य-अनौचित्य का विचार किये बिना रुष्ट होकर बाहुबली को मारने के लिए चक्र चला दिया। यह देवताधिष्ठित चक्र अपने भाई का कैसे संहार कर सकता था? चक्र लौट आया, किन्तु इस जघन्यतम प्रयत्न से बाहुबली फुफकार उठे। रोषारुण होकर भरत का संहार करने के लिए मुट्ठी तान ली। बाहुबली की उस तनी हुई मुट्ठी को देखकर देवगण आकाश-मार्ग से बीच में आ खड़े हुए और बाहुबली से कहने लगे-"वीरवर! आपकी इस मुट्ठी का आघात सहन करने वाला यहाँ कौन है? जब आप जैसे प्रामाणिक पुरुष भी अपने बड़ों को यों मारने लगेंगे तब बड़ों का सम्मान कौन करेगा? महाराज भरत ने आपके साथ जो भी व्यवहार किया है, उसे पहुँचे हुए साधक की भाँति क्षमा कीजिए। उसे भूल जाइये।"

देवों के उद्बोधन से बाहुबली का क्रोध शान्त हुआ। उठाई हुई मुट्ठी को वापस क्या करना था? अपने सिर का लुंचन करके साधु बन गये। विजयी बाहुबली को मुनि देखकर भरत पैरों में झुक गये। आयुधशाला में चक्र के न घुसने की अपनी विवशता बताई। क्षमायाचना करके अपने स्थान पर आये और शासन का संचालन करने लगे।

बाहुबली मुनि के मन में आया-'यदि मैं भगवान आदिनाथ के पास जाऊँगा तो, मेरे से पूर्वदीक्षित लघु भाईयों को वन्दना करनी पड़ेगी। साधना व्यक्तिगत होती है।' यही सोचकर वहीं वन में ध्यानस्थ खड़े हो गये। खाना-पीना तो छोड़ा ही, साथ में तन की चंचलता का परित्याग करके प्रस्तर मूर्ति की भाँति अविचल खड़े हो गये। शरीर कृश हो गया। पक्षियों ने वहाँ अपने घोसले बना लिये। बारह महीने व्यतीत हो गये।

भगवान आदिनाथ ने जब यह सब कुछ देखा तब 'ब्राह्मी' और 'सुन्दरी' को वहाँ उपदेश देने भेजा। दोनों भगिनियों ने मृदु स्वर से प्रबुद्ध करते हुए कहा-"बन्धुवर! आप इस अहंकार के गजराज पर सवार हैं। उससे नीचे उतरिये। पर्वत पर चढ़े-चढ़े केवलज्ञान नहीं होगा।"

बाहुबली चौंके। अपनी भूल का भान हुआ। अपने लघु बांधवों के वन्दनार्थ जाने की भावना की। तत्क्षण केवलज्ञान उत्पन्न हो गया। महाराज भरत चक्रवर्ती बनकर बहुत लम्बे समय तक न्याय-नीतिपूर्वक राज्य का संचालन करते रहे। एक दिन वस्त्राभूषणों में सुसज्जित होकर अपने रूप को देखने शीशमहल में गये। अपने वैभव पर, अप्रतिम सौन्दर्य पर फूले नहीं समा रहे थे। इतने में सहसा एक अंगुली की ओर ध्यान गया। अंगुली सुन्दर नहीं लग रही थी। कारण की खोज करने पर ध्यान आया, इसमें अंगूठी पहननी ही भूल गया। तत्क्षण चिन्तन बदला। सोचा, यह सारी शोभा-सुन्दरता बाह्य सामग्री से है। मैं भी कैसा बेभान रहा। बाह्य सामग्री में ही मुग्ध बना रहा। यों चिन्तन करते-करते उस शीशमहल में ही केवलज्ञान प्राप्त कर लिया। देवताओं ने साधु वेश प्रदान किया। उम्र पूर्ण करके निर्वाण प्राप्त किया।

## सरगम

*तर्ज : फूलों का तारों का ....*

*दुनिया में आये तो, पुण्य कमाना है,*
*अहं के भावों को, दिल से हटाना है,*
*जीवन उपवन, सद्गुण से सजाना है...॥टेर॥*

*क्या लाये थे संग में, क्या ले जायेंगे साथ,*
*किसका अहं करते हैं, क्या है अपने हाथ,*
*सरलता-सौम्यता, मन में रखना है॥1॥*

*राम, कृष्ण और महावीर, कैसा चमके उनका नाम,*
*पूरे जग में देखो, सब जपते सुबह-शाम,*
*ऐसा ही काम हमको, अब से करना है॥2॥*

## Forgiveness का अर्थ क्या है?

Forgiveness अर्थात् माफी देना। क्षमा देना।
क्षमा देने से हमारी गिनती दुर्बल में नहीं अपितु वीरों में होती है।
इसलिए कहा गया है–"क्षमा वीरस्य भूषणम्।"

**सीख**–अगर पिंटु चाहता तो वह मदद करने नहीं जाता। लेकिन क्षमा देना ही सच्चा गुण है। क्षमा देने से मोक्ष मिलता है।

जब तक हम किसी को माफी नहीं देते हैं, तब तक हमारे मन में सामने वाले के प्रति क्रोध रहता है–(1) इससे हमारे विवेक और गुणों का नाश होता है। (2) झगड़े और बढ़ जाते हैं। (3) मोहनीय कर्म का बंध होता है। (4) अपने भव बढ़ जाते हैं और मोक्ष से दूर रह जाते हैं।

सहनशील बनने से क्रोध का नाश होता है। क्षमा देने वाला क्रोध करने वाले से महान् होता है। शांति और सुख के लिए हमें अपने अंदर से इस क्रोध को निकालना पड़ेगा। इसके लिये आप माफी को महत्त्व दीजिए। खुद से गलती हो गई तो माफी माँग लीजिए और दूसरे से गलती हो गई तो माफ कर दीजिए। भला, जब सॉरी कहने से प्रेम के पुल बन सकते हैं, तो लम्बे समय तक द्वेष की दीवारों से सर क्यों टकराया जाए?

चलो आज हम आपको एक कहानी सुनाते हैं। दो दोस्त थे–चिंटु और पिंटु। चिंटु बहुत खुश था, क्योंकि उसके पापा उसके लिए Red Colour की Car लाए थे। वह खेल रहा था कि पिंटु आया। खेलते-खेलते पिंटु का पैर Car पर आ जाता है और Car टूट जाती है। चिंटु को गुस्सा आ जाता है। उसके साथ बात करना बंद कर देता है। पिंटु ने बहुत बार Sorry कहा फिर भी चिंटु नहीं माना।

एक बार स्कूल में चिंटु को पिंटु की जरूरत पड़ी लेकिन वह कैसे बोल सकता था? उसे तो पिंटु पर गुस्सा था। लेकिन पिंटु समझ गया और दोस्ती के लिए वह सामने से चिंटु के पास गया और उसकी मदद कर दी। चिंटु रो पड़ा। उसे अपने किये पर पश्चाताप हुआ। उसने पिंटु से माफी माँगी और कहा–कार तो आज है और कल नहीं, लेकिन मुझे तेरे साथ ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिए था। पिंटु ने भी Sorry कहा और तुरन्त माफी दे दी। अब दोनों अच्छे दोस्त बन गए।

## चौरासी लाख जीव योनि का पाठ

सात लाख पृथ्वीकाय, सात लाख अप्काय, सात लाख तेउकाय, सात लाख वायुकाय, दस लाख प्रत्येक वनस्पतिकाय, चौदह लाख साधारण वनस्पति काय, दो लाख बेइन्द्रिय, दो लाख तेइन्द्रिय, दो लाख चउरिन्द्रिय, चार लाख देवता, चार लाख नारकी, चार लाख तिर्यंच पंचेन्द्रिय, चौदह लाख मनुष्य–ऐसे चार गति 24 दण्डक चौरासी लाख जीव योनि में सूक्ष्म-बादर, अपर्याप्त-पर्याप्त जीवों में से किसी जीव को हालते, चालते, उठते, बैठते, सोते, जागते हनन किया हो, कराया हो, करते हुए का अनुमोदन किया हो, छेदा हो, भेदा हो, किलामणा उपजाई हो, तो मन, वचन, काया से अठारह लाख चौबीस हजार एक सौ बीस (18,24,120) प्रकारे जो में देवसियो अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

## क्षमापना का पाठ

**खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमंतु में, मित्ती में सव्वभूएसु, वेरं मज्झं न केणई।**
**एवमहं आलोइयं, निंदियं गरहियं दुगंछियं सम्मं, तिविहेणं पडिक्कंतो, वंदामि जिण चउव्वीसं॥**

**भावार्थ**–मैंने किसी जीव का अपराध किया हो, तो मैं उससे क्षमा चाहता हूँ। सभी प्राणी मुझे क्षमा करें। संसार के प्राणी-मात्र से मेरी मित्रता है, मेरा किसी से वैर-विरोध नहीं है। मैं अपने पापों की आलोचना, निन्दा, गर्हा और जुगुप्सा करता हूँ तथा मन, वचन, काया से उन पापों से निवृत्त होता हुआ चौबीस तीर्थंकरों की वन्दना करता हूँ।

## स्मरण रखने योग्य बातें

- सहज क्षमा कब होती है, जब सामने वाले व्यक्ति को निर्दोष माना जाता है।
- क्रोध की प्रतिक्रिया में किया गया क्रोध उससे भी बड़ा क्रोध है जो अक्षम्य बन जाता है।
- दुर्योधन से निपटने के लिए दुर्योधन बनने की जरूरत नहीं है, सच तो यह है कि अर्जुन बनकर ही दुर्योधन से निपटा जा सकता है।
- छोटी-सी चिनगारी, छोटा-सा छेद, छोटा-सा रजकण और छोटा-सा शब्द भारी विनाश कर सकता है। वैसे ही छोटा-सा क्रोध व्यक्ति को विनाश के गर्त में धकेल सकता है।
- हमसे मिलकर कोई खुश हो या न हो, मगर हमसे मिलकर कोई नाखुश न हो इसका ध्यान सदा रखना चाहिए।

# F FOR ➡ FESTIVAL पर्व-जैनपर्व

भारत की संस्कृति पर्व प्रधान संस्कृति है। सात वार नव त्यौहार। हमारे यहाँ दो प्रकार के पर्व मनाये जाते हैं- लौकिक व लोकोत्तर पर्व।

**लौकिक पर्व—** इन पर्वों में आमोद-प्रमोद, खान-पान, खेल-कूद किए जाते हैं। जैसे होली, दिवाली, रक्षा-बंधन, दशहरा आदि।

**लोकोत्तर पर्व—** इन पर्वों में आत्मशक्ति के लिए महापुरुषों का स्मरण किया जाता है। जैसे- पर्युषण, अक्षय तृतीया, महावीर जयंति आदि।

संवत्सरी पर्व

**पर्युषण पर्व—** पर्युषण पर्व सभी पर्वों का राजा है, इसलिए इसे पर्वाधिराज पर्युषण पर्व कहते हैं। यह अष्ट दिवसीय त्यौहार आठ कर्मों को नष्टकर सिद्ध प्रभु के आठ गुणों को धारण करने का संकेत करता है। इन आठ दिनों में विशेष तप, त्याग, स्वाध्याय, प्रतिक्रमण एवं नवकार मंत्र का जाप किया जाता है। लिलोती, रात्रिभोजन का त्याग और चौविहार के प्रत्याख्यान किये जाते हैं।

श्रीपाल-मैना सुन्दरी द्वारा नवपद की आराधना

**संवत्सरी पर्व—** पर्युषण पर्व का अन्तिम दिन संवत्सरी पर्व कहलाता है। जिसे क्षमा का पर्व कहते हैं। इस दिन आपसी वैर विरोध को भुलाकर एक-दूसरे को क्षमा प्रदान की जाती है। आठ दिन तक अंतगड़ सूत्र के आठों वर्गों का अर्थ सहित वांचन किया जाता है।

**आयंबिल ओली—** आयंबिल ओली साल में दो बार आती है। एक चैत्र महिने में और दूसरी आसोज के महिने में। यह पर्व नव (9) दिन का होता है। इस पर्व में आराधक 9 दिन तक आयंबिल तप करता है। आयंबिल यानि दूध, दही, घी, तेल, मिठाई, लिलोती एवं नमक का सम्पूर्ण त्याग कर दिन में एक बार एक आसन पर बैठकर रुक्ष आहार ग्रहण किया जाता है। श्रीपाल-मैनासुन्दरी का चारित्र पढ़ते हैं एवं नवकार मंत्र के नव (9) पद की विधि सहित आराधना करते हैं।

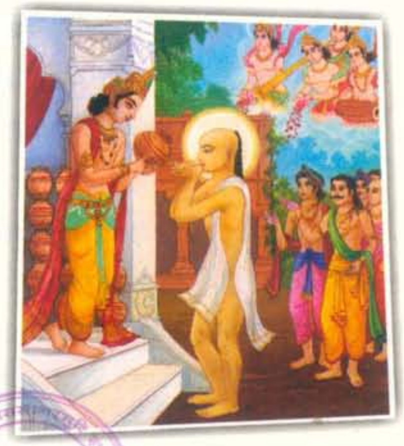

**अक्षय तृतीया—** वैशाख शुक्ला तृतीया के दिन मनाया जाने वाला यह त्यौहार दान की महिमा बताने वाला है। आज के दिन हस्तिनापुर में प्रथम तीर्थंकर

ऋषभदेव भगवान के 410 दिनों का पारणा महाराज श्रेयांसकुमार के हाथों इक्षुरस के द्वारा हुआ। आज भी जो वर्षीतप करते हैं, वे आज के दिन अपने दीर्घ तप का पारणा इक्षुरस से अपने प्रपौत्र के हाथ से करते हैं। क्योंकि श्रेयांसकुमार ऋषभदेव भगवान के संसार पक्षीय प्रपौत्र थे।

लोगस्स का काउसग्ग करते हुए　　णमो णाणस्स की माला करते हुए

**ज्ञान पंचमी—** श्रुतज्ञान आराधना का प्रमुख यह त्यौहार कार्तिक शुक्ला पंचमी के दिन मनाया जाता है। आराधक जीव उपवास करके 'णमो णाणस्स' की 51 माला, 51 लोगस्स का काउसग्ग, 51 णमोत्थुणं एवं 51 वंदना करके ज्ञानावरणीय कर्म का क्षय करते हैं। उनके ज्ञान में भारी अभिवृद्धि होती है।

**मौन एकादशी—** मिगसर शुक्ला एकादशी के दिन 150 तीर्थंकरों के कल्याणक दिवस हुए हैं। इस पवित्र दिन पर भव्य आत्माएँ मौनयुक्त उपवास करके 150 नवकार मंत्र की माला फेरते हैं। तत्पश्चात् प्रति माह शुक्ल पक्ष की ग्यारस के दिन मौन युक्त उपवास करते हैं एवं नवकार मंत्र का जाप करते हैं।

भगवान महावीर जन्मोत्सव

**महावीर जयंति—** चरम तीर्थंकर (अंतिम) शासनपति भ. महावीर स्वामी का जन्म चैत्र सुदी त्रयोदशी के दिन कुंडलपुर में हुआ था। उनके पिता का नाम महाराजा सिद्धार्थ एवं माता का नाम महारानी त्रिशला था। जब प्रभु महावीर का जीव महारानी त्रिशला के गर्भ में आया, उस दिन माता ने 14 उत्तम महास्वप्न देखे। 64 इन्द्रों ने मेरू पर्वत के पंडक वन में उनका जन्म महोत्सव मनाया। तब से लेकर आज तक इस दिन समस्त जैनी भिन्न-भिन्न प्रकार से प्रभु महावीर की भक्ति, यशोगाथा, प्रार्थना, प्रवचन एवं तप-त्याग के साथ उल्लास भावों से भगवान महावीर का जन्मदिन मनाते हैं।

**दीपावली—** यह प्रभु महावीर का निर्वाण दिवस है। कार्तिक कृष्णा अमावस्या को यह पर्व जप-तप, स्वाध्याय के साथ मनाया जाता है।

*तप—चौविहार बेला तप किया जाता है।*

**आराधना**-कार्तिक वद चतुर्दशी व अमावस्या के दिन पोरसी करके प्रार्थना, श्री महावीराय नमः का जाप, 27 वंदना करके 27 लोगस्स का काउसग्ग करें। इस पावन प्रसंग पर वीरस्तुति पुच्छिस्सुणं का भी 27/108 बार पाठ करना श्रेयस्कर है। चतुर्दशी -अमावस्या को **"महावीर स्वामी केवलज्ञानी, गौतम स्वामी चवनाणी।"** की माला फेरें। अमावस्या रात को 12 बजे के बाद **"महावीर स्वामी पहुँचे निर्वाण, गौतम स्वामी ने केवलज्ञान।"** की माला फेरें।

प्रभु महावीर निर्वाण दिवस

**लौकिक पर्व—कुछ पर्व ऐसे हैं जो जैनियों को नहीं मनाने चाहिए,** जैसे—होली। होली खेलने से भयंकर जीव हिंसा का पाप लगता है। होली में आग जलाते हैं, जिससे छोटे-बड़े कई जीव मर जाते हैं, जिनकी हिंसा का पाप अपने को लगता है। धुलेटी में पानी छाँटने, रंग डालने आदि में पानी का भारी अपव्यय होता है। उस रंग को वापस उतारने में भी पानी की भारी खपत होती है। पानी की एक बूँद में असंख्यात जीव होते हैं। इसलिए होली जलाने व खेलने में बहुत दोष है।

# पटाखे मत फोड़ो, फरिश्ते से मन जोड़ो

रसोई में जब अग्नि से खाना बनता है, तभी हमारी भूख शांत होती है और भूख शांत होने पर हमारे मन-मस्तिष्क को बहुत आराम मिलता है। अतः जीवन के लिए उपयोगी इन अग्निकाय के जीवों की दया करनी चाहिए।

## पटाखों से आठ कर्मों का बंध

यह एक प्रकार का प्रदर्शन है, जो आठ कर्मों का बंध कराता है—

**ज्ञानावरणीय** : अक्षर युक्त कागज जलाने से, शोरगुल एवं आवाज से, विद्यार्थी के पढ़ने में बाधा आने से।

**दर्शनावरणीय** : नींद में बाधा, नेत्र में जलन, रोशनी जाने व आँखें चली जाने से, आरम्भ में धर्म मानने से।

**वेदनीय** : रासायनिक जहरीली गैसों से फेफड़ों में खराबी एवं रोगोत्पत्ति होने से तथा कानों में बहरापन आने से।

**मोहनीय** : फटाखे की रोशनी देखने, आवाज सुनकर हर्षित होने से, आवाज से भय पैदा करने से।

**आयुष्य** : निर्दयता से जीव हिंसा होने से, तिर्यंच या नरक आयु का बंध।

**नाम** : जीवों के अंगोपांगों की क्षति होने से।

**गौत्र** : फटाखा छोड़ते हुए तथा छोड़कर अहं करने से।

**अन्तराय** : धन का दुरुपयोग करने से, सुख शांति में विघ्न पहुँचाने से, दया परोपकार के संस्कार नष्ट होने व पुण्य के नाश होने से।

## सत्कार्य एवं सत्संग से आठ कर्मों का क्षय

संत दर्शन से आठ कर्मों का क्षय होता है—

**ज्ञानावरणीय** : संत दर्शन करते हुए सत्ताईस गुणों का चिंतन करते हुए।

**दर्शनावरणीय** : संत दर्शन करते हुए मुख पर क्षमा आदि देखने से।

**वेदनीय** : संत दर्शन करते हुए उनकी सुखसाता की पृच्छा करने से।

**मोहनीय** : संत दर्शन करते हुए संसार को असार समझने से।

**नाम** : संत दर्शन करते हुए संयम के प्रति अहोभाव लाने से।

**गौत्र** : संत दर्शन करते हुए पाँचों अंग झुकाने से।

**अन्तराय** : संत दर्शन करते हुए सुपात्र दान की भावना आने से।

### पटाखे फोड़ने से हानियाँ—

1. जहरीले धुँए से फेफड़ों के रोग
2. जीवों की हिंसा
3. कानों में बहरापन
4. हार्ट-अटैक
5. धन का अपव्यय
6. जोरों के धमाके से मकान की छतें और दीवारें कमजोर
7. प्रदूषण बढ़ता है जो अनेक रोगों का निमित्त
8. भयंकर शोर से पशु-पक्षी भयभीत
9. पुण्य का नाश, पाप कर्म का बंध
10. आग लगने पर लाखों का नुकसान होता है

## FIREWORKS

पैसों में लगती है आग,
पर्यावरण होता खराब।
पटाखे फोड़ना छोड़िए,
संत जीवन से रिश्ता जोड़िये।
जीवनदान-महादान,
सर्वश्रेष्ठ दान अभयदान।

पटाखे फोड़ने की बजाय उन्हीं रुपयों से निर्धन गरीब अभावग्रस्त की मदद करना सच्ची खुशी का इजहार है।

# क्षमाशील चण्डकौशिक सर्प

*डसता है चण्डकौशिक, ध्यान में महावीर। दूध सा खून देखकर, चंड धरे मनधीर॥*

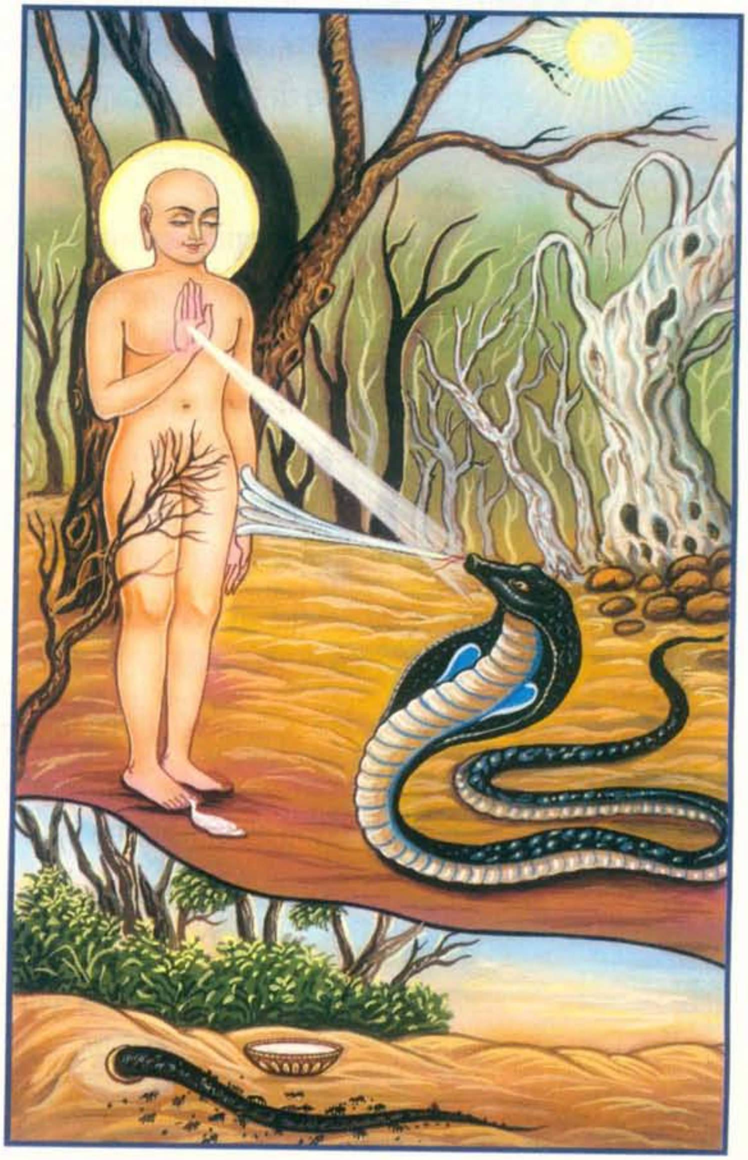

भयंकर जंगल के रास्ते पर महायोगी महावीर चले जा रहे थे। ग्वालों व लकड़हारों ने कहा—प्रभु इस रास्ते से न जाइये। आगे महाभयंकर दृष्टि विष नाग रहता है। प्रभु मौन रहकर अपने लक्ष्य की ओर बढ़े जा रहे थे। अंत में नाग की बांबी पर जाकर ध्यानस्थ खड़े रहे। नागराज ने क्रोधित होकर भ. के पाँव के अँगूठे को डस लिया। डसने पर खून की जगह दूध निकला हुआ देखा। यह देख नाग आश्चर्य में डूब गया।

इधर प्रभु ने कहा—चंड बुज्झ! क्रोध से ही तुम्हारी यह स्थिति बनी है। पूर्व भव में तुम भी मुनि थे। यह सुन चंड को अपने पूर्वभव की स्मृति हुई, तब कृत भूलों पर पश्चात्ताप करने लगा। उसने उसी दिन से प्रतिज्ञा ली कि आज से मैं किसी को नहीं डसूँगा। यह सोच उसने आजीवन अनशन कर लिया। अपने मुँह को बिल में डाल दिया। शेष पूरा शरीर बाहर रखा।

लोगों ने देखा कि अब चण्डकौशिक का उपद्रव शांत हो गया है, तब वे प्रसन्न होकर उसके पास दूध आदि रखते। परन्तु चण्डकौशिक ने कुछ भी ग्रहण नहीं किया। दूध आदि के कारण उसके आस-पास बहुत सी चींटियाँ आ गई और वे चण्डकौशिक के शरीर को काटने लगीं। भारी वेदना होने पर भी चण्डकौशिक ने क्षमा भाव धारण किया। उसने चिंतन किया कि मैंने आज दिन तक बहुत से जीवों को डसा है, उन्हें प्राणों से रहित किया है। अब मुझे अपने पूर्वकृत एवं इस भव में बाँधे हुए कर्मों को समभाव के साथ भोगना है, ताकि मेरी आत्मा कर्मों से हल्की बन सके।

15 दिन तक चण्डकौशिक सर्प इस अवस्था में रहा। अनशन एवं समभाव के साथ वेदना को सहनकर अपूर्व आदर्श उपस्थित किया। यहाँ से काल करके वह आठवें देवलोक का देव बना। आगे मोक्ष में जायेगा।

**सारांश**—मनुष्य के भव में दीक्षा लेकर क्रोध के कारण तिर्यंच गति (सर्प) में उत्पन्न हुआ। परन्तु तिर्यंच गति में क्षमा भाव धारण करके देव बना एवं आगे मोक्ष में जायेगा।

## मूल

**मूल**—जिससे वस्तु की तथा गुण या दोष की उत्पत्ति हो उसे मूल कहते हैं, मूल ही विकसित होकर फल बनता है।

1. सभी गुणों का मूल — विनय
2. सभी रसों का मूल — पानी
3. सभी पापों का मूल — लोभ
4. सभी धर्मों का मूल — दया
5. सभी कलह का मूल — हँसी
6. सभी रोगों का मूल — अजीर्ण
7. सभी के मरण का मूल — शरीर
8. सभी बन्धनों का मूल — स्नेह

## नहीं

1. क्रोध के समान — विष नहीं
2. क्षमा के समान — अमृत नहीं
3. पाप के समान — वैरी नहीं
4. धर्म के समान — मित्र नहीं
5. कुशील के समान — भय नहीं
6. शील के समान — शरण भूत नहीं
7. लोभ के समान — दु:ख नहीं
8. संतोष के समान — सुख नहीं

## शृंगार

1. शरीर का शृंगार — शील
2. शील का शृंगार — तप
3. तप का शृंगार — क्षमा
4. क्षमा का शृंगार — ज्ञान
5. ज्ञान का शृंगार — मौन
6. मौन का शृंगार — शुभ ध्यान
7. शुभ ध्यान का शृंगार — संवर
8. संवर का शृंगार — निर्जरा
9. निर्जरा का शृंगार — केवलज्ञान
10. केवलज्ञान का शृंगार — अक्रिया
11. अक्रिया का शृंगार — मोक्ष
12. मोक्ष का शृंगार — अव्याबाध सुख

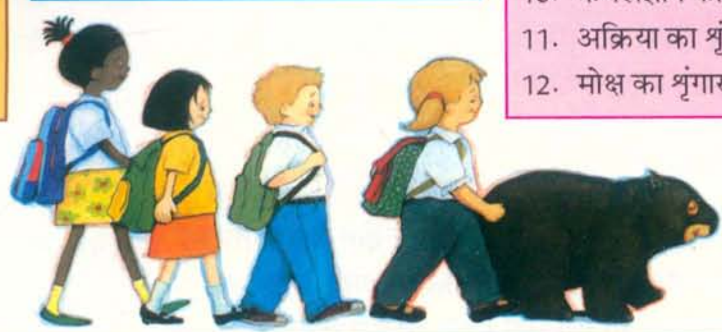

## सरगम

(तर्ज—माँ सुनाओ मुझे वो.....)

ये क्षमा पर्व कैसा सुहाना, प्रेम-पुष्पों से दिल को सजाना,
मन की वीणा के तार बजाओ, प्रेम संगीत सबको सुनाओ,
अपने घर से ही कदम बढ़ाओ..... ॥टेर॥

जब कदम को रखा था धरा पर, एक वस्त्र भी न था बदन पर,
सारा संसार से ही लिया है, कितना एहसान हम पर किया है,
भारी उपकार सबने किया है..... ॥1॥

क्यों दुखाते हैं दिल हम किसी का, क्यों जलाते जिगर हम किसी का,
कितने अपराध हमने किए हैं, कितने अपमान हमने किए हैं,
पाप का भार बाँध लिये है..... ॥2॥

खैर अब भी संभल जाओ मित्रों, प्रेम गंगा में नहालो ए मित्रों,
भाई-भाई गले मिल जाओ, प्रेम गंगा में खुलकर नहाओ,
जीने का सच्चा आनन्द पाओ..... ॥3॥

धन धरा का धरा पे रह जाए, आने वाला भी आकर के जाए,
बहुत छोटी सफर है हमारी, क्यों बढ़ाए जहर की बीमारी,
कर लें जाने की अच्छी तैयारी..... ॥4॥

पाँच
महाव्रतों
के पालक
पंचेन्द्रिय
विजेता
गुरु

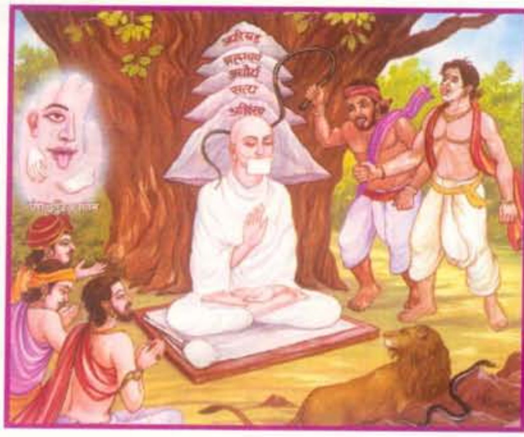

# गुरु का स्वरूप

गुरु अर्थात् जो अज्ञान रूपी अंधकार का नाश करे। जिस तरह छाता बारिश तो नहीं रोक सकता, किन्तु बारिश में खड़े रहने का साहस अवश्य देता है। ठीक इसी प्रकार धर्म गुरु हमारे दुःखों को तो नहीं रोक सकते किन्तु सहन करने का साहस जरूर देते हैं।

हमारे जीवन में जो हमें लौकिक शिक्षा देते हैं, उन्हें हम शिक्षक कहते हैं। लेकिन जो हमें मुक्ति का सही मार्ग दिखाते हैं, उन्हें हम गुरु कहते हैं।

1. आचार्यजी, उपाध्यायजी और पू. साधु-साध्वीजी हमारे धर्मगुरु हैं।
2. वे पाँच समिति और तीन गुप्ति का पालन करते हैं।
3. वे पंच महाव्रत का पालन करते हैं—अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह।
4. पू. साधु-साध्वीजी के समूह के मुखिया को आचार्य कहते हैं। ये संघ के नायक होते हैं। उनके 36 गुण होते हैं।
5. जो खुद आगम पढ़ते हैं, दूसरों को पढ़ाते हैं, उन्हें उपाध्याय कहते हैं। उनके 25 गुण हैं।
6. पू. साधु-साध्वीजी, जो खुद सर्वथा हिंसा के त्यागी होते हैं इसलिए मन-वचन-काया के तीनों योगों से स्वयं हिंसा करते नहीं, दूसरों से करवाते नहीं और अनुमोदन भी देते नहीं। इस तरह 9 कोटि से वे झूठ, चोरी, अब्रह्मचर्य एवं परिग्रह के त्यागी होते हैं।
7. वे हमेशा मुख पर मुँहपत्ति बाँधते हैं। हाथ में जीव रक्षा के लिए रजोहरण रखते हैं।
8. वे खुद रंगीन वस्त्र नहीं पहनते और पास में भी नहीं रखते हैं।
9. उनके पहने ऊपरी वस्त्र को चादर कहते हैं। नीचे पहनने के वस्त्र को चोलपट्टा कहते हैं।
10. वे किसी को मकान, उपाश्रय आदि बनाने का उपदेश नहीं देते। वे खुद के लिए बनाए मकान में नहीं रहते।
11. वे सचित्त पृथ्वी, पानी, अग्नि, वनस्पति का स्पर्श नहीं करते।
12. वे कच्चा पानी नहीं पीते और कच्ची सब्जी नहीं खाते।
13. जब तक बारिश आती है तब तक आहार-पानी लेने के लिए स्थानक (उपाश्रय) के बाहर भी नहीं निकलते।
14. वे चातुर्मास के चार महीने विहार न करके एक स्थान में रहते हैं।
15. वे खुद के पास एक भी पैसा नहीं रखते हैं।
16. वे कुछ खरीदते नहीं और किसी को कहते भी नहीं हैं।

(1) सुगुरु स्वयं किसी की हिंसा नहीं करते, झूठ नहीं बोलते, चोरी नहीं करते, कोई चीज इकट्ठी नहीं करते और अच्छे आचार का पालन करते हैं। वे जो स्वयं करते हैं, वैसा ही करने का हमको उपदेश देते हैं।

(2) सुगुरु हमको सच्चे धर्म की शिक्षा देते हैं।

(3) यदि हम कोई गलत काम करने का प्रयत्न करते हैं, तो वे हमको समझाते हैं।

(4) सुगुरु ही हमको अरिहंत और सिद्ध की जानकारी कराते हैं

जिंदगी की खुशहाली के लिये गुरु हमें 3 सूत्र प्रदान करते हैं-

**Just 3 keys to Enjoy Life :**

**CTRL+ALT+DEL**

1. **Control yourself**
2. **Look for Alternative solutions**
3. **Delete the situation which gives you tension...!!**

17. वे किसी भी श्रावक या परिवारजनों पर ममत्व भाव नहीं रखते।
18. लाईट, पंखे आदि का उपयोग नहीं करते और कराते भी नहीं हैं।
19. चप्पल नहीं पहनते।
20. वाहन, शौचालय आदि का उपयोग नहीं करते।
21. सिर के बाल हाथ से खींचकर निकालते हैं, जिसे लोच कहते हैं।

साधु की तरह साध्वी भी इन सभी नियमों का पालन करती हैं और वो भी गुरु की श्रेणी में आती हैं।

**ऐसे महान् हैं हमारे गुरु भगवंत!**

ऐसे अनेक कठोर नियमों का पालन सभी नहीं कर सकते। इसीलिए जैन साधुओं की संख्या बहुत कम है।

हमें हमेशा त्यागी साधुओं को वंदन करना, उनके पवित्र मुख से धर्म का उपदेश सुनना एवं उनकी सेवा भक्ति करनी, जिससे सच्चे ज्ञान की प्राप्ति होगी। हमारे गुरु जैन संत कम से कम लेते हैं, अधिक से अधिक ज्ञान देते हैं और श्रेष्ठ से श्रेष्ठ जीवन जीते हैं।

## G FOR GYAN KI AASHATANA ज्ञान की आशातना

हमें ज्ञान चढ़ता न हो, तो उसका कारण हमारे द्वारा ही पूर्व भव में बाँधा हुआ ज्ञानावरणीय कर्म ही है। अब उस कर्मबंधन से बचने के लिये और ज्ञान हमें चढ़े, हमारा पढ़ा हुआ हमें याद रहे उसके लिए निम्नलिखित ज्ञान की आशातना से बचें–

***(अ) ज्ञान की आशातना–*** धार्मिक सूत्र–ये ज्ञान है। धार्मिक ज्ञान पढ़ने के प्रति अरुचि या नापसंदगी बताना, पढ़ने में प्रमाद करना, उकताहट बताना, पढ़ा हुआ याद रखने का प्रयत्न न करना, पढ़ने वाले को बाधा पहुँचाना, ये भी ज्ञान की आशातनाएँ हैं, अनादर है।

***(आ) ज्ञान के साधनों की आशातना–*** ज्ञान के उपयोगी साधन जैसे–पुस्तक, ठवणी, नवकारवाली, पेन, पेंसिल, स्केल और रबर आदि को थूक, पसीना लगाने से, अपने शरीर का मैल लगाने से, उन पर बैठने से, उन्हें पाँवों तले रौंदने से, लात मारने से, उन्हें साथ में रखकर खाने-पीने से, लघुशंका-दीर्घशंका (पेशाब-संडास) करने से, उन्हें तोड़ने-फोड़ने से ज्ञान की आशातना होती है।

स्कूल से आने के पश्चात् पुस्तक का थैला, बैग चाहे जहाँ-तहाँ फैंके नहीं, न ही लात मारें, बल्कि धीरे से अच्छे ढंग से योग्य स्थान पर रखें।

***(इ) ज्ञानी की आशातना–*** ज्ञान व ज्ञान के साधन की तरह ज्ञानी व्यक्ति की भी आशातना न की जाए। जैसे स्कूल के सर या मेडम हों, गुरु भगवंत हों, अपने विद्या गुरु हों, उनका विनय-सम्मान किया जाए, अनादर-तिरस्कार या निंदा न करें, उनके सामने न बोलें, उनकी हँसी-मजाक न करें। दुष्ट आचरण करने से ज्ञानी व्यक्ति की आशातना का पाप लगता है।

***(ई) ज्ञान की आशातना से हानि–*** जो लोग ज्ञान की आशातना स्वयं करते हैं, करवाते हैं, वे आगामी भवों (जन्म) में अंधे-बहरे, गूँगे, तुतलाने वाले, पंगु, मूर्ख, मुँह के रोग वाले, कुष्ट रोग वाले और पराधीन बनते हैं। इतना ही नहीं, बल्कि बुद्धि भी प्राप्त नहीं होती, शरीर अपंग, त्रुटियुक्त मिलता है, ऐसा व्यक्ति जहाँ भी जाता है, वहाँ तिरस्कार प्राप्त करता है, दिन भर परिश्रम करने पर भी उसे पेट भरने जितना भोजन नहीं मिलता।

यदि आपको जन्म-जन्मांतर में विद्वान, बुद्धिशाली, चतुर बनना है, सम्यग्ज्ञान का फल प्राप्त करना है और परीक्षा में उत्तीर्ण होना है, तो ज्ञान की आशातना से सदैव दूर ही रहें।

## आगम क्या हैं ?

ज्ञान और विज्ञान का, न्याय और नीति का, आचार और विचार का, धर्म और दर्शन का, अध्यात्म और अनुभव का, अनुपम और अक्षय कोश आगम है। ऐसे आगमों के प्रति सदैव आस्था का भाव रखना चाहिए।

## सावधानियाँ

* किताब में मुँहपत्ती न रखें।
* किताब को जमीन पर रखकर न पढ़ें।
* किताब के पन्ने न मोड़ें।
* किताब को तेल-अग्नि से दूर रखें।
* किताब की आशातना से बचें।

Book

## अध्ययन की उत्तम विधि

1. पुस्तक खोलने से पूर्व एक नवकार मंत्र।
2. निर्धारित अध्याय का प्रथम पेज एकाग्रता से पढ़ें।
3. कुछ समय के लिए आँखें बन्द कर चिंतन करें कि मैंने क्या पढ़ा।
4. स्मृति पटल पर हलका दबाव देकर पूरा पेज ध्यान में लेवें।
5. यदि थोड़ा विषय छूटे तो पुनः एक बार पढ़ें।
6. एक पेज या एक विषय पूर्ण होने के बाद ही अगले पेज पर जावें।
7. अध्याय पूर्ण होने पर पूरे विषय को एक साथ स्मृति में लेवें।
8. मुख्य बिन्दु अपनी नोट बुक में लिखें।

गुरु व ज्ञान का विनय करते हुए इस क्रम से यदि अध्ययन किया जाता है, तो उसके सुपरिणाम निश्चित आते हैं।

प्रयास एवं पुरुषार्थ के पश्चात् भी परिणाम संतोषजनक न हो, तो भी गलत कदम न बढ़ावें, धैर्य रखें, मन में हीन भावना या कमजोरी न लावें किन्तु अपना पुरुषार्थ बढ़ाते जायें। पुरुषार्थ का फल मीठा होता है।

# G FOR GOCHARI गोचरी

*साधु-साध्वी जी अपने जीवन निर्वाह के लिए शुद्ध आहार-पानी ग्रहण करते है, उसे गोचरी कहते हैं। पंच महाव्रतधारी साधु-साध्वियों को श्रावक निर्दोष आहार-पानी बहरावें, उसे सुपात्र दान कहते हैं। सुपात्र दान देने से कर्मों की महान् निर्जरा होती है। सुपात्र दान के लिये निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक है—*

1. असूझता व्यक्ति दरवाजा न खोले यानि कच्चा पानी, हरी सब्जी या Electronics घड़ी, मोबाइल आदि से संयुक्त हो, तो दरवाजा भी नहीं खोलना, बहराने के लिए भी आगे नहीं आना। घंटी नहीं बजाना, फूँक नहीं मारना, चुटकी-ताली नहीं बजाना।
2. सात-आठ कदम सामने लेने जावे। सिर झुकाकर "मत्थएण वंदामि" बोले।
3. महाराज साहब को देखकर लाईट-पंखा, टी.वी. आदि को ऑन-ऑफ न करें, जैसे हैं वैसे ही रहने देवें।
4. कच्चा पानी, हरी वनस्पति, ऊग सके ऐसे बीज जैसे राई, सरसों, धनिया, कच्चा जीरा, कच्चा नमक आदि पदार्थों को तथा कच्चा सलाद, अंकुरित धान्य, फ्रिज, अग्नि से स्पर्श किये हुए पदार्थों को बहराने के लिये नहीं उठाएँ।
5. आहार-पानी के बाद औषध-भेषज, वस्त्र, पात्र अन्य कोई सेवाकार्य हो, तो पूछें। स्थानक में, गोचरी के लिए मेरे घर चलो ऐसा न कहें।
6. अहो भाव पूर्वक बहरायें, मन में प्रसन्नता के भाव रखें तथा बोलें—बड़ी कृपा की, बारम्बार हमें सेवा का मौका प्रदान करें।

ऐसे स्थान पर साधु भगवंतों को गोचरी लेना नहीं कल्पता

पदार्थ शुद्धि, पात्र शुद्धि और पश्चात् शुद्धि का ध्यान रखना विवेक है।

7. आस-पास के घर बतावें एवं गली तक पहुँचाने जावें। बहराते हुए अन्नादि से हाथ भर जाये, तो कच्चे पानी से नहीं धोना।
8. गोचरी में यतना रखना या बैठकर बहराना।
9. आहार पानी बहराते हुए घुटने के ऊपर से गिर जावे तो घर असूझता हो जाता है।
10. निर्दोष आहार बहराना चाहिए। साधु-साध्वियों के निमित्त आहार-पानी नहीं बनाना चाहिए।

- ऋषभदेव व महावीर ने पूर्वभवों में सुपात्र दान देकर धर्म का मूल समकित प्राप्त किया एवं कालांतर में तीर्थंकर बने।
- शालिभद्र ने पूर्वभव में तपस्वी संत को खीर बहराई एवं अतुल वैभव के मालिक बने।
- नेम-राजुल ने पूर्वभव में प्रासुक जल संतों को बहराया एवं महान् लाभ तीर्थंकर गौत्र बंध को प्राप्त किया।

## साधना की गहराई — श्रुत स्तुति

**जो जन श्रद्धा भाव से, करे श्रुत का ज्ञान। ज्ञानावरणीय कर्म टले, प्राप्त करे सद्ज्ञान।**
**तेरा ज्ञान अनंत है, मुझे ज्ञान की प्यास। केवलज्ञानी मैं बनूँ, यही है अंतिम आस॥**

### ज्ञान सीखने से पहले बोलने का पाठ

**क्या आप विनयवान बनना चाहते हो ? हाँ ! तो ज्ञान सीखने से पहले ज्ञानदाता का विनय अवश्य करें। कैसे ? ऐसे.......**

अहो, पूज्य गुरुदेवजी महाराज साहब! आपके पास ज्ञान-ध्यान सीखने की आज्ञा है। आपकी कृपा से हमारा ज्ञान बढ़े, ध्यान बढ़े, धर्म का प्रेम बढ़े, धर्म की दृढ़ता बढ़े और हमारी आत्मा का कल्याण हो। इसी प्रकार जल्दी से जल्दी दीक्षा लेकर, छः काय के जीवों की दया पालकर, जल्दी से जल्दी मोक्ष के अनंत सुख पावें।

### ज्ञान सीखने के बाद बोलने का पाठ

*क्या आपको पता है ज्ञान सीखने के बाद ज्ञानदाता को क्या कहना चाहिए ?*

**नहीं ! तो आइए हम बताते हैं कि ज्ञानदाता से कैसे क्षमायाचना करें-**

अहो, पूज्य गुरुदेवजी महाराज साहब! आपके पास से ज्ञान-ध्यान सीखते समय आपका कुछ भी अविनय-अभक्ति-अपराध हुआ हो, तो बार-बार क्षमा चाहता/चाहती हूँ, आप क्षमा करेंगे, मैं आपका अनंत-अनंत उपकार मानता/मानती हूँ।

### ज्ञान वृद्धि के ग्यारह बोल

हमने सुना है आपको याद कम होता है। क्या यह सच है? यदि हाँ, तो आइए तथा पाइये स्मरण शक्ति बढ़ाने के टिप्स !

1. उद्यम करें तो ज्ञान बढ़े,
2. निद्रा तजे तो ज्ञान बढ़े,
3. ऊनोदरी तप करे तो ज्ञान बढ़े,
4. थोड़ा बोले तो ज्ञान बढ़े,
5. पंडित पुरुषों की सेवा करे तो ज्ञान बढ़े,
6. कपट रहित तपस्या करे तो ज्ञान बढ़े,
7. विनय भक्ति करे तो ज्ञान बढ़े,
8. संसार को असार जाने तो ज्ञान बढ़े,
9. सीखा हुआ ज्ञान बार-बार चितारे तो ज्ञान बढ़े,
10. ज्ञानी के पास पढ़े-सीखे तो ज्ञान बढ़े,
11. पाँचों इन्द्रियों का स्वाद तजे तो ज्ञान बढ़े।

### स्मरण रखने योग्य बातें

**श्रावक कहाँ रहे ?**

श्रावक वहाँ रहे जहाँ धर्म स्थान निकट हो, गुरु सान्निध्य प्राप्त होता हो, सुपात्र दान और स्वधर्मी सेवा का सहज लाभ मिलता हो वहाँ श्रावकों को रहना चाहिए।

# निर्दोष सीताजी पर कलंक क्यों आया?

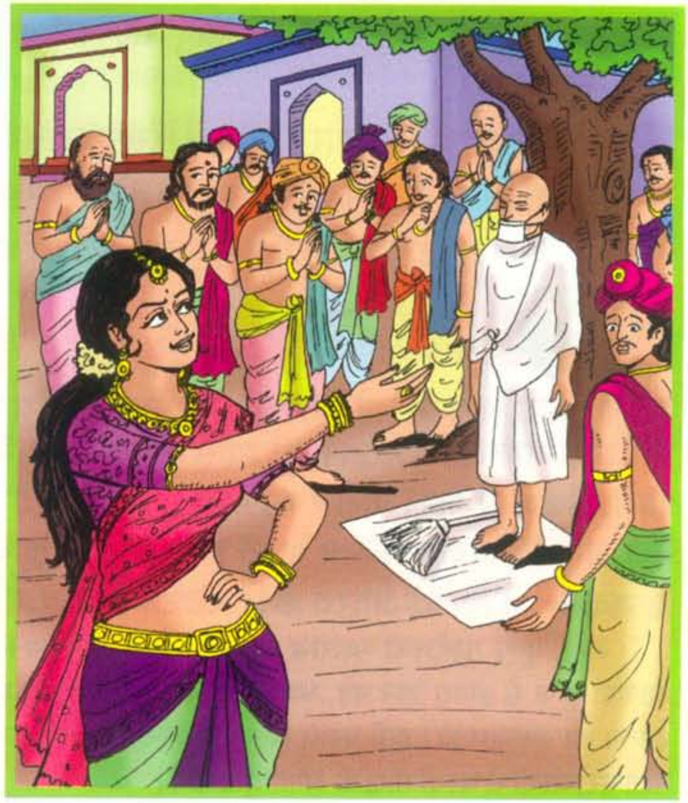

महान् पवित्र आत्मा सती सीताजी के शील के ऊपर जन-सामान्य ने कलंक (झूठा) लगाया। जिससे सीताजी को अनेक कष्ट भुगतने पड़े। क्योंकि जैनदर्शन CAUSE & EFFECT THEORY को मानता है। कारण के बिना कार्य उत्पन्न होता ही नहीं। इसका सम्बन्ध पूर्व भव से है, क्योंकि उनकी आत्मा पूर्व भव में अपने पाप की आलोचना (प्रायश्चित्त) न कर सकी। इसलिये महासती के ऊपर भी काला कलंक लगा।

**पूर्वभव**—श्रीभूति पुरोहित की पत्नी सरस्वती ने पुत्री को जन्म दिया। उसका नाम वेगवती रखा गया। क्रमशः वह यौवनावस्था को प्राप्त हुई।। सबकी प्रियपात्र थी। एक दिन उसने कायोत्सर्ग में खड़े मुनिश्री को देखा, मुनि भगवंत त्यागी और तपस्वी थे। जिन्हें अनेक लोग वंदन करते थे। वेगवती ने हँसी में आरोप लगाते हुए लोगों से कहा कि इनको आप क्यों वंदन करते हो? इनमें क्या पड़ा है? मैंने तो स्त्री के साथ क्रीड़ा करते हुए इन्हें देखा है और इन्होंने उस स्त्री को दूसरी जगह भेज दिया है। यह सुनकर शीघ्र ही लोकमानस बदल गया।

ऐसी बात 'विश्वस्त सूत्र' जैसी अपने गाँव की लड़की वेगवती के मुँह से.... सबको विश्वास हो गया। महान् पवित्र आत्मा होते हुए भी कुमारिका वेगवती ने सिर्फ उपहास में आरोप लगाया था, परन्तु लोग कलंक की घोषणा सुनते ही मुनिश्री के प्रति दुर्भाव वाले बन गये।

यह देखकर सुदर्शन मुनिश्री ने वेगवती के ऊपर द्वेष नहीं किया, परन्तु अपने कर्मों का विचार कर अभिग्रह किया कि जब तक यह कलंक नहीं उतरेगा, तब तक मैं कायोत्सर्ग नहीं पारूँगा। कायोत्सर्ग के प्रभाव से देव ने वेगवती के मुख को श्याम व विकृत बना दिया, कोयले जैसा काला और टेढ़ा-मेढ़ा..... उसके पिताश्री यह देखकर आश्चर्यचकित हो गये—मेरी सुन्दर लड़की को यह कौन-सा रोग हो गया। "पुत्री! यह क्या किया? कोई दवाई तो नहीं लगाई। कुछ उल्टा-सुल्टा तो नहीं किया?" श्रीभूति ने आश्चर्य से पूछा।

वेगवती ने नम्रता से जवाब दिया—"पिताश्री! और तो मैंने कुछ नहीं किया, परन्तु कौतुक वृत्ति से मजाक में लोगों को कहा कि सुदर्शन मुनि को मैंने स्त्री के साथ देखा है।" यह सुनते ही श्रीभूति क्रोधायमान हुए कि "अरे.....! यह तूने क्या किया? जा, अभी जा और उस महान् मुनि से माफी माँगकर आ.....।" पिताजी के रोष से वेगवती भयभीत हो गई और प्रकट रूप से वह थर-थर काँपने लगी। उसने सभी लोगों के सामने मुनि से क्षमा-याचना की और कहा कि "मैंने उपहास में असत् दोषारोपण करके आपके ऊपर कलंक लगाया है, आप निर्दोष हैं।" यह सुनकर लोग वापस मुनिश्री का सत्कार करने लगे।

बाद में उसने दीक्षा ली। चारित्र जीवन की सुन्दर आराधना कर मृत्यु पाकर पाँचवे देवलोक में गई। वहाँ से मरकर जनक राजा की पुत्री सीता बनी। रामचन्द्रजी की पत्नी बनने के बाद वनवास के दरम्यान जंगल में रावण ने उसका अपहरण किया। भयंकर युद्ध हुआ। रावण की करुण मौत हुई। राम की विजय हुई। फिर राम, लक्ष्मण और सीता को अयोध्या में लोगों ने बड़ी खुशी से प्रवेश करवाया।

महान् सती सीताजी पर लोग झूठा दोषारोपण करने लगे कि सीताजी इतने दिन रावण के घर अकेली रहीं, अत: वह कैसे सती रह सकती है? रामचन्द्र जी ने कोई परीक्षा किये बिना ही सीताजी को कैसे वापस घर में रख लिया? इन्होंने सूर्यवंश पर काला धब्बा लगाया है। इस प्रकार एक निर्दोष आत्मा सीताजी पर झूठा कलंक आया, क्योंकि वेगवती के भव में उन्होंने प्रायश्चित नहीं लिया था।

रामचन्द्रजी स्वयं जानते थे कि सीताजी महान् सती है, उसमें तनिक भी दोष नहीं है। फिर भी उन्होंने लोकापवाद के कारण कृतान्तवदन सारथी को बुलाया और वन विहार के निमित्त से गर्भवती सीताजी को जंगल में छोड़ने के लिए कहा।

कृतान्तवदन जब सिंहनिनाद नामक भयानक जंगल में पहुँचा और वहाँ वह रथ से नीचे उतरा। तब उसका मुख म्लान हो गया। आँखों से श्रावण भाद्रपद बरसने लगा, तब सीताजी ने उससे पूछा कि "आप शोकाकुल क्यों हैं?" तब उसने कहा कि "इस पापी पेट के कारण मुझे यह दुर्वचन कहना पड़ रहा है कि आप रथ से उतर जाईये, क्योंकि यह रामचन्द्रजी की आज्ञा है कि आपको इस जंगल में निराधार छोड़कर मुझे वापस लौटना है।" रावण के यहाँ रहने के कारण लोगों में आपकी निंदा होने लगी है। इसलिए सती होते हुए भी आपको रामचन्द्रजी ने लोक-निंदा से बचने हेतु जंगल में छोड़ने के लिए मुझे भेजा है।

सीताजी यह सुनते ही मूर्च्छित होकर गिर पड़ी, आँखें बंद हो गई, शरीर भी निश्चेष्ट-सा हो गया। सारथी जोर से रोने लगा–"अरे! मेरे वचन से एक सती की हत्या?" कृतान्तवदन असहाय होकर खड़ा रहा। इतने में जंगल की शीत हवा ने संजीवनी का काम किया। उससे निश्चेष्ट सीताजी को होश आया, फिर उसने सारथी द्वारा रामचन्द्रजी को संदेश भेजा कि जिस तरह लोगों के कहने से आपने मेरा त्याग किया है, उसी प्रकार लोगों के कहने से धर्म का त्याग मत करना।

यह सुनकर सारथी की आँखों में आँसू आ गये। उसका हृदय गद्‌गद् हो गया। महासती के सत्य पर धन्य-धन्य पुकार उठा। सती को छोड़कर सारथी चला गया। उस भीषण जंगल में वज्रजंघ राजा अपने मंत्री सुबुद्धि आदि के साथ हाथियों की शोध के लिये आये हुए थे। दूर से अकेली, अबला स्त्री को देखकर सहायता के लिये राजा अपने सिपाहियों के साथ वहाँ पहुँचे। सीताजी उन्हें लुटेरा समझकर गहने उनकी तरफ फैंकने लगी। तब वज्रजंघ राजा ने उन्हें आश्वासन देते हुए कहा कि "आप चिंता मत कीजिए। हम आपकी सहायता के लिए आये हैं। आपके भाई के समान हैं।" तब सीताजी ने सब हकीकत कही। उसके बाद वज्रजंघ राजा वहाँ से सीताजी को सम्मानपूर्वक सुरक्षा के साथ पुंडरीक नगरी में ले गये। वहाँ पर उसने लव-कुश दो पुत्रों को जन्म दिया। जब वे बड़े हुए तब उन्होंने राम-लक्ष्मण के साथ युद्ध किया। युद्ध में राम-लक्ष्मण आकुल-व्याकुल हो गये। इतने में नारदजी वहाँ आये। उन्होंने पिता-पुत्र का परिचय करवाया और युद्ध को रोक दिया गया। उनका सुखदायी मिलन हुआ। लव और कुश को मान-सम्मान के साथ अयोध्या में प्रवेश करवाया। बाद में रामचन्द्रजी की आज्ञा को मान देकर सीता जी ने अग्नि-दिव्य किया। पर शील के प्रताप से अग्नि पानी बन गया। रामचन्द्रजी ने सम्मानपूर्वक अयोध्या में प्रवेश करने के लिए सीताजी से कहा। सीताजी ने उसी पल आत्म-कल्याण करने हेतु स्वयं मस्तक लुंचन कर संयम स्वीकार किया। उत्तम संयम का पालन कर 12वें देवलोक में गई।

पूर्वभव में उपहास में मुनि पर कलंक का आरोपण दिया था, उसका प्रायश्चित्त न लेने से एक महासती के ऊपर कलंक आया और उसके कारण कितने कष्ट सहने पड़े। अत: हमें पाप की आलोचना करके प्रायश्चित लेना चाहिए।

## सरगम

(तर्ज–उनसे मिली.....)

**बनते हैं बिगड़े काम गुरु, लेकर तेरा नाम।**
**तुम हो जग में महान्(3), गुरु देते भव विश्राम॥टेर॥**

**पाप की दौड़ भयंकर है, दुर्गति सामने दिखती है।**
**तेरी शरण पाकर गुरुवर, आत्मा कुछ तो रुकती है।**
**तुम हो धर्म के प्राण (3)..... ॥1॥**

**तेरी करुणा बहती है, मेरी शौर्यता जगती है।**
**जन्मोजन्म की प्यास मेरी, तेरी वाणी से मिटती है।**
**जीवन के वरदान (3)..... ॥2॥**

**गिरे हुए को उठाते हैं, रुके हुए को चलाते हैं।**
**ऊब गये जो जीवन से, उनको जीना सिखाते हैं।**
**मिट जाते व्यवधान (3)..... ॥3॥**

# H FOR HELL नरक

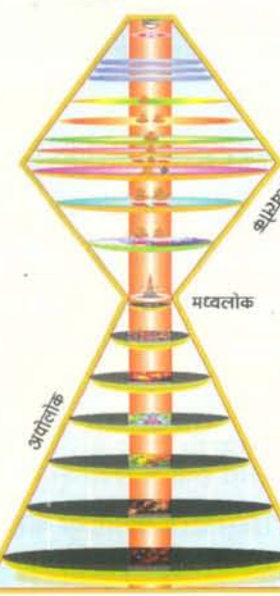


हम जिस जमीन पर रहते हैं उसके नीचे सात नरक क्षेत्र एक के नीचे एक रहे हुए हैं। जैसे एक देश में कई प्रदेश व एक प्रदेश में कई शहर और गाँव होते हैं। वैसे ही एक नारकी में लाखों नरकावास हैं। एक-एक नरकावास में लाखों कुंभियाँ हैं। नारकी देश के समान, नरकावास नगर के समान एवं कुंभियां घर के समान हैं।

ज्ञात नरकभूमियों के कुल 84 लाख नरकावास हैं। प्रत्येक नरकावास की मोटाई 3000 योजन एवं लंबाई-चौड़ाई में कुछ संख्यात योजन के हैं एवं कुछ असंख्यात योजन के हैं।

*संसार का प्रत्येक जीव सुखी बनना चाहता है। सुख के लिए वह पुरुषार्थ (मेहनत) करता है, परन्तु कषाय एवं अज्ञानतावश ऐसे कार्य कर बैठता है, जिसके कारण दुर्गति (नरक-तिर्यंच गति) में जाना पड़ता है एवं वहाँ महा भयंकर कष्ट सहन करना पड़ता है।*

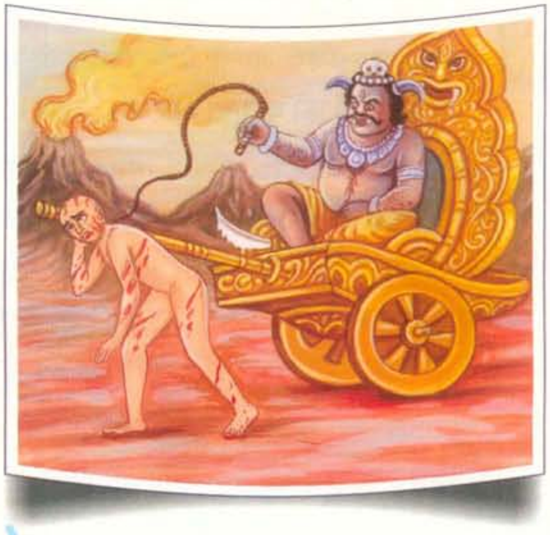

**महारम्भ** — आसक्तिपूर्वक की जानेवाली महाहिंसा
**महापरिग्रह** — जड़ पदार्थों पर गहरा मूर्च्छाभाव
**मद्य-माँस का सेवन** — शराब, मांस खाना
**पंचेंद्रिय हिंसा** — भ्रूणहत्या, आत्महत्या जैसे पाप।
ये नरक गमन के प्रमुख कारण हैं।

न - नष्ट हो जाती है निर्मल बुद्धि जहाँ।
र - रह नहीं पाती है पुण्य की समृद्धि जहाँ।
क - कष्टों की खाई में गिर जाती है आत्मा जहाँ।

नरक में जीवों के उत्पन्न होने की बड़ी-बड़ी कुम्भियाँ हैं, जिनमें नारकी जीव पैदा होते हैं। अन्तर्मुहूर्त में उनका शरीर फूल जाता है। कुम्भियों का मुँह छोटा होने से वे बाहर निकल नहीं पाते हैं तब परमाधामी देवता उन जीवों को खींचकर बाहर निकालते हैं। वैक्रिय शरीर होने से पारे के समान बिखर जाता है, परन्तु क्षण भर में वापस मिल जाता है। फिर जीवन पर्यंत वे घोर दुःख का अनुभव करते हुए वहाँ रहते हैं। एक बार जीव नरक या देवगति में चला जाता है, तो कम से कम 10,000 वर्ष एवं ज्यादा से ज्यादा 33 सागरोपम तक वहाँ रहता है।

## नरक गति में कितनी तरह की वेदनाएँ होती हैं?

नरक गति में तीन प्रकार की वेदनाएँ होती हैं— (1) परमाधामी देवकृत वेदनाएँ, (2) परस्पर जनित वेदनाएँ, (3) क्षेत्र वेदना।

**परमाधामी देवकृत वेदनाएँ**—परमाधामी देव असुर कुमार देवों की एक जाति है। ये देव स्वभाव से हिंसक और अधर्मी होते हैं। दूसरों को दुःख देना और दुःखी देखकर प्रसन्न होना, आपस में लड़ाना-भिड़ाना और लड़ाई देखकर आनन्द का अनुभव करना इनका स्वभाव है। ये परमाधामी देव पहली, दूसरी और तीसरी नारकी के जीवों को निम्न प्रकार से कष्ट पहुँचाते हैं—

## नरक में पन्द्रह परमाधामी देव की भयंकर वेदना

**1. अंब**—500 योजन उछाले, **2. अम्बरीष**—छुरे से टुकड़ा करें, **3. श्याम**—यष्टि-मुष्टि से प्रहार करें (मुट्ठी का प्रहार), **4. सबल**—आंत-हृदय को फाड़े, **5. रौद्र**—भाला, बरछी से बींधे, **6. महारौद्र**—अंगोपांग छेदे, **7. काल**—उबलते तैल में डाले, **8. महाकाल**—मांस के टुकड़े खिलाते, **9. असिपत्र**—तलवार जैसे तीक्ष्ण या तीखे पत्तों से काटे, **10. धनुष**—बाणों से नाक, कान बींधे, **11. कुंभ**—कुंभीपाक में पकावे, **12. बालुका**—तपी हुई रैती में भुंजे, **13. वैतरणी**—तपे हुए सीसे में डाले, **14. खरस्वर**—काँटे वाले वृक्षों से रगड़े, **15. महाघोष**—पशुओं के समान बाड़े में डाले।

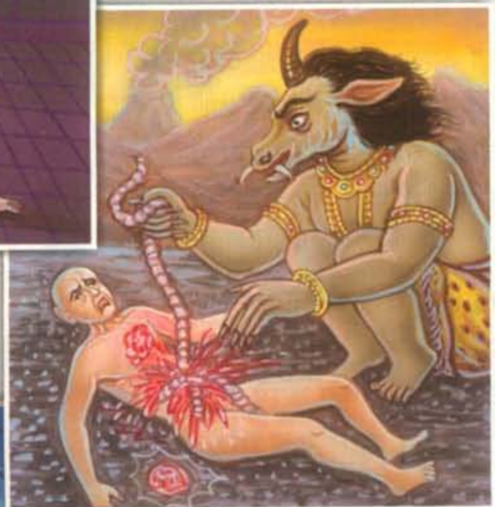

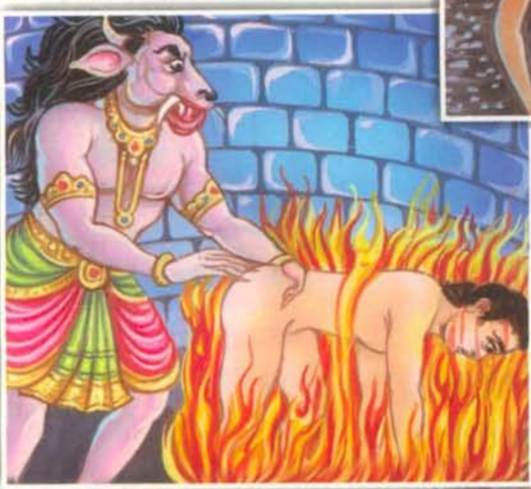

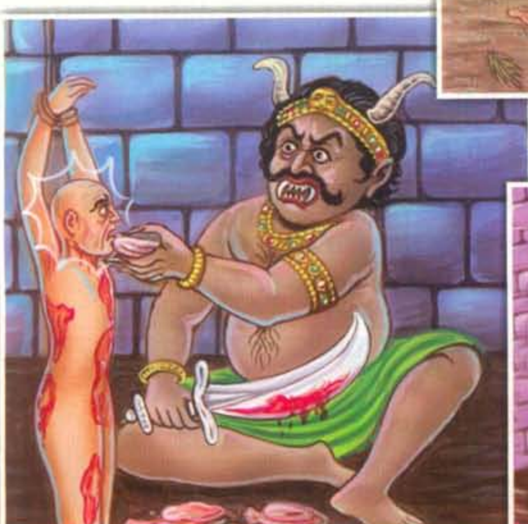

स्वीमिंग पूल, जहाज, नाव आदि पानी में मस्ती करने वालों को, बिना छाना पानी काम में लेने वालों को और फालतू पानी गिराने वालों को परमाधामी देवता वैतरणी नदी के गर्म और खारे पानी में डालकर उनके शरीर को तकलीफ पहुँचाते हैं। जो मच्छर, चींटी, मकोड़े, कॉकरोच, पशु-पक्षी आदि को मारते हैं, उन शौकीन लोगों को देवता मच्छर, चींटी, मकोड़े आदि बनाकर वापस मारते हैं और भयंकर दर्द पहुँचाते हैं।

जो धर्म-ध्यान करता है, तप-त्याग करता है, जीवों की रक्षा करता है, वह नरक गति में नहीं जाता है। जैन दर्शन में सात नरकों का वर्णन मिलता है। सब नरकावास अंदर से गोलाकार और बाहर से चौकोर पाषाणमय (पत्थर) भूमि तल वाले व महादुर्गन्धमय है। वहाँ की भूमि का स्पर्श करने से ही इतनी भयानक वेदना होती है कि जितनी 1,000 बिच्छुओं के एक साथ काटने से होती है। वहाँ सदा घोर अंधकार ही रहता है।

1. पहली नरक रत्नप्रभा भूमि काले वर्ण वाले भयानक रत्नों से व्याप्त हैं। 2. दूसरी शर्कराप्रभा भूमि बर्छी, भाले आदि शस्त्रों से भी अधिक तीक्ष्ण कंकरों से व्याप्त है। 3. तीसरी बालुकाप्रभा भूमि भड़भुंजे की भाड़ की रेती से भी अधिक उष्ण रेती से व्याप्त है। 4. चौथी पंकप्रभा भूमि रक्त, मांस, रस्सी, मल, मूत्रादि के कीचड़ से व्याप्त है। 5. पाँचवीं धूमप्रभा नरक राई मिर्ची के धुएँ से व्याप्त है। 6. छठीं तमप्रभा भूमि घोर अंधकार से व्याप्त है। 7. सातवीं तम:तम प्रभा भूमि महाभयंकर अंधकार से व्याप्त है।

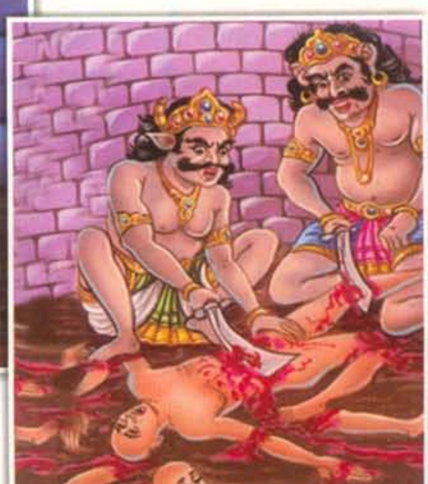

# छट्ठे आरे के दुःखों की झलक

## नहीं रे बाबा नहीं? छट्ठे आरे में नहीं जाणो?

इस हुंडा अवसर्पिणी काल का छट्ठा आरा भयंकर दु:खदायी होगा, तीव्र आँधी, तूफान एवं वर्षा से सब कुछ नष्ट हो जायेंगे। छट्ठे आरे के पहले दिन के प्रथम प्रहर में चारित्र धर्म व जैन धर्म का, दूसरे प्रहर में अन्य धर्मों का, तीसरे प्रहर में राजनीति का, चौथे प्रहर में अग्नि का विच्छेद हो जायेगा।

एक हाथ की अवगाहना, 20 वर्ष की आयु वाले वे लोग काले, डरावने, बेडौल, आचार व मर्यादाहीन, कामी, क्रोधी, भोगी, रोगी व दीन-हीन होंगे। कुत्ते और सूअर के समान बहु संतान पैदा करने वाले होंगे। द्वेष, ईर्ष्या, कलह के कारण आपस में लड़ेंगे, झगड़ेंगे व मरेंगे। नरक तथा तिर्यंच गति के मेहमान बनेंगे।

भयंकर भूख लगेगी, परन्तु पर्याप्त आहार नहीं मिलेगा। पंचम आरे के अंतिम समय विनाश पाते हुए मनुष्यों और पशुओं में से कुछ बीज रूप जीवों को उठाकर भरत क्षेत्र के अधिष्ठित देव गंगा और सिंधु नदी के किनारे वैताढ्य पर्वत में रहे हुए 72 बिलों में ले जाकर रख देंगे। वे बिल तीन-तीन माले वाले होंगे। 66 बिल मनुष्य के, 3 पक्षी, 3 पशु के लिए होंगे। गंगा सिंधु नदी का साढ़े 62 योजन का पाट है। वह सूख करके रथ के पहिये जितना चौड़ा पाट और रथ की धूरी डूबे, उतना गहरा जल उसमें रह जायेगा। जिसमें मच्छ, कच्छादि जीव जंतु विशेष होंगे।

72 बिलों में रहने वाले प्राणी प्रात: और संध्या के समय बिलों से बाहर निकलेंगे और गंगा तथा सिंधु नदी के मच्छ-कच्छ आदि जीवों को पकड़कर नदी के किनारे रेती में दबा देंगे। वे दिन में सूर्य की गर्मी से और रात में तीव्र ठण्डक से सिक (भुन) जायेंगे। उन्हीं का आहार मनुष्य करेंगे और उन जलचर जीवों की चमड़ी और हड्डियों को चाटकर तिर्यंच अपना निर्वाह करेंगे। मनुष्य की खोपड़ी में जल पीयेंगे। छह वर्ष की स्त्री गर्भधारण करेगी व कुतिया के समान परिवार के साथ महाक्लेशमय वातावरण में रहेगी, मनुष्यों में परस्पर ईर्ष्या, द्वेष, क्लेश अत्यंत बढ़ेगा। तीव्र कुरूप और भयंकर रोग से जीवन ग्रस्त होंगे। दु:ख से दिन पूर्ण करेंगे। इस छट्ठे आरे का महादु:खद वर्णन सुनकर जैनाचार्य श्री नानालालजी म. सा. को वैराग्य उत्पन्न हो गया था।

जो जीव दान-पुण्य, व्रत पच्चक्खाण रहित होंगे, वे छट्ठे आरे में आकर उत्पन्न होंगे। छट्ठे आरे में हमारा जन्म न हो, इसके लिए हम भी वैराग्य की ओर बढ़ने का प्रयास करें।

**सरगम**

(तर्ज—प्यार दिवाना होता है.....)

पाप करेगा, उसको नरक में, जाना होगा रे।
कुंभी में, उत्पन्न होकर, सब सहना होगा रे ॥टेर॥
अनंत वेदना सहन करेगा, कैसे ये मानव।
खींच-खींच कर बाहर निकाले, वो काले दानव।
भूख प्यास, सर्दी गर्मी को, सहना होगा रे ॥1॥
सात नरक की महावेदना, मुझको नहीं सहना।
पाप कर्म को मुझे छोड़, अब शांति से रहना।
महावीर की, वाणी ऊपर, चलना होगा रे ॥2॥

# रोहिणेय चोर

राजगृही नाम की एक सुन्दर और वैभवशाली नगरी थी। उस नगरी के पास **वैभारगिरि पर्वत** था। इस पर्वत की गुफा में **रोहिणेय चोर** अपनी चोर-मण्डली के साथ रहता था। रोहिणेय ने चोरी का गुर अपने पिता से सीखा था। साथ-साथ दूसरी अनेक विद्याओं का ज्ञान होने के कारण वह बुद्धिमान भी हो गया था।

**रोहिणेय चोर के पिता ने मृत्यु के वक्त पुत्र से एक वचन लिया था कि वह महावीर प्रभु की वाणी कभी भी नहीं सुनेगा।**

पिता की मृत्यु के बाद वह राजगृही नगरी में जाकर बड़ी-बड़ी चोरी करता और लोगों को बहुत पीड़ा देता। दिनों-दिन उसका आतंक बढ़ता जा रहा था। वह इतना चालाक और चपल था कि राजा के सिपाहियों के हाथ कभी नहीं आता।

प्रजाजनों ने महाराज श्रेणिक से फरियाद की और चोर के आतंक से सबको जल्दी मुक्त करवाने की विनती की। चोर को बुद्धिशाली और चपल जानकर राजा ने उसे पकड़ने का काम अपने पुत्र और राज्य के मंत्री **अभयकुमार** को सौंप दिया। मंत्री ने नगर के दरवाजे पर सख्त पहरा लगा दिया और कोई नया आदमी अन्दर आये या बाहर जाये उसका खास ध्यान रखने को कह दिया। सिपाही और नगर के कोतवाल गुप्त रूप से दरवाजे पर ध्यान रखने लगे। रोहिणेय चोर को अभयकुमार द्वारा बनाई व्यवस्था की जानकारी अपने आदमियों द्वारा मिल गई। उसने अभयकुमार को छलने का निश्चय किया। उसके लिए वह उचित समय की राह देखने लगा।

एक बार श्री महावीर प्रभु विहार करते-करते राजगृही नगरी में पधारे और नगरी के बाहर के उद्यान में विराजे। प्रभु नगरी के बाहर पधारे हैं, ऐसा जानकर नगरजन उनके दर्शन करने और उपदेश सुनने उद्यान में इकट्ठे हुए। महावीर प्रभु को वंदन करके सब नगरजन उनकी पवित्र, मीठी, आनंदकारी वाणी सुनने बैठे। देवताओं द्वारा विरचित समवसरण में प्रभु देशना देने लगे।

उस दिन रोहिणीय चोर भी पर्वत की गुफा में से निकलकर राजगृही की ओर जा रहा था। वह उद्यान के पास से निकला। नगर में प्रवेश करने का वह छोटा रास्ता था। दूसरे रास्ते से जाने पर ज्यादा समय लग जाता था। इसलिए वह इस छोटे रास्ते पर ही चलने लगा।

महावीर प्रभु की दिव्य और तेजस्वी वाणी में देशना चल रही थी। अपने पिता को दिया हुआ वचन भंग न हो इसलिए रोहिणेय चोर अपना जूता बगल में दबाकर, दोनों कान में अंगुलियाँ डालकर उद्यान के पास से जल्दी से दौड़ा। परन्तु जैसे ही वह समवसरण के पास से निकला, तभी उसके पैर में काँटा चुभ गया। उसने सोचा कि यदि अभी काँटा निकालने का प्रयत्न करूँगा तो कान में डाली अंगुलियाँ निकालनी पड़ेगी और प्रभु के वचन कान में जाएँगें तो पिता को दिया वचन टूट जाएगा। इसलिए काँटे वाले पैर से ही दौड़ना चालू रखा। परन्तु काँटा पैर में जोर से लगा था और पैर में बहुत पीड़ा हो रही थी, इसलिए अब उससे थोड़ा भी दौड़ा नहीं जा रहा था। आखिर पैर में से काँटा निकालने के लिए उसे कान में से अंगुलियाँ निकालकर नीचे झुकना ही पड़ा।

उस समय प्रभु देवताओं के स्वरूप का वर्णन कर रहे थे। भगवान के मुख से निकली अमृत के समान वाणी रोहिणेय के कान में पड़ी। **"(1) देवों का श्वासोच्छ्वास सुगंध वाला होता है। (2) उनके गले की माला कभी मुरझाती नहीं। (3) उनकी आँखें झपकती नहीं। (4) पैर जमीन से चार अंगुल ऊपर ही रहते हैं, मतलब कि उनके पैर जमीन को स्पर्श नहीं करते।"** ये वचन सुनकर रोहिणेय पैर का काँटा निकालकर, कान में अंगुलियाँ डालकर जल्दी से आगे दौड़ गया। महावीर प्रभु के वचन जो उसके कान में पड़े थे, उन्हें भूलने की उसने बहुत कोशिश की, लेकिन भूल नहीं सका। दुर्भाग्य से उस दिन नगर प्रवेश करते वक्त कोतवाल ने पकड़ लिया और बाँधकर श्रेणिक राजा के पास ले आया। अभयकुमार को भी बुलाया गया। अभयकुमार ने कोतवाल से पूछा-"चोर के पास से चोरी हुई चीजें मिली क्या? सबूत के बिना उसे सजा नहीं हो सकती।" कोतवाल ने कहा-"हमने तो उसे नगर में प्रवेश करते वक्त संदेह के कारण पकड़ा है, इसलिए उसके पास से कुछ भी नहीं मिला।"

राजा श्रेणिक ने चोर से पूछा-"तेरा नाम क्या है? तू कौन से गाँव में रहता है?"

चोर ने जवाब दिया-"मेरा नाम दुर्गचंद है, मैं शालिग्राम में रहता हूँ।" राजा ने आगे पूछा-"तू क्या करता है?" चोर ने कहा-"मेरी जात कबीले की है। खास काम के लिए आया हूँ। मुझे आते देर हो गई इसलिए कोतवाल ने मुझे पकड़ लिया।" राजा ने शालिग्राम में जाँच की, लेकिन वहाँ सब चोर के ही आदमी थे, इसलिए जो चोर ने कहा वैसा ही वर्णन ग्राम वालों ने भी किया।

अभयकुमार मंत्री ने सोचा–'यह चोर बहुत होशियार है, इसलिए बुद्धि से काम लेना चाहिए।' यह सोचकर उन्होंने चोर से कहा–"भाई तूं घबराना नहीं, थोड़े दिन तूं मेरे साथ ही मेरा मेहमान बनकर रहेगा।" ऐसा कहकर चोर को अपने पास रखा।

अभयकुमार मंत्री होने के बावजूद भी श्रावकों के व्रतों का पालन दृढ़ता से करते थे। वे प्रतिदिन सामायिक भी करते थे। पर्व तिथि के दिन पौषध आदि विशेष धर्म आराधना करते थे। रोहिणेय भी उनके साथ रहकर उनका अनुकरण करता, इसलिए वह खुद चोर है, ऐसा नहीं लगता।

आखिर अभयकुमार ने एक युक्ति सोची। महल के एक विशाल खंड में उन्होंने अनेक प्रकार के झूमर, चंदरवा और ध्वजाएँ बंधवा दी। दरवाजे पर शोभायमान तोरण लगवाये। कमरे में अगर, चंदन आदि सुगन्धित द्रव्य रखे। शयनखंड में सुन्दर तरीके से शय्या लगवायी। अत्यन्त रूपवती दासियों को सुन्दर शृंगार से सजाकर, उनके हाथ में मृदंग और वीणा देकर कमरे में खड़ी कर दिया। उस कक्ष को देखकर ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो साक्षात् देवलोक को धरती पर उतारा गया है।

अभयकुमार ने रोहिणेय को उस दिन विविध प्रकार का स्वादिष्ट, रूचिकर और सुगन्धित भोजन खिलाया। भोजन के बाद नशाकारक मदिरा पिलाई। मदिरापान से रोहिणेय को बहुत नशा चढ़ा और वह गहरी निद्रा में सो गया। उसी वक्त उसे महल के उस सजे हुये कमरे में शय्या पर सुला दिया गया।

थोड़ी देर पश्चात् रोहिणेय को होश आया और आश्चर्य से चारों ओर देखने लगा। जीवन में कभी ऐसा देखा नहीं, वैसा दृश्य उसकी नजरों के सामने था। उसी वक्त देवी जैसी दासियों ने सुन्दर हावभाव से और मधुर स्वर से पूछा–"हे स्वामीनाथ! आप बहुत भाग्यशाली हैं, आपका जन्म देवलोक में हुआ है। आपने ऐसे कौन-से पुण्य के कार्य किये हैं कि जिससे हमारे स्वामी हुए और देवलोक में उत्पन्न हुए?" ऐसा सुनकर चोर सोचने लगा कि 'मैंने ऐसा कोई पुण्य कार्य किया नहीं कि मैं देवलोक में उत्पन्न हो सकूँ।' उसी समय उसे, जो भगवान महावीर ने देवताओं का वर्णन किया था, वह उपदेश याद आया, देवों के श्वासोच्छ्वास सुगन्ध वाला रहता है। उनकी गले की मालाएँ मुरझाती नहीं। उनकी आँखों की पलकें झपकती नहीं। पैर जमीन से चार अंगुल ऊपर ही रहते हैं मतलब कि उनके पैर जमीन का स्पर्श नहीं करते।

उसने देवी जैसी रूपवती सुन्दरियों का सूक्ष्म निरीक्षण किया तो समझ में आया कि, 'ये स्त्रियाँ तो जमीन पर पैर रखकर ही चलती हैं, इनकी आँखों की पलकें झपकती हैं, इनकी गले की मालाओं में कई फूल मुरझाये हुए हैं।' यह सब देखकर उसे पता चल गया कि यह झूठा नाटक चालाक अभयकुमार ने मुझे फँसाने के लिए खड़ा किया है। अब मुझे भी नाटक के सामने नाटक करना पड़ेगा।

वह देवियों को कहने लगा–"देवियों! मैंने मनुष्य के भव में दान, धर्म, पुण्य, नियम, व्रतों का पालन किया है और सात बड़े व्यसनों से रहित जीवन जीकर बहुत पुण्य कमाया है, इसलिए आपके स्वामी के रूप में उत्पन्न हुआ हूँ।" देवियों ने फिर प्रश्न किया–"हे नाथ! आपकी पुण्यकरणी तो हमने सुनी, लेकिन आपने कुछ पाप किये होंगे, वो भी हमें बताइए।" चोर ने कहा–"मैंने मनुष्य भव में सिर्फ धर्म ही किया है, परन्तु पाप तो एक भी नहीं किया।"

रोहिणेय चोर और दासियों के बीच जो वार्तालाप हुआ वह अभयकुमार गुप्त रीति से सुन रहे थे। उन्होंने समझ लिया कि यह चोर बहुत बुद्धिमान है। इसे पकड़ना आसान नहीं अत: श्रेणिक राजा को सब घटना की जानकारी देकर अभय कुमार ने चोर को छोड़ दिया।

छूटकर घर वापिस लौटते वक्त रोहिणेय चिन्तन करने लगा–'आज तो जीवन और मौत की बात बन गई। महावीर प्रभु की थोड़ी-सी वाणी मेरे कान में पड़ी तो उसके सहारे आज अभयकुमार जैसे बुद्धिनिधान महामंत्री के हाथों से आजाद बच निकला, इसलिए वह वाणी मेरे लिए महान् उपकारक बन गई है। अगर महावीर प्रभु के इतने से वचनों से मैं एक भव में बच जाऊँ तो उनकी अमृत तुल्य वाणी को ज्यादा सुनूँ तो कितना फायदा होगा? अब मैं पाप का धन्धा छोड़कर उनकी शरण में जाऊँगा और दु:खों से बचने का मार्ग जानूँगा।'

ऐसा चिन्तन करते-करते वह चोर प्रभु महावीर के पास पहुँचा। प्रभु के चरणों में भावपूर्वक वंदन करके वह बोला–"हे प्रभु! आपकी अमृतवाणी के थोड़े शब्दों ने मेरी यह जिन्दगी बचाई है, इसलिए शेष जीवन आपको समर्पित करने की भावना रखता हूँ। कृपा करके मुझे सुखी होने का मार्ग बताइए।" प्रभु महावीर ने उसे धर्म का मार्ग बताया। श्रावक धर्म और साधु धर्म का पालन करना समझाया और उनमें भी श्रेष्ठ साधु धर्म बताया जिसके पालन से इस भव, परभव और भव-भवों के सब दु:ख दूर हो जाते हैं। रोहिणेय चोर ने भगवान के पास दीक्षा लेने की भावना प्रगट की और कहा–"हे प्रभु! मैं श्रेणिक राजा से मिलकर वापिस आकर आपके पास दीक्षा लूँगा।"

रोहिणेय चोर राजा श्रेणिक के पास आया और अपने जीवन में आये हुए परिवर्तन की राजा को जानकारी दी। उसने नगर में से चुराया हुआ धन जहाँ-जहाँ रखा था, वहाँ से निकालकर दे दिया। राजा, अभयकुमार और प्रजाजन उसके परिवर्तन से बहुत ही खुश हुए। रोहिणेय ने अपने परिजनों तथा अपने साथियों को भी प्रतिबोध दिया। उन सबने आज्ञा लेकर महावीर प्रभु के पास आकर दीक्षा ग्रहण की।

साधु जीवन में श्रेष्ठ चारित्र पालकर, जीवन के अन्तिम समय में संथारा लेकर कालधर्म पाकर रोहिणेय मुनि देवलोक में उत्पन्न हुए।

महावीर प्रभु के मार्ग पर चलने और जीवन को उज्ज्वल बनाने वाले उन रोहिणेय मुनि को धन्य हो।

# I FOR INDRA इन्द्र

देवलोक के अधिपति को इन्द्र कहते हैं। इन्द्र 64 हैं, वो इस प्रकार हैं— 10 भवनपति देवों के 20 इन्द्र, 16 वाणव्यंतर देवों के 32 इन्द्र, 10 ज्योतिषी देवों के 2 इन्द्र, 12 देवलोक के 10 इन्द्र। भवनपति देव 'भवन' में रहते हैं। वाणव्यंतर देव 'नगर' में रहते हैं। ज्योतिषी व वैमानिक देव 'देव विमान' में रहते हैं। एक-एक इन्द्र के अधिकार में कई देवी-देवता रहते हैं। इन्द्र व देवी-देवता के पास अपार ऋद्धि, वैभव एवं अपार सुख होता है।

*अगर हम मनुष्य भव में आकर के उत्तम विचार रखते हैं, मीठी वाणी बोलते हैं, बड़ों की सेवा करते हैं, जीव मात्र के साथ मैत्री भाव रखते हैं, साधु जीवन स्वीकार करते हैं या साधु-साध्वियों की सेवाभक्ति करते हैं, तो इस मनुष्य भव को पूर्ण करने के बाद देवलोक मिलता है।*

देवलोक में उत्पन्न होने वाले जीव को देवता या देव कहते हैं। देवता देवशय्या में उत्पन्न होते हैं। देवशय्या के ऊपर एक पतला वस्त्र ढ़का रहता है। जब देवता उत्पन्न होते हैं तो वस्त्र धीरे-धीरे फूलने लगता है। अन्तर्मुहूर्त में देवता का शरीर 32 वर्ष के युवक के समान परिपूर्ण हो जाता है। वस्त्र फटता है। देवता प्रकट हो जाते हैं। देवलोक में पाँच सभाएँ होती हैं, जहाँ पर उनका जीवन व्यवहार चलता है।

**1. उपपात सभा** यहाँ रत्नों की देव शय्या है, जिसमें देवी-देवता उत्पन्न होते हैं।

**2. अलंकार सभा** जन्म होने के बाद इस सभा में जाकर देवी-देवता रत्नों के वस्त्र आभूषण धारण करते हैं।

**3. अभिषेक सभा** यहाँ देवताओं का महोत्सव के साथ अभिषेक किया जाता है।

**4. व्यवसाय सभा** यहाँ पुस्तकरत्न है, जिसे पढ़कर देवता अपने व्यवहार का ज्ञान प्राप्त करते है। पुस्तक, पेन, स्याही, सभी रत्नों के बने होते हैं।

**5. सुधर्मा सभा** दीर्घकाल तक दिव्य सुखों का अनुभव करते हुए संचालन करते हैं।

## देवलोक में क्या होता है?

1. देवलोक के देव को वैक्रिय शरीर मिलता है जिससे वे नये-नये रूप बना सकते हैं।
2. उनका शरीर दिव्य तेजस्वी प्रकाशमान होता है।
3. उनके कपड़े, गहने सब दिव्य रत्न के बने होते हैं।
4. उनका जन्म होते ही वे जवान हो जाते हैं।
5. उन्हें बचपन या बुढ़ापा नहीं आता है।
6. उनकी आँखें अपलक (not blinking) रहती हैं।
7. वे जमीन से चार अंगुल ऊपर चलते हैं।

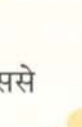

8. इनकी प्रतिछाया नहीं पड़ती है।
9. इनके शरीर में पसीना, मैल, दुर्गंध नहीं आती।
10. ये देव अपनी वैक्रिय शक्ति से तीर्थंकर भगवान के समवसरण में जा सकते हैं।
11. जहाँ पर पाखंडी (अन्यधर्मी के लोग) का जोर हो वहाँ पर समवसरण की रचना करते हैं।
12. इन देवों की चार जाति होती हैं—(1) भवनपति, (2) वाणव्यंतर, (3) ज्योतिषी, (4) वैमानिक।

13. इनमें वैमानिक जाति के देव सर्वश्रेष्ठ होते हैं। अगर हमें वैमानिक देव बनना हो, तो अधिक से अधिक त्याग, प्रत्याख्यान, संयम, सामायिक, कायोत्सर्ग, प्रतिक्रमण, वंदना, ध्यान, स्वाध्याय करना चाहिए।

14. इन सभी देवों के गले की फूलों की माला कभी मुरझाती नहीं है, लेकिन आयुष्य खत्म होने के 6 माह शेष रहने पर वह माला मुरझाने लगती है।

## स्मरण रखने योग्य बातें

- हमें अच्छा दिखने के लिए नहीं अच्छा और सच्चा बनने के लिए पुरुषार्थ करना चाहिए।
- उत्तम आचार ही जीवन का सबसे बड़ा धर्म है और यही स्वर्ग-अपवर्ग (मोक्ष) का मार्ग है।
- स्वर्ग के रास्ते पर कदम बढ़ाने के लिए पहले अपना स्वभाव अच्छा बनाइये। गंदे स्वभाव से देवता तो क्या, आपके घर वाले भी नफरत करते हैं।
- कषाय शांत, वासना उपशांत और जीवन प्रशांत है, तो आप जहाँ रहेंगे वहाँ स्वर्ग होगा।

# I FOR ➡ INDRIYA इन्द्रियाँ

**परिभाषा**—जीव जिसके द्वारा विषय को ग्रहण करता है, उसे इन्द्रिय कहते हैं। ये पाँच हैं—

- **श्रोत्रेन्द्रिय (कान)**—सुनने का काम करने वाली इन्द्रिय।
- **चक्षुरिन्द्रिय (आँख)**—देखने का काम करने वाली इन्द्रिय।
- **घ्राणेन्द्रिय (नाक)**—सूँघने का काम करने वाली इन्द्रिय।
- **रसनेन्द्रिय (जीभ)**—चखने का काम करने वाली इन्द्रिय।
- **स्पर्शनेन्द्रिय (काया)**—छूकर अनुभव करने का काम करने वाली इन्द्रिय।

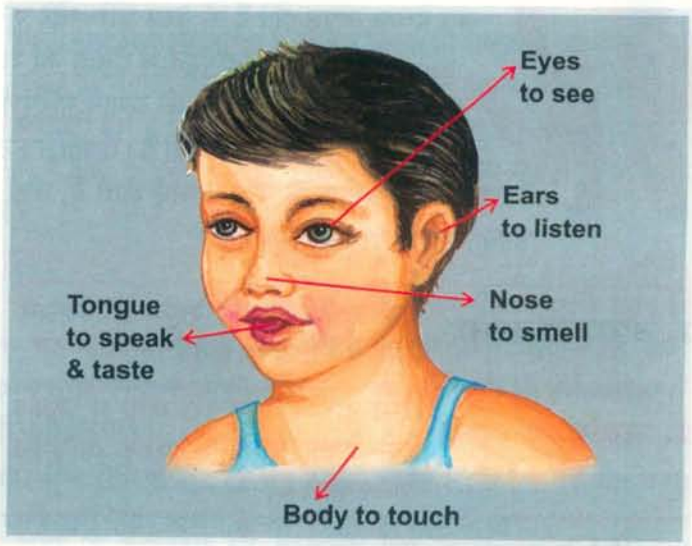


. संसार में कोई भी जीव ऐसा नहीं है, जिसके इंद्रियाँ न हो। एकेन्द्रिय जीवों के **एक**—स्पर्शनेन्द्रिय होती है। बेइन्द्रिय जीवों के **दो**—स्पर्शनेन्द्रिय और रसनेन्द्रिय होती है। तेइन्द्रिय जीवों के **तीन**—स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और घ्राणेन्द्रिय होती है। चउरिन्द्रिय जीवों के **चार**—स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय और चक्षुरिन्द्रिय होती है। पंचेन्द्रिय जीवों के **पाँच**—स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय और श्रोत्रेन्द्रिय होती है।

भूतकाल में जितनी जीवदया और यतना का पालन किया है उसके अनुरूप हमें इन्द्रियाँ और मन की सम्पत्ति प्राप्त हुई है।

### *क्या आपको यह सम्पत्ति पसंद है? आगे वाले भवों में भी इस इन्द्रिय रूपी सम्पत्ति को प्राप्त करना चाहते हैं?*

जिस चीज का जितना दुरुपयोग होता है, वह खत्म हो जाती है और हमें आगे प्राप्त नहीं होती है। पर जिस चीज का सदुपयोग किया जाता है, वह आगे भी अच्छी तरह प्राप्त होती है।

### *इन्द्रिय रूपी सम्पत्ति का दुरुपयोग हम कैसे कर रहे हैं?*

**(1) कान—** फिल्मी गीत, जोक्स, मनोरंजक बातें, I-pod, Mobile, DVD पर संगीत सुनना, किसी के झगड़े सुनना।

**(2) आँख—** टी. वी. पिक्चर देखना, गंदे दृश्य देखना, पागल, भिखारी, विकलांग को देख हँसी या मजाक उड़ाना।

**(3) नाक—** परफ्यूम, डिओ, फूल, इत्र सूंघना, सुगंधी साबुन-शेम्पू का उपयोग करना।

**(4) जीभ—** रस पूर्वक होटल में खाना, गालियाँ बोलना, ऊँची आवाज में बोलना, कंदमूल, केडबरी, आईसक्रीम, केक, कोल्ड-ड्रिंक का बहुत ज्यादा उपयोग करना।

**(5) स्पर्श—** अच्छे (Soft) बिस्तर में सोना, 1 घंटे तक या दिन में 2-4 बार स्नान करना, Swimming में जाना, पाउडर-क्रीम, लोशन आदि लगाना। बार-बार खाना, Fighting करना, मेक-अप करना, किसी के लिए बुरा सोचना।

### *इन्द्रिय रूपी सम्पत्ति का सदुपयोग हम कैसे करेंगे?*

1. जिनवाणी श्रवण करना, स्तवन-प्रतिक्रमण सुनना, मांगलिक सुनना। 2. संत दर्शन करना, जीवों की जीवदया पालने के लिए नीचे देखकर चलना। 3. सब्जी-तरकारी देखकर सुधारना, शारीरिक सौंदर्य और शरीर की खुशबू बढ़ाने हेतु किसी भी चीज का उपयोग नहीं करना। 4. जीवन चलाने हेतु निरासक्त बनकर खाना। 5. कंदमूल आदि नहीं खाना। 6. केक, केडबरी, कोल्ड-ड्रिंक का त्याग या विवेक रखना। 7. बड़ों और माता-पिता से मीठी मधुर वाणी में बोलना। 8. मित्रों और सहेली के साथ झगड़ा नहीं करना। 9. झूठ नहीं बोलना। 10. मेक-अप छोड़ना, स्नान की मर्यादा करना, सादगी से रहना-खाना, पीना, सोना। 11. बारह व्रत धारण करना, अभिगम का पालन करना, वंदना करना, नवकारसी आदि तप करना। 12. सर्व जीवों का भला सोचना। सब जीवों के कल्याण की भावना करना।

## साधना की गहराई

## छह काय का थोकड़ा

### *द्वारों के नाम—*

*1. नाम द्वार, 2. गौत्र द्वार, 3. वर्ण द्वार, 4. स्वभाव द्वार, 5. संस्थान द्वार, 6. योनि द्वार, 7. कुलकोड़ी द्वार, 8. जन्म-मरण द्वार, 9. अल्प-बहुत्व द्वार।*

| | 1. नाम द्वार | 2. गौत्र द्वार | 3. वर्ण द्वार | 4. स्वभाव द्वार | 5. संस्थान द्वार |
|---|---|---|---|---|---|
| 1. | इन्दि थावरकाय | पृथ्वीकाय | पीला | कठोर | मसूर की दाल के समान |
| 2. | बम्भी थावरकाय | अपकाय | लाल | ढीला/शीतल | पानी के बुलबुले के समान |
| 3. | सिप्पी थावरकाय | तेउकाय | सफेद | उष्ण | सुई और भाले की नोंक के समान |
| 4. | सुमति थावरकाय | वायुकाय | हरा | बजना | ध्वजा-पताका के समान |
| 5. | पयावच्च थावरकाय | वनस्पतिकाय | काला | अनेक प्रकार | अनेक प्रकार |
| 6. | जंगमकाय | त्रसकाय | नाना प्रकार | अनेक प्रकार | अनेक प्रकार |

## 6. योनि द्वार

| स्थावर की 52 लाख + | | त्रसकाय की 32 लाख = कुल 84 लाख | |
|---|---|---|---|
| **चार स्थावर की 28 लाख** | **वनस्पतिकाय की 24 लाख** | **तीन विकलेन्द्रिय की 6 लाख** | **पंचेन्द्रिय की 26 लाख** |
| पृथ्वीकाय की 7 लाख | प्रत्येक वन. की 10 लाख | बेइन्द्रिय की 2 लाख | नारकी की 4 लाख |
| अप्काय की 7 लाख | साधारण वन. की 14 लाख | तेइन्द्रिय की 2 लाख | देवता की 4 लाख |
| तेउकाय की 7 लाख | | चउरिन्द्रिय की 2 लाख | तिर्यंच पंचेन्द्रिय की 4 लाख |
| वायुकाय की 7 लाख | | | मनुष्य की 14 लाख |

## 7. कुलकोड़ी द्वार

| पाँच स्थावर की 57 लाख + | 3 विकलेन्द्रिय की 24 लाख + | पंचेन्द्रिय की 116 1/2 लाख = 197 1/2 | |
|---|---|---|---|
| पृथ्वीकाय की 12 लाख | बेइन्द्रिय की 7 लाख | जलचर की 12 1/2 लाख | नारकी की 25 लाख |
| अप्काय की 7 लाख | तेइन्द्रिय की 8 लाख | स्थलचर की 10 लाख | देवता की 26 लाख |
| तेउकाय की 3 लाख | चउरिन्द्रिय की 9 लाख | खेचर की 12 लाख | मनुष्य की 12 लाख |
| वायुकाय की 7 लाख | | उरपरिसर्प की 10 लाख | |
| वनस्पति की 28 लाख | | भुजपरिसर्प की 9 लाख | |

(नोट – कुलकोड़ी- कुलों के प्रकार को/भेद को कुलकोड़ी कहते हैं। एक प्रकार के रस-रूप के परमाणुओं से बने हुए हों, उन्हें कुल कहते हैं। भिन्न रस-रूपादि से बने हुए हों, उनके समूह को कुल कोड़ी कहते हैं।)

*8. जन्म-मरण द्वार—* अहो भगवन्! छह काया के जीव एक मुहूर्त में कितने जन्म-मरण करते हैं?

| | | जघन्य | उत्कृष्ट |
|---|---|---|---|
| 1. | चार स्थावर के जीव | 1 बार | 12,824 |
| 2. | सूक्ष्म वनस्पतिकाय के जीव | 1 बार | 65,536 |
| 3. | साधारण वनस्पतिकाय के जीव | 1 बार | 32,000 |
| 4. | प्रत्येक वनस्पतिकाय के जीव | 1 बार | 16,000 |
| 5. | बेइन्द्रिय के जीव | 1 बार | 80 |
| 6. | तेइन्द्रिय के जीव | 1 बार | 60 |
| 7. | चउरिन्द्रिय के जीव | 1 बार | 40 |
| 8. | असन्नी पंचेन्द्रिय के जीव | 1 बार | 24 |
| 9. | सन्नी पंचेन्द्रिय के जीव | 1 बार | 1 बार |
| निगोद के जीव नाड़ी के एक ठपके में 17 1/2 बार | | | |

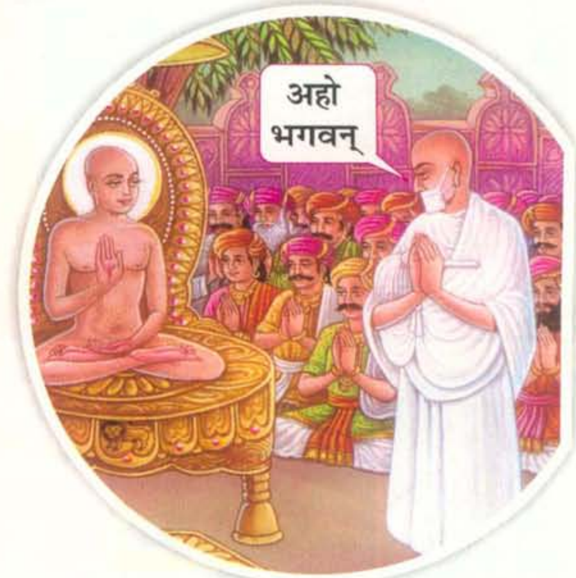


*8. अल्पबहुत्व द्वार—* सबसे कम त्रसकाय, उससे तेउकाय असंख्यात गुणा, उससे पृथ्वीकाय विशेषाधिक, उससे अप्काय विशेषाधिक, उससे वायुकाय विशेषाधिक, उससे सिद्ध भगवान अनन्त गुणा, उससे वनस्पतिकाय अनंतगुणा।

# इलाचीकुमार

इलावर्धन नगर में धनदत्त नाम का एक सेठ रहता था। लक्ष्मी की उस पर खूब कृपा थी। उसका व्यापार-व्यवसाय काफी दूर-दूर तक विस्तृत था और वह स्वयं न्याय-नीति तथा सत्यनिष्ठा के लिए प्रसिद्ध था। सेठ को एक अभाव था, और वह था पुत्र का। उसके कोई पुत्र न था। आखिर कई वर्षों पश्चात् एक पुत्र की प्राप्ति हुई। माता-पिता ने पुत्र का नाम इलापुत्र अथवा इलाचीकुमार रखा। पुत्र को पाकर पति-पत्नी दोनों बहुत प्रसन्न हुए। इलाचीकुमार युवा हो गया। वह माता-पिता का आज्ञाकारी और विनीत था। बुद्धि में भी वह विचक्षण और कुशाग्र प्रतिभा सम्पन्न था।

एक बार उसके नगर में एक नट-मंडली आई। इलाचीकुमार भी नट का तमाशा देखने गया। उस मंडली में मुखिया की एक षोड़षी पुत्री थी। वह रूप-लावण्य में तो सुन्दर थी ही, नट-कला में भी अत्यन्त प्रवीण थी। इलाचीकुमार उस पर मोहित हो गया। घर आकर उसने माता-पिता को स्पष्ट बता दिया कि वह नट-कन्या को ही जीवन-संगिनी बनाएगा, अन्य किसी से विवाह नहीं करेगा।

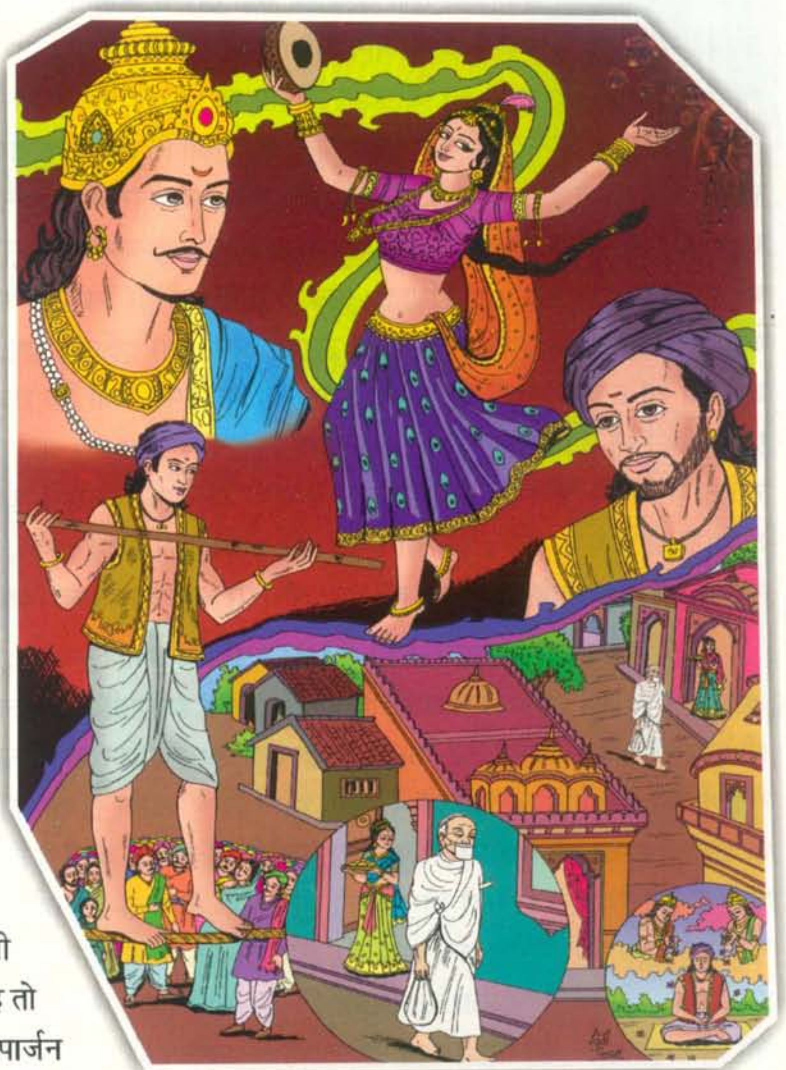

माता-पिता ने बहुत समझाया, अपनी जाति और समान कुल-शील वाली सुन्दर कन्याओं से विवाह करने का आग्रह किया, कुल-गौरव का वास्ता दिया, लेकिन इलाचीकुमार अपनी हठ पर अड़ा रहा। उसने माता-पिता की एक न मानी। यहाँ तक कह दिया कि मेरी इच्छा पूरी न हुई तो प्राण दे दूँगा। इकलौते पुत्र के हठ के सामने पिता को झुकना पड़ा। वह नट-मंडली के मुखिया के पास पहुँचा। उससे कहा—"नटराज! आप अपनी पुत्री का विवाह मेरे पुत्र के साथ कर दें, मैं आपको आपकी कन्या के बराबर तोलकर सोना दे दूँगा।" लेकिन नटराज ने यह सौदा मंजूर नहीं किया। उसने कहा—"पिता के धन पर आश्रित पुत्र को मैं अपनी कन्या नहीं दे सकता। यदि उसे मेरी पुत्री से विवाह ही करना है तो पहले वह हमारी नट-विद्या सीखे, फिर इस कला से धन का उपार्जन करे और उस धन से हमारी पूरी जाति को भोज आदि देकर प्रसन्न करे, तब उसके साथ मेरी पुत्री का विवाह हो सकता है।" नटराज की इस शर्त को सुनकर धनदत्त बहुत निराश हुआ। घर आकर सब बात कही और पुत्र को फिर समझाया; लेकिन इलाचीकुमार का तो रोम-रोम नट-कन्या के मोह में डूबा हुआ था, वह पिता की शिक्षा को नहीं सुनता है। उसने तो सिर्फ नटराज की शर्त ही सुनी और उसे पूरा करने का दृढ़ निश्चय कर दिया।

एक रात वह बिना किसी को बताये घर से निकल गया और नट-मंडली में जा मिला। बड़े मनोयोग से उसने नट-विद्या-सीखी और शीघ्र ही कुशल हो गया। वह नट-मंडली के साथ-साथ गाँव और नगरों में घूमने लगा तथा अपनी कला का प्रदर्शन करने लगा। उसका नाम दूर-दूर तक विख्यात हो गया था और अब उसे कला-प्रदर्शन के लिए धनिकों तथा राजाओं के निमंत्रण भी मिलने लगे।

एक बार एक राजा के निमंत्रण पर वह अपनी कला दिखाने पहुँचा। साथ में वह नट-कन्या भी थी और नट-मंडली के अन्य सदस्य भी थे। इलाचीकुमार को राजा से प्रभूत पुरस्कार मिलने की आशा थी। उसे विश्वास था कि अपनी कला द्वारा राजा से इतना धन प्राप्त कर लूँगा कि नटराज की शर्त पूरी करके उसकी कन्या से विवाह कर सकूँ।

खेल शुरू हुआ। इलाचीकुमार बाँस पर चढ़कर अपनी अद्‌भुत कला का प्रदर्शन करने लगा। नीचे खड़ी नट-कन्या उसका उत्साह बढ़ा रही थी। हजारों की भीड़ उसकी कला पर मुग्ध हो रही थी। लेकिन राजा की दृष्टि ज्यों ही नट-कन्या पर पड़ी, वह उस पर मोहित हो गया। नट-कन्या और इलाचीकुमार के हाव-भावों से वह समझ गया कि जब तक यह नट नहीं मरेगा, तब तक नट-कन्या मेरे हाथ नहीं लगेगी। उसने मन-ही-मन नट-कन्या को पाने का दृढ़ निश्चय कर लिया। यहाँ तक सोच लिया कि खेल ही खेल में इस नट के प्राण ले लूँगा।

इलाचीकुमार एक प्रहर तक बाँस पर चढ़ा अपनी कला दिखाता रहा। इसके बाद वह नीचे उतरा और राजा को सलाम किया। उसका अभिप्राय राजा से पुरस्कार पाना था। लेकिन राजा उसे पुरस्कार देना कब चाहता था? वह तो उसके प्राणों का बलिदान चाहता था। उसने कह दिया—"अभी तो मुझे तुम्हारी कला में आनन्द ही नहीं आया, पुनः दिखाओ।" इलाचीकुमार दुबारा बाँस पर चढ़ा। प्रहर भर तक फिर कला दिखाई और पुनः पुरस्कार की याचना की। फिर उसे राजा का यही जवाब मिला। तीसरी बार कला दिखाकर जब उसने पुरस्कार माँगा, तब भी यही उत्तर राजा की ओर से मिला। अब तो इलाचीकुमार खिन्न हो गया। तीन प्रहर के कठोर परिश्रमपूर्वक कला-प्रदर्शन से उसका अंग-अंग दर्द कर रहा था। अब उसके शरीर में शक्ति बाकी नहीं रह गई थी। वह यह भी समझ गया कि राजा नट-कन्या के प्रति आकर्षित है। इसीलिए वह बार-बार आनन्द न आने की बात कह रहा है। वह चाहता है कि मैं बाँस पर से गिरकर धराशायी हो जाऊँ, जिससे वह नट-कन्या को आसानी से हथिया सके। इलाचीकुमार की इच्छा अब प्रदर्शन की नहीं थी, लेकिन नट-कन्या के उत्साहित करने पर वह पुनः बाँस पर चढ़ा और कला दिखाने लगा।

तभी उसकी दृष्टि एक निस्पृह संत पर पड़ी। वे श्रमण एक सद्‌गृहस्थ के घर से आहार ले रहे थे। आहार देने वाली गृहिणी अत्यन्त रूपवती और रत्नाभूषणों से लदी थी। उसके रूप के सामने नट-कन्या का रूप तो अत्यन्त हीन था। फिर भी वे मुनि उस गृहिणी की ओर देख भी नहीं रहे थे। नीचे दृष्टि किये आहार ले रहे थे। यह दृश्य देखते ही इलाचीकुमार की विचारधारा पलटी। वह सोचने लगा—कहाँ ये निस्पृह श्रमण और कहाँ मैं। ये देवांगना सरीखी सौन्दर्य की मूर्ति की ओर देख भी नहीं रहे हैं और मैं एक नट-कन्या के पीछे पागल बना हुआ हूँ। अपनी जिन्दगी का अनमोल समय मैंने यों ही इस शरीर-सौन्दर्य में आसक्त बनकर खो दिया। आत्मिक सौन्दर्य—आत्मा के सद्‌गुणों की ओर दृष्टिपात न किया। अब तो आत्मा के स्वरूप में रमण करूँ, आत्म-चिन्तन करूँ। बस, इलाचीकुमार के मन में चरित्र के भाव उदित हुए, भावधारा ऊर्ध्वमुखी हो गई, बाँस पर ही उसका शरीर स्थिर हो गया, कषायों का मूलोच्छेद हुआ और उसे वहीं कैवल्य की प्राप्ति हो गई।

वीतराग दशा में वह बाँस से उतरा और उसी रंगमंच से उसने जन-कल्याण का उपदेश दिया। उस उपदेश से नट-कन्या तथा राजा के हृदय में भी वैराग्य-भाव जागृत हो गया। उन्हें भी कैवल्य की प्राप्ति हुई। इस प्रकार नट-विद्या का रंगमंच आध्यात्मिक रंगमंच बन गया और तीनों ही संसार-बंधन से मुक्त हो गये।

## सरगम

(तर्ज—साफ किया न.....)

कितनी बार जगाया मन को,
फिर-फिर ये सो जाता है।
जग की अंधियारी गलियों में,
फिर-फिर ये खो जाता है॥टेक॥
थोड़ा-सा वैभव पाकर के ये,
कितना-कितना इतराता।
सुख तो यह बस सपना है,
जो आता है और है जाता।
बनकर अभिमानी-अज्ञानी...2,
फिर-फिर ये हो जाता है॥1॥
यौवन की मदहोशी में,
मदहोश बना इठलाता है।
अनमोल ये जीवन बीत रहा,
फिर भी समझ न पाता है।
दु:ख द्वन्द्वों के बीजों को,
फिर-फिर से बो जाता है॥2॥
जिनवाणी सुन ले सुनता रहे तो,
परिवर्तन निश्चित आयेगा।
सोने वाला रोने वाला,
मन ये फिर जग जायेगा।
कर्म विजय की राह पर चलकर,
कर्म विजयी हो जाता है॥3॥

# J FOR JAI JINENDRA जय जिनेन्द्र

## जय जिनेन्द्र का अर्थ क्या है?

**जय+जिन+इन्द्र**

**देवलोक के इन्द्रों से भी महान्
अनंत जिनेश्वर भगवान की जय हो।**

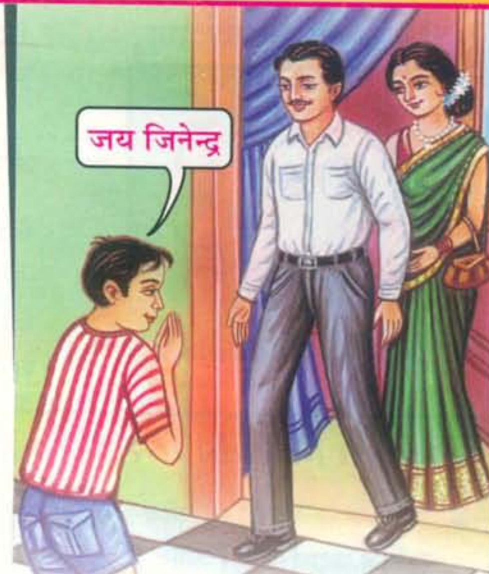


### जय जिनेन्द्र बोलने से क्या लाभ होता है?

1. जय जिनेन्द्र बोलने से अनंत जिनेश्वर भगवान की जय होती है।
2. जय जिनेन्द्र शब्द, हमें जैन होने की याद दिलाता है।
3. एक बार जय जिनेन्द्र बोलने से अनंत कर्मों की निर्जरा होती है।
4. जय जिनेन्द्र बोलने से जैन धर्म की शान बढ़ती है।
5. कषाय घटती है, शांति एवं ज्ञान बढ़ता है।
6. भविष्य में जिनशासन मिलने की संभावना रहती है।

*"जय" बोलने से मन को शांति मिलती है...
"जिनेन्द्र" बोलने से शक्ति मिलती है...
"जय जिनेन्द्र" बोलने से भक्ति मिलती है...
भक्ति से महावीर मिलते हैं...
और महावीर मिलते हैं तो "पापों से मुक्ति" मिलती है।
इसलिये जब भी मिले "जय जिनेन्द्र" बोलो...*

**सदा मीठी और नम्र वाणी
बोलने का प्रेरक बल
पावर हाउस यानि जय जिनेन्द्र**

### जय-जिनेन्द्र कब बोलना चाहिए?

- सुबह उठकर घर के सभी बड़ों को हाथ जोड़कर, सिर झुकाकर जय जिनेन्द्र कहना चाहिए।
- Phone पर Hello ना बोलते हुए जय जिनेन्द्र बोलना चाहिए।
- रात को सोते समय सभी को जय जिनेन्द्र कहकर सोना चाहिए।
- घर पर आए मेहमानों से मिलते समय जय जिनेन्द्र बोलना चाहिए।

## सरगम

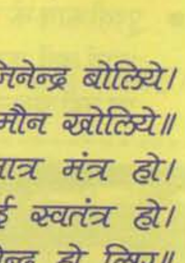

### जय जिनेन्द्र प्रार्थना

*जय जिनेन्द्र, जय जिनेन्द्र, जय जिनेन्द्र बोलिये।
जय जिनेन्द्र के स्वरों से, अपना मौन खोलिये॥
जय जिनेन्द्र ही हमारा, एक मात्र मंत्र हो।
जय जिनेन्द्र बोलने को, हर कोई स्वतंत्र हो।
जय जिनेन्द्र बोल-बोल, खुद जिनेन्द्र हो लिए॥
पाप छोड़, धर्म जोड़, यह जिनेन्द्र देशना।
कर्म बन्ध को तू तोड़, यह जिनेन्द्र देशना।
जाग, जाग अब रे चेतन, काल बहुत सो लिए॥
हे जिनेन्द्र, ज्ञान दो, मुक्ति का वरदान दो।
कर रहे हैं प्रार्थना, प्रार्थना पर ध्यान दो।
अब तुम्हारी ही शरण, जनम मरण तोड़िये॥*

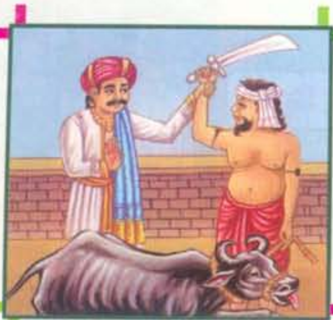

# जीवदया का अर्थ क्या है?

**जीवदया अर्थात् जीवों की रक्षा करना, जीवों को बचाना और जीवों को नहीं मारना।**

हमारे चारों तरफ बड़ी संख्या में जीवों का जाल फैला हुआ है। ऐसा कोई स्थान नहीं जहाँ कोई भी जीव न हो, उन जीवों को बचाना ही जैनधर्म का मूल है।

## *जीवदया किसकी करनी चाहिए?*

- **पृथ्वीकाय**—मिट्टी के जीव—नमक, खदान के पत्थर, सोना, खनिज पदार्थ, मिट्टी आदि।
- **अप्काय**—पानी के जीव—वर्षा, ओस, बर्फ, समुद्र, नदी आदि का पानी।
- **तेउकाय**—अग्नि के जीव—बिजली, गैस, लाईट, फैन आदि।
- **वायुकाय**—हवा के जीव हैं।
- **वनस्पतिकाय**—पेड़-पौधों के जीव—फल, फूल, पत्ते आदि।
- **विकलेन्द्रिय**—बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय के जीव।
- **तिर्यंच पंचेन्द्रिय**—जलचर, स्थलचर, खेचर, उरपरिसर्प, भुजपरिसर्प, ये पाँच भेद तिर्यंच पंचेन्द्रिय के हैं।
- **मनुष्य**—मनुष्य भी पंचेन्द्रिय है। इन सब जीवों की जीवदया करनी चाहिए।

## *जीवदया पालने से क्या लाभ होता है ?*

- जीवों की दया पालने से अनंत कर्मों की निर्जरा होती है।
- मोक्ष के अनंत सुख मिलते हैं।
- हमारा यह भव और अगला भव, दोनों दु:ख से बच जाते हैं। सुख में वृद्धि होती है।
- हमारे अनंत जन्म मरण कम हो जाते हैं।

## *जीवदया का पालन क्यों करना चाहिए ?*

- जीवदया जैन धर्म का मूल है।
- जैसे मेरी आत्मा है, वैसे ही दूसरे जीवों की भी आत्मा है। मुझे दु:ख होता है, वैसा ही उन्हें भी दु:ख होता है।
- जो जीव जीवदया नहीं पालता, हिंसा करता रहता है, उसे नरक या तिर्यंच के दु:ख सहन करने पड़ते हैं।
- हमें कान, आँख, नाक मिले हैं, वह अनंतकाल तक जीवदया पालने का फल है।

## *जीवदया का पालन कैसे करेंगे ?*

- पृथ्वीकाय के जीवों की दया पालने के लिए जमीन फोड़ने, खोदने का कार्य नहीं करना, सचित्त नमक का त्याग करना और खुदी हुई मिट्टी पर नहीं चलना।

- अप्काय के जीवों की दया पालने के लिए स्नान का त्याग करना या अल्प पानी का उपयोग करना और होली आदि नहीं खेलना। पानी का अपव्यय नहीं करना। नल खुला नहीं छोड़ना, समुद्र, नदी आदि में जाकर स्नान नहीं करना।
- अनछाना पानी काम में नहीं लेना।

- तेउकाय के जीवों की दया पालने के लिए 1. Electric switch बार बार On-Off नहीं करना। 2. Computer, T.V., Mobile, Video games का उपयोग नहीं करना। 3. दिवाली में पटाखे नहीं जलाना। 4. गर्म वस्तुएँ खाने का आग्रह नहीं करना। 5. होली न जलाएँ न जलते हुए देखें।

- वायुकाय जीवों की दया पालने के लिए– 1. खुले मुँह बोलने की मर्यादा रखें। 2. पंखे, कूलर, ए.सी. आदि का अनावश्यक उपयोग न करें। 3. तालियाँ न पीटें। 4. नृत्य, डांडियाँ, डिस्को आदि न करें। 5. कपड़े न झटके।

- वनस्पतिकाय के जीवों की दया पालने के लिए जमीकंद का त्याग करना चाहिए। **आठम-चौदस-पक्खी** के दिन लिलोतरी (हरी सब्जी) का त्याग करना चाहिए। पेड़-पौधों को तोड़ना नहीं चाहिए। हरी घास पर चलना नहीं। सलाद व पान का उपयोग कम करना चाहिए। सचित्त फूल का उपयोग करना नहीं।

- बेइन्द्रिय जीवों की दया पालने के लिए शंख-सीप आदि घर में Decoration के लिए रखना नहीं।

- तेइन्द्रिय जीवों की दया पालने के लिए नीचे देख कर चलना ताकि चींटी, मकोड़े, जूं आदि पैर के नीचे न आ जाए।

- चौरिन्द्रिय जीवों की दया पालने के लिए मच्छर, मक्खी, तिलचट्टे आदि जीवों को मारने के लिए बेगोन, स्प्रे आदि का प्रयोग करना नहीं। बाजार में मिलते Electric रेकेट लाने नहीं।

- किसी भी जीवों को मारना नहीं। पंचेन्द्रिय जीवों की हिंसा करके जो-जो चीजें बनती है–जैसे कि– Cosmetics, Nailpolish, Lipstick, Powder, Cream, Lotion, Leather Belt, Soap, Fur purse-coat, का हमें उपयोग नहीं करना चाहिए।

*खाने में जिन वस्तुओं पर रेड मार्क ● हो ऐसी आयटम छोड़ देनी चाहिए।*
*ग्रीन मार्क ● वाली आयटम बराबर जाँच कर खानी-खरीदनी चाहिए।*

## साधना की गहराई

## श्रावक जी के वचन व्यवहार

1. श्रावकजी थोड़ा बोले, 2. श्रावकजी आवश्यकता होने पर बोले, 3. श्रावकजी मीठा बोले, 4. श्रावकजी चतुराई पूर्वक अवसर के अनुसार बोले, 5. श्रावकजी अहंकार रहित वचन बोले, 6. श्रावकजी मर्म खोलने वाले एवं आघातजनक वचन नहीं बोले, 7. श्रावकजी सूत्र-सिद्धांत के न्याय युक्त वचन बोले, 8. श्रावकजी सभी जीवों के लिए हितकारी वचन बोले।

## स्मरण रखने योग्य बातें

- जीव बचेंगे जगत् बचेगा, जगत् बचा तो जीवन बचेगा।
- जो जीव रक्षा करता है, वो धर्म की रक्षा करता है। धर्म की रक्षा करने वालों की धर्म रक्षा करता है। धर्मो रक्षति रक्षितः।
- मैं ऐसा कोई कार्य नहीं करूँगा, जिससे मेरा जैनधर्म कलंकित होवे। मेरा धर्म निष्कलंक था और रहेगा।

# धर्मरुचि अणगार

प्राचीनकाल में **चम्पा** नाम की नगरी में **तीन ब्राह्मण भाई** रहते थे। वे बहुत सम्पन्न, चार वेदों के ज्ञाता थे। उन तीन भाइयों की पत्नियों के नाम क्रमशः **नागश्री, भूतश्री** और **यशश्री** था। वेतीनों खूब आनन्द और सुख से रहती थीं।

एक दिन तीनों भाइयों ने तय किया कि तीनों के घर बारी-बारी से भोजन बनाकर सभी साथ में बैठकर भोजन करेंगे। **एक बार नागश्री की खाना खिलाने की बारी थी।** उसने बहुत प्रकार के पकवान बनाये। उसने रसोई में ऋतु के अनुसार **तुम्बी की सब्जी** बनाई। रसोई बनाने की हड़बड़ाहट में वह तुम्बी चखना भूल गई। सब्जी तैयार होने के बाद उसकी एक बूँद हाथ में लेकर चखी तो कड़वी और खाने में जहर जैसी लगी।

"अब क्या करूँ? अभी सब आयेंगे और सब्जी चखेंगे, तो मेरा मजाक उड़ायेंगे। मुझे इस सब्जी को फैंककर दूसरी सब्जी बनानी चाहिए।" ऐसा सोचकर वह अपने काम में व्यस्त हो गई।

उस समय चम्पा नगरी में **धर्मघोष** नाम के आचार्य अपने शिष्य समुदाय के साथ पधारे थे। उनके **धर्मरुचि** नाम के एक उग्र तपस्वी शिष्य थे। ये **मास-मासखमण** के अति कठोर तपश्चर्या करते थे। आज धर्मरुचि के मासखमण तप के पारणे का दिन था। इसलिए वे अपने **गुरु की आज्ञा लेकर चम्पा नगरी में गोचरी लेने एक घर से दूसरे घर घूमते-घूमते नागश्री ब्राह्मणी के घर पहुँच गये।** धर्मरुचि अणगार को अपने आँगन में आते देखकर नागश्री को गुप्त आनन्द की अनुभूति हुई। उसने अपनी भूल छुपाने के लिए कड़वी तुम्बी की पूरी सब्जी उन मुनि के पात्र में बोहरा दी। इतना आहार मेरे लिए पर्याप्त होगा, यह सोचकर धर्मरुचि अणगार अपने स्थान पर वापस आ गये।

मुनि धर्मरुचि ने गोचरी में लाई हुई सब्जी गुरुदेव धर्मघोष मुनि को बताई। गुरु को सब्जी की गन्ध पर शंका हुई और एक बूँद चखकर उन्होंने उसे कड़वी और न खाने जैसी जानकर धर्मरुचि अणगार को कहा-"यदि आप यह सब्जी खाओगे तो जरुर मृत्यु हो जाएगी। इसलिए हे मुनिराज! आप इस सब्जी को अचित्त भूमि पर यतनापूर्वक परठ दो और दूसरा निर्दोष आहार लेकर आ जाओ।"

गुरु आज्ञा पाकर धर्मरुचि अणगार ने दूर जाकर निर्दोष भूमि देखकर एक बूँद सब्जी जमीन पर डाली। सब्जी की भारी गंध से तुरन्त ही वहाँ **सैंकड़ों चींटियाँ आ गईं।** उन चीटिंयों ने जैसे ही सब्जी खाई, वे तुरन्त कालधर्म को प्राप्त हुईं। धर्मरुचि अणगार यह दृश्य देखकर कांपने लगे। उन्होंने सोचा-**'यदि सब्जी की एक बूँद से सैंकड़ों चिंटियाँ मर गई, तो जब मैं ये पूरी सब्जी परठ दूँगा तो कितनी हिंसा होगी? मुझे घोर हिंसा का पाप लगेगा।'** जैन मुनि दयालु होते हैं, दूसरों के दोष की ओर दृष्टि भी नहीं डालते और अहिंसा पालन के लिए प्राण देने में भी नहीं हिचकिचाते। उसी तरह धर्मरुचि अणगार ने मन से भी नागश्री का जरा भी दोष नहीं देखा और सोचा कि **जहाँ एक भी चींटी की मृत्यु न हो, वैसा निरवद्य स्थान तो मेरा पेट ही है। इसलिए मैं ये सारी सब्जी ग्रहण कर लूं तो कई जीवों की प्राण रक्षा होगी। ऐसा सोचकर उन्होंने पूरी सब्जी स्वयं ही ग्रहण कर ली।**

**कड़वी और जहरीली सब्जी खाने के कारण उनके शरीर में वेदना उत्पन्न हुई। वह वेदना असह्य थी, फिर भी उन्होंने समभाव से सहन किया। उन्होंने जीवन पर्यंत के पापों की आलोचना, प्रतिक्रमण किया और समाधिपूर्वक कालधर्म (मृत्यु) को प्राप्त हुए। धर्मरुचि अणगार सवार्थ सिद्ध विमान में देव के रूप में उत्पन्न हुये।**

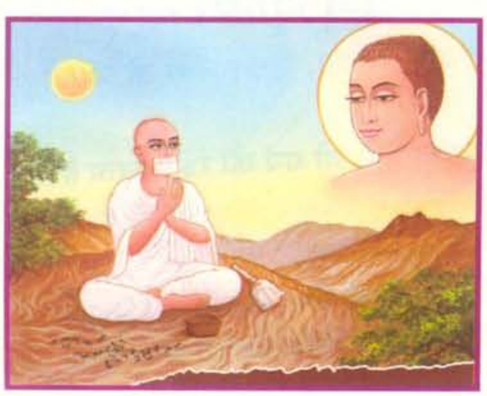

धर्मरुचि को आने में देर होते देख गुरु ने अपने दूसरे शिष्यों को उनकी खोज करने भेजा। खोज करते-करते शिष्यों को, धर्मरुचि अणगार कालधर्म को प्राप्त हुए, ऐसी जानकारी मिली। यह समाचार उन्होंने अपने गुरु को दिए। गुरु ने अपने ज्ञान द्वारा जान लिया कि यह कृत्य नागश्री का है। धीरे-धीरे लोगों को इस बात की खबर मिली और लोग नागश्री को धिक्कारने लगे। अपनी भूल छुपाने से बेइज्जती हुई। तीनों भाइयों ने मिलकर उसे घर से बाहर निकाल दिया।

धर्मरुचि अणगार की आत्मा सर्वार्थसिद्ध देवलोक से च्यवकर महाविदेह क्षेत्र में मनुष्य भव पाकर सब कर्म क्षय कर सिद्ध (मोक्ष) होगी।

**धन्य है ऐसे उत्तम जैन मुनियों को जिन्होंने अनेक जीवों की रक्षा के लिए अपने प्राण न्यौछावर किए और मोक्ष प्राप्त करेंगे।**

# K FOR ➡ KANDMOOL कंदमूल

**कंदमूल यानि क्या?**

- जिसकी जमीन के नीचे टेढ़ी वृद्धि होती है उसे कंद कहते है। और जिसकी ज़मीन के नीचे सीधी (खड़ी) वृद्धि होती है उसे मूल कहते हैं।
- जो ज़मीन के नीचे ऊगते है, जिसके समान भंग होते है, जिसमें गोल चक्र दिखाई देते है, जिसमें रेशे (तंतु) नहीं होते है, उसे कंदमूल कहते हैं।

**कंदमूल के नाम :**

आलू, प्याज, लहसुन, गाजर, चुकन्दर (Beet-root), मूली, अदरक, जमींकंद, मीठे कंद, etc.

**इस कंदमूल की सब्जी को क्या हमें खाना चाहिए?**

**नहीं, नहीं, नहीं, कभी नहीं खाना चाहिए।**

**लेकिन क्यों नहीं खाना चाहिए?**

क्योंकि कंदमूल में एक शरीर में अनंत जीव हैं।

**एक शरीर में अनंत जीव यानि क्या? ये तो हमें समझ में नहीं आया?**

अनंत यानि infinite जिसे हम न देख सकते है, न गिन सकते हैं। उसे सिर्फ केवली भगवान ही देख सकते हैं। इस जगत में 4 गति में से, तिर्यंच गति में वनस्पतिकाय के जीवों में कंदमूल जीवों का समावेश होता है। उसका दूसरा नाम निगोद भी है। 'नि' यानि धरती अर्थात् धरती ही जिनकी गोद है, उसे निगोद कहते हैं।

## निगोद में अनंत जीव

**कंदमूल खाने से क्या हानि होती है?**

1. अनंत जीवों के साथ वैर का बंधन होता है। 2. अनंत जीवों की हिंसा होती है। उससे असाता वेदनीय कर्म का बंध होता है। 3. कंदमूल खाने से स्वभाव गरम होता है। 4. दुर्गति में जाना पड़ता है। कंदमूल में ही बार-बार जन्म लेना पड़ता है। 5. मन अशांत हो जाता है। जिससे एकाग्रता कम होती है एवं याददाश्त कम हो जाती है। 6. आठ कर्म का बंध होता है।

**कंदमूल न खाने से क्या लाभ होता है?**

1. भगवान की आज्ञा का पालन होता है। 2. अनंत जीवों को अभयदान मिलता है। 3. मन शांत रहता है, जिससे स्वभाव ठंडा रहता है।

- इस दुनियाँ में जीव एक गति में से दूसरी गति में क्यों जाते हैं ? इस दुनियाँ में लोगों को दु:ख क्यों आता है ? दुनियाँ में लोगों को रोग क्यों आते हैं ? उसका मुख्य कारण है कषाय.....
- कषाय यानि राग और द्वेष। कषाय यानि क्रोध, मान, माया, लोभ। राग का रूप है माया और लोभ। द्वेष का रूप है क्रोध और मान।

## कषाय कितने है? कषाय चार हैं

1. **क्रोध**-यानि गुस्सा करना। 2. **मान**-यानि अभिमान करना। 3. **माया**-यानि कपट करना। 4. **लोभ**-यानि असंतोष

**कषाय का अर्थ :**

- जिससे संसार की वृद्धि होती है, वह कषाय है।
- जिससे कर्मों की खेती होती है, उसे कषाय कहते है।

**जिसकी आत्मा से सब कषाय निकल जाते हैं, वह वीतरागी बन जाता है। उसे ही भगवान कहते है, उन्हें ही मोक्ष मिलता है।**

### कषाय करने से हमें क्या हानि होती है?

1. कषाय करने से अपने अनंत भव बढ़ जाते हैं।
2. इस भव में लोगों के साथ अपना व्यवहार खराब हो जाता है।
3. तीव्र कषाय में अगर आयुष्य का बंध हो जाए तो परभव में नरक या तिर्यंच गति में जाना पड़ता है।
4. धर्म करने में मन नहीं लगता है। मन अशांत होने के कारण पढ़ाई भी याद नहीं रहती है।
5. लोगों का हमारे ऊपर से विश्वास उठ जाता है।
6. हमारे साथ कोई बात नहीं करता है।
7. हमें हमारी इच्छा अनुसार कोई वस्तु नहीं मिलती।

### कषाय से बचने के लिए क्या करना चाहिए?

क्रोध को दूर करने के लिए शांति रखनी।
*(बड़ों के सामने ऊँची आवाज में नहीं बोलना)*

मान को दूर करने के लिए नम्रता रखनी। *(विनय बढ़ाना)*

माया को दूर करने के लिए सरलता रखनी।
*(जैसा बोले वैसा करना)*

लोभ को दूर करने के लिए इच्छा घटानी।
*(जो अपने पास हो, उसमें संतोष रखना)*

- कषाय की वजह से जीव 4 गति में परिभ्रमण करता है।
- कषाय आत्मा के गुणों को नाश करने वाला जहर है।

कषाय रूपी पतंग की डोर खींच लो भाई। यह हमें मोक्ष नहीं नरक पहुँचाता है।

Keep your mind cool - आपके दिमाग को ठण्डा रखो

कषाय रूपी जहर से सब मरते है।
कषाय रूपी आग में सब जलते है।
कषाय रूपी सर्प सद्गुणों को डस लेते है।
कषाय रूपी कोयले आत्मा को कर्मों से मलिन करते है।

### क्रोध आ जाये तो उससे बचने के लिए क्या करना चाहिए?

1. स्थान परिवर्तन कर लेना चाहिए।
2. दर्पण में अपना चेहरा देखना चाहिए।
3. धोवन पानी पी लेना चाहिए।
4. उल्टा नवकार गिनना चाहिए।
5. मौन हो जाना चाहिए।
6. कर्म बंध से डरना चाहिए।

## चार कषायों के 16 भेद होते हैं, जिसे चित्र के द्वारा स्पष्ट कर रहे हैं—

### क्रोध

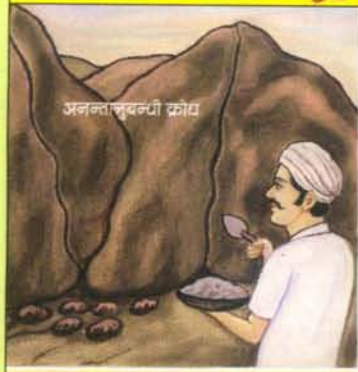


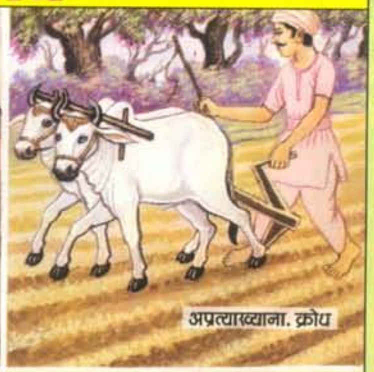


अनन्तानुबन्धी क्रोध : पर्वत में दरार पड़ने जैसा होता है, पर्वत में दरार पड़ने के बाद वह मिट नहीं सकती है।

अप्रत्याख्याना. क्रोध : हल आदि से जमीन में पड़ी दरारें वर्षा आने से मिट जाती है। वैसे ही यह क्रोध लम्बे समय बाद शांत हो जाता है।

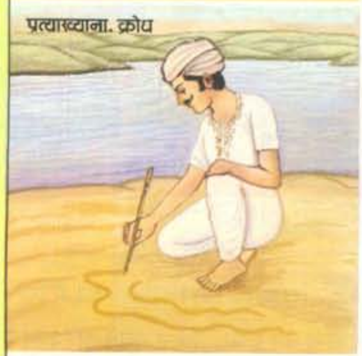


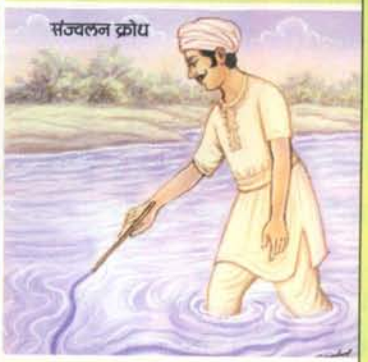


प्रत्याख्याना. क्रोध : रेत में रेखा खींचने तुल्य होता है जो पवन आने से मिट जाती है।

संज्वलन क्रोध : पानी में रेखा खींचने तुल्य होता है। जो शीघ्र ही मिट जाती है।

### मान

अनन्तानुबन्धी मान— पत्थर के स्तंभ तुल्य होता है, जो कभी नमता नहीं है।

अप्रत्याख्याना. मान— हड्डी तुल्य होता है, जो बहुत मालिश आदि करने पर थोड़ा झुक जाता है।

प्रत्याख्याना. मान— लकड़ी के स्तंभ तुल्य होता है, जो प्रयत्न करने पर कुछ समय बाद झुक जाता है।

संज्वलन मान— बेंत की लकड़ी के तुल्य होता है, जो आसानी से झुक जाता है

### माया

अनन्तानुबन्धी माया : बाँस के पेड़ के मूल जमीन में होते हैं। वे बहुत ही वक्र गांठ गठीले होते हैं। उसी तरह इस माया वाले का हृदय भी गांठों से भरा रहता है।

भेड़ के सींग तुल्य होती है। ये कठिन परिश्रम के बाद सरल सीधे होते हैं।

प्रत्याख्याना. माया : बैल के मूत्र की धार जैसी यह वक्रता वाली माया होती है।

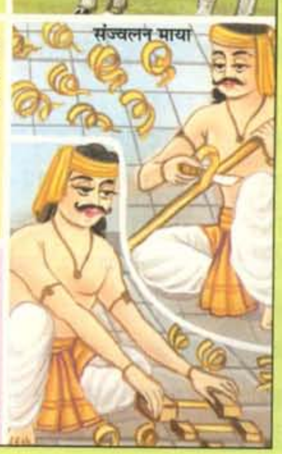


संज्वलन माया : बाँस का छिलका आसानी से सीधा हो जाता है।

### लोभ

अनन्तानुबन्धी लोभ : किरमिची का रंग जैसा पक्का रंग होता है जो बहुत ही मुश्किल से छूटता है।

अप्रत्याख्याना. लोभ : बैलगाड़ी की काली मली जो कपड़े पर लगने के बाद वर्षभर बार-बार धोने से जाती है।

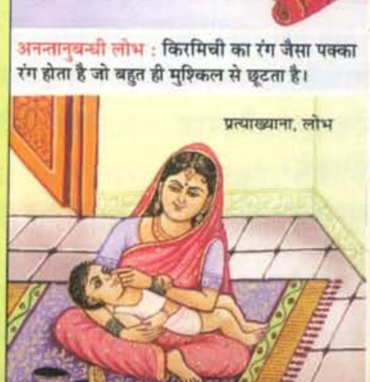

प्रत्याख्याना. लोभ : यह आँखों में लगाने का काजल जैसे रंग तुल्य लोभ है। जो साधारण प्रयत्न से मिट सकता है।

संज्वलन लोभ : हल्दी के रंग तुल्य कच्चा होता है, धूप लगने पर दूर हो जाता है, उसी तरह यह लोभ जल्दी नष्ट होता है।

# सनत् कुमार चक्रवर्ती (कर्म)

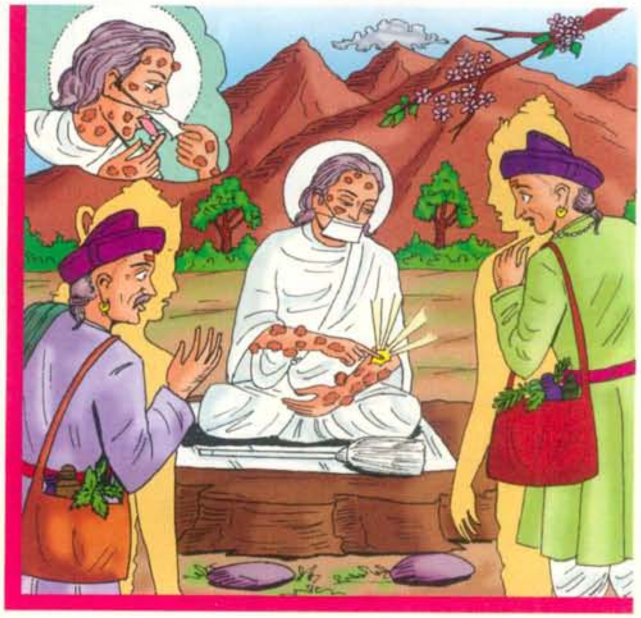

हस्तिनापुर नगर में राजा अश्वसेन का राज था। उनकी रानी सहदेवी की कुक्षि से एक सुरूपवान पुत्र का जन्म हुआ, जिसका नाम सनत्कुमार रखा गया। समय के साथ सनत्कुमार बड़ा होने लगा। अल्पकाल में ही वह अनेक विद्याओं में निपुण बन गया, बहत्तर कलाओं का विशेषज्ञ बन उसने युवावस्था में प्रवेश किया।

पिता राजा अश्वसेन ने अपने पुत्र को योग्य हुआ जानकर सिंहासन पर बिठाकर, राज्य-भार सौंप दिया और अपनी रानी सहदेवी के साथ दीक्षित हो गए। अनुक्रम से चक्र आदि चौदह रत्न प्रकट होने पर सनत् ने पूर्व चक्रवर्तियों की भाँति भरत क्षेत्र के छह ही खंडों पर विजय प्राप्त कर, चक्रवर्ती-पद ग्रहण किया।

एक बार देवराज शक्रेन्द्र की देव-सभा जुड़ी हुई थी। नृत्य-संगीत हो रहा था। तभी वहाँ संगमदेव का आगमन हुआ। संगमदेव इतना रूपवान था कि देव-सभा के समस्त देव उसके उस अनुपम रूप-लावण्य को विस्मय से एकटक निहारने लगे। उसके चले जाने पर देव-सभा के सभी देवताओं ने शक्रेन्द्र से पूछा-"महाभाग! क्या इस देव जैसे अनुपम शारीरिक सौन्दर्य के धारक और भी कोई इस लोक में हैं?"

शक्रेन्द्र ने बताया-"इससे भी अधिक रूपवान इस लोक में विद्यमान हैं। वह भी देव नहीं अपितु मनुष्य! चक्रवर्ती सनत्कुमार रूप-सौन्दर्य में धरा एवं सुरलोक दोनों में अद्वितीय हैं।"

देव-सभा के विजय एवं वैजयन्त नाम के दो देवों को शक्रेन्द्र की इस बात पर विश्वास नहीं हुआ और उन्होंने इसकी जाँच करने का निश्चय कर लिया।

दोनों देवों ने अतिवृद्ध ब्राह्मणों का रूप धारण किया और हस्तिनापुर के महल में पहुँचे। द्वारपाल से चक्रवर्ती के दर्शनों की इच्छा प्रकट की। द्वारपाल ने कहा-"आप राज्यसभा में महाराज से भेंट कर लीजिएगा।"

ब्रह्मवेशी देवताओं ने कहा-"भैया! हम तो बहुत दूर से आए हैं। जवानी में महाराज के रूप की प्रशंसा सुनकर चले थे, रास्ता पार करते-करते वृद्ध हो गए हैं। जैसे भी हो, हमें उनके रूप के एक बार दर्शन करा दो।"

ब्राह्मणों की बात पर द्वारपाल को भी विचार आया। उसने सूचना भिजवा दी। अन्दर से स्वीकृति मिल गई। दोनों वृद्ध ब्राह्मण धीरे-धीरे चलकर चक्री के निकट पहुँचते हैं। तेल-मर्दन कराते, उबटन लगवाते सनत् चक्री स्नान की तैयारी में थे। देह दम-दम दमक रही थी। ब्राह्मणों ने देखा उन्हें। बोले-"अनुपम, असाधारण, अप्रतिम सौंदर्य!" महाराज सनत्कुमार बोले-"विप्रदेव! अभी क्या रूप है? अलंकृत होकर राजसभा में राज-सिंहासन पर बैठूँ तब आइए और देखिएगा मेरे रूप-सौन्दर्य को।"

चक्री अपने शरीर-सौन्दर्य पर फूले हुए स्नानागार की ओर बढ़ गए। ब्राह्मण देव भी धीमे-धीमे कदम रखते हुए राजमहल से बाहर निकल आए।

कुछ समय बाद दोनों ब्राह्मणों को राज्यसभा में बुलाया गया। राज-सिंहासन पर वस्त्राभूषणों से शरीर को अलंकृत कर चक्री सनत्कुमार विराजमान थे। उन्हें प्रतीक्षा थी कि अब ब्राह्मण मेरी, मेरे रूप-सौन्दर्य की और भी अधिक प्रशंसा करेंगे। उन ब्राह्मणों ने भी देखा चक्री को पर तब उनके चेहरे पर खेद झलक आया। उन्हें चुप देख और उनके चेहरे पर खेद की रेखाएँ देख चक्री ने पूछा-"क्यों विप्रदेव? क्या बात है? आपने कुछ कहा नहीं।" तब दोनों विप्रों ने कहा-"महाराज! पहले वाली बात अब नहीं रही।" चक्री सनत्कुमार ने पूछा-"क्यों भाई, ऐसी क्या बात हो गई?" विप्र बोले-"आपका शरीर अब आधि, व्याधि, अनेक रोगों से युक्त बन गया है। आप स्वयं पीकदानी में थूककर परीक्षण कर लें।"

पीकदानी मँगाई गई। चक्री ने पीक थूकी और देखा-उस पीक में तो सैंकड़ों कीटाणु कुलबुलाते दिखाई दिए, तीव्र दुर्गंध चारों ओर फैल गई। सभी आश्चर्यचकित और स्वयं चक्री भी स्तंभित थे।

चक्रवर्ती ने अहंकार किया था अपने रूप का, सौन्दर्य का। यह अहं, यह घमण्ड, यह गर्व कितना घातक है? कितना आत्म-विनाशक है और कैसा तुरन्त फल देता है? शरीर में सोलह प्रकार के रोग उत्पन्न कर दिए। चक्रवर्ती सनत्कुमार चिन्तन में खो गए-'मैंने व्यर्थ इस शरीर और इसके सौन्दर्य पर गर्व किया। जिसे मैंने अनुपम समझा था वही आज निस्तेज, लावण्यरहित एवं रोगग्रस्त है। वस्तुतः शरीर, सुन्दरता और ये श्रृंगार आदि क्षणिक् हैं। मुझे अपना गर्व त्याग कर, इस शरीर पर से आसक्ति हटा, राज्यादि का त्याग कर आत्म-कल्याण का पथ ग्रहण कर लेना चाहिए।'

चिन्तन चलता रहा। विरक्तिभाव आया। पुत्र को सिंहासन पर बिठाया और संयम ग्रहण कर लिया। दीक्षित होने के पश्चात् वे निरतिचार कठोर संयमाराधन व उग्र तपश्चरण करने लगे। उनके अंतरंग में वैराग्य एवं समत्वभाव का झरना बह रहा था पर शरीर अनेक रोगों से जर्जरित था। अनेक महाव्याधियों को उन्होंने 700 वर्ष पर्यन्त समभाव से सहन किया। तीन लाख वर्ष की आयु पूर्ण कर आयु के अंतिम भाग में चक्रवर्ती सनत्कुमार मुनि-पर्याय में पंच-परमेष्ठी का ध्यान धरते हुए कालधर्म को प्राप्त कर सिद्ध, बुद्ध, मुक्त बने।

# आठ कर्म के फल : अनुप्रेक्षा से

महत्त्व—संसार परिभ्रमण का मूल कारण कर्म है। कर्म का सम्बन्ध जब तक आत्मा के साथ चालू है, तब तक मुक्ति नहीं है। जैसे ऋण लेने वालों को ऋण चुकाना पड़ता है, वैसे ही कर्म बाँधे तो फल भोगना ही पड़ता है।

| क्रम | आठकर्म-स्वरूप | इस भव में बाँधे तो | आते भव में भोगे |
|---|---|---|---|
| 1. | **ज्ञानावरणीय**<br>पढ़ाई याद नहीं होना | न पढ़े, न पढ़ने दे तो →<br>पढ़े, पढ़ने में सुविधा प्रदान करे तो → | मूर्ख, ठोठ, पागल, बने।<br>बुद्धिमान, चतुर, चकोर बने। |
| 2. | **दर्शनावरणीय**<br>पढ़ते समय नींद आना | नींद ले, दर्शन करे नहीं तो →<br>जागरण करे, देख कर चले तो → | अंधे, एकेन्द्रिय बने।<br>अच्छी आँख, तीव्र दृष्टि वाला बने। |
| 3. | **वेदनीय**<br>पढ़ते समय सिर में दर्द होना | निर्दय हो, दूसरे को दु:ख दे तो →<br>दयावंत, दूसरे को साता दे तो → | रोगी, बीमार, दु:खी बने।<br>निरोग, स्वस्थ, अवेदक बने। |
| 4. | **मोहनीय**<br>पढ़ने का मन नहीं होना | मायावी, मिथ्यात्वी हो तो →<br>समकिती चरित्रवंत हो तो → | अनार्य, म्लेच्छ, विधर्मी बने।<br>आर्य, संस्कारी, सुधर्मी बने। |
| 5. | **आयुष्य**<br>साँस है जब तक जीना | मांसाहारी, व्यसनी हो तो →<br>अन्नाहारी, साधु, श्रावक हो तो → | नरक, तिर्यंच में उपजे।<br>मनुष्य, देव बने। |
| 6. | **नाम**<br>शरीर का अच्छा, बुरा मिलना | वांका देखे, बोले, करे तो →<br>अच्छा देखे, बोले, करे तो → | वामन, कूबड़ा, हीनांग बने।<br>सुस्वर, सौन्दर्यवान, प्रभावी बने। |
| 7. | **गौत्र**<br>उच्च, नीच कुल में जन्म लेना | अभिमान करे, अपमान करे तो →<br>विनय करे, आदर दे तो → | दास, दुर्भागी, किल्विष बने।<br>इन्द्र, राजा, स्वामी, नेता बने। |
| 8. | **अन्तराय**<br>अनुकूल प्रतिकूल प्रसंग मिलना | न खावे, न खिलावे, आलसी हो तो →<br>खाये, खिलावे, उद्यमी हो तो → | नग्न, भूखा-प्यासा बने।<br>सम्पन्न, दानी, भोगी, वीर्यवान बने। |

## कर्ज चुकाना पड़ेगा

सरगम

(तर्ज—जो वादा किया.......)

जो कर्ज लिया वो, चुकाना पड़ेगा,
रोके चुकाओ चाहे, हँस के चुकाओ, तुमको चुकाना पड़ेगा ॥टेर॥.......
जागीरदार ने संतों को बांधा, बारह मास तक, आहार की बाधा,
ऋषभ प्रभुऽऽऽऽ कोई विभु हो उसको, चुकाना पड़ेगा....... ॥1॥
दास के कानों में शीशा जो डाला, कानों में कीले ठोके, बन करके ग्वाला,
वीर प्रभुऽऽऽऽ कोई विभु हो उसको, चुकाना पड़ेगा....... ॥2॥
काचर को छिला, अभिमान आया, खंधक ऋषि का, भव जो है पाया,
चर्म जुदा-2 ऽऽऽऽ हो तन से, फिर भी, तूं ना बचेगा....... ॥3॥
जैसा करोगे, वैसा भरोगे, छूटे नहीं रोए, चाहे हँसोगे,
'नानु सती'-2 ले समता दिल में, भव से तिरेगा....... ॥4॥

## प्रेम के तीन रूप–

(1) **भक्ति** – महापुरुषों के प्रति

(2) **मैत्री** – समान व्यक्तियों के प्रति

(3) **करुणा** – दु:खी व्यक्तियों के प्रति

प्रेम का अपना स्वाद है, अपनी सुगंध है, अपना आनंद है, प्रेम हिमालय की तरह उन्नत, सागर की तरह गहरा, आकाश की तरह असीम है।

प्रेम गंगा उल्टी बहती है, इसमें तैरने वाला डूबता है और डूबने वाला तैरता है।

दिल को **प्यार** से भरो...
छह काय के जीव मात्र पर **प्यार** करो...
दगा करने वाले को भी **प्यार** करो।
बैर करने वाले को भी **प्यार** करो।
दीन–दु:खी गरीबों को भी **प्यार** करो।
दुश्मन से भी **प्यार** करो।

**यही है महावीर का संदेश,**
**प्यार से भर दो अपने दिल का देश।**

Please ! 1. बीमार, 2. अंधा, 3. गरीब, 4. वृद्ध, 5. मानसिक कमजोर, 6. विकलांग व्यक्तियों की कभी भी हँसी–मजाक नहीं उड़ावें, क्योंकि इससे भारी कर्मों का बंधन होता है। ऐसे व्यक्तियों का उत्साह बढ़ाकर आगे बढ़ाएँ। उनकी योग्यताओं को प्रगट करने में सहयोगी बनें। इस प्रकार प्रेम–प्यार से गले लगाकर आप भारी कर्मों की निर्जरा भी कर सकते हैं।

**Promote the one who is dull**
**जो कमजोर हैं उन्हें उत्साहित करें**

Minus Enemies

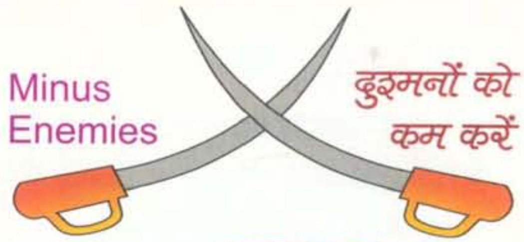

दुश्मनों को कम करें

**तलवार दो तरह की होती हैं**–एक लोहे की और दूसरी प्रेम की। लोहे की तलवार एक के दो करती है और प्रेम की तलवार दो को एक करती है।

"जिसके दिल में जगत के सभी जीवों के प्रति प्रेम है उसे **महावीर** कहते हैं। जिसके दिल में एक भी जीव के प्रति नफरत या द्वेष हो, तब तक उन्हें **मोक्ष** नहीं मिलता है। इसलिए अगर हम हमारी भोजन की थाली से सारे जगत को आहार नहीं दे सकते हैं, तो हम हमारे दिल से सबको प्यार तो दे ही सकते हैं।"

## साधना की गहराई

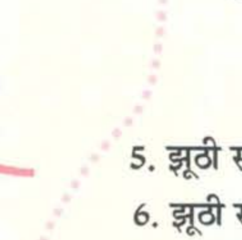

# महापापी

1. आत्मघाती – महापापी
2. विश्वासघाती – महापापी
3. गुरुद्रोही – महापापी
4. कृतघ्नी – महापापी
5. झूठी सलाह देने वाला – महापापी
6. झूठी साक्षी देने वाला – महापापी
7. हिंसा में धर्म बताने वाला – महापापी
8. सरोवर की पाल तोड़ने वाला – महापापी
9. दव लगाने वाला – महापापी
10. हरा–भरा वन काटने वाला – महापापी
11. बाल हत्या करने वाला – महापापी
12. सती साध्वी का शील भंग करने वाला – महापापी

# L FOR ➡ LESHYA लेश्या

मन के भावों की स्थिति को लेश्या कहते हैं। लेश्या एक प्रकार का Gum है, जिससे कर्म आत्मा के साथ चिपकते हैं।

✿ लेश्या कितनी हैं और उनके नाम, वर्ण (Colour) और परिणाम (Result) क्या-क्या हैं ?

लेश्या छः हैं। उनके नाम, वर्ण और परिणाम तालिका में दिये गये हैं।

| नाम | कृष्ण लेश्या | नील लेश्या | कापोत लेश्या | तेजो लेश्या | पद्म लेश्या | शुक्ल लेश्या |
|---|---|---|---|---|---|---|
| वर्ण | काला (Black) | नीला (Blue) | सिलेटी (Grey) | लाल (Red) | पीला (Yellow) | श्वेत (White) |
| परिणाम | अशुभतम | अशुभ | कम अशुभ | शुभ | अधिक शुभ | शुभतम |

## कौन-सी लेश्या के कैसे परिणाम (Result) होते हैं?

*इसके लिए हम आपको एक कहानी सुनाते हैं—*

छह आदमी किसी जंगल में जा पहुँचे। उन्हें बहुत तेज भूख लग रही थी। इतने में उन्होंने एक जामुन का पेड़ देखा। उस पर जामुन के फल लगे हुए थे।

उस पेड़ को देखकर पहले आदमी ने कहा—"इस पेड़ को जड़ से ही काट देते हैं, तो आराम से जामुन खा सकेंगे।" दूसरे आदमी ने कहा—"नहीं, नहीं! ऐसे नहीं। पेड़ को काटना ठीक नहीं है। इससे अच्छा है हम इसकी बड़ी-बड़ी टहनियों को ही काट लेते हैं। हमें जामुन मिल जायेंगे।" तीसरे ने कहा—"बड़ी टहनियाँ क्यों ? छोटी टहनी से ही काम चल सकता है। अत: हम छोटी टहनियाँ ही काटेंगे।" चौथे ने कहा—"सभी टहनियों को काटने से क्या फायदा ? ऐसा करते हैं, जिस शाखा में जामुन है वही तोड़ लेते हैं।" पाँचवाँ कहता है—"हमें तो केवल फल ही खाने हैं तो खाली फल ही तोड़ लेते हैं। टहनियाँ क्यों तोड़ें।" तब छठा आदमी कहता है—"ऐसे पापकारी विचार ना करते हुए हम नीचे गिरे हुए पके फल ही खा लेते हैं।"

इस दृष्टांत में प्रथम पुरुष कृष्ण लेश्या वाला है, दूसरा पुरुष नील लेश्या वाला, तीसरा पुरुष कापोत लेश्या वाला, चौथा पुरुष तेजो लेश्या वाला, पाँचवा पुरुष पद्म लेश्या वाला और छठा पुरुष शुक्ल लेश्या वाला है। एक से छह तक पुरुषों के परिणाम अशुभ से शुभ-शुभतर-शुभतम होते जाते हैं। इसलिए उनके विचारों में सुकोमलता भी उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है।

## इन लेश्याओं का रस (Taste) कैसा होता है?

| नाम | कृष्ण लेश्या | नील लेश्या | कापोत लेश्या | तेजो लेश्या | पद्म लेश्या | शुक्ल लेश्या |
|---|---|---|---|---|---|---|
| रस | नीम की तरह कड़वा (Bitter) | मिर्च के समान तीखा (Spicy) | कच्चे आम जैसा खट्टा (Sour) | पके आम जैसा खट्टा-मीठा (Sour/Sweet) | अंगूर जैसा मीठा (Very Sweet) | खीर जैसा मीठा (Highly Sweet) |
| | | | | 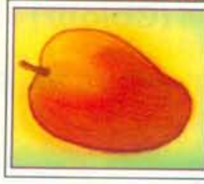 | | |

## इन लेश्याओं वाले जीवों के मन की स्थिति कैसी होती है?

(1) **कृष्ण लेश्या वाले जीव**—(i) छह काय जीवों की हिंसा करने वाला। (ii) पाप में प्रवृत्त रहने वाला। (iii) कठोर हृदयी। (iv) पाप का डर नहीं रखने वाला।

(2) **नील लेश्या वाले जीव**—(i) ईर्ष्या करने वाला (Jealous)। (ii) मूर्ख। (iii) तप नहीं करने वाला। (iv) मायावी। (v) प्रमादी (lazy)। (vi) माया (cheating) करने वाला।

(3) **कापोत लेश्या वाले जीव**—(i) टेढ़ा बोलने वाला। (ii) टेढ़े (गलत) काम करने वाला। (iii) माया करके प्रसन्न होने वाला। (iv) मिथ्या वचन बोलने वाला। (v) असत्य बोलने वाला। (vi) चोरी करने वाला। (vii) खुद के दोष छिपाने वाला।

(4) **तेजो लेश्या वाले जीव**—(i) माया नहीं करने वाला। (ii) विनयवान। (iii) अच्छी क्रिया करने वाला। (iv) तप करने वाला। (v) धर्म में चुस्त रहने वाला। (vi) धर्म से लगाव रखने वाला। (vii) पाप से डरने वाला। (viii) सर्व जीवों का भला सोचने वाला। (ix) स्वाध्याय करने वाला।

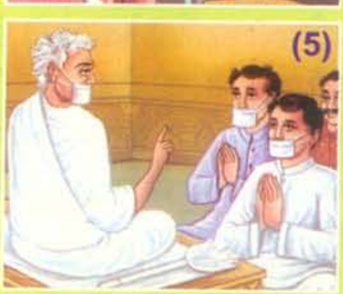

(5) **पद्म लेश्या वाले जीव**—(i) अल्प क्रोधी, (ii) अल्प मान, (iii) अल्प माया, (iv) अल्प लोभ, (v) शांत मन वाला, (vi) कम बोलने वाला, (vii) मन-वचन-काया को **नियंत्रण (Control)** में रखने वाला।

(6) **शुक्ल लेश्या वाले जीव**—(i) हिंसा, चोरी, झूठ रहित, (ii) धर्म में नित्य अनुरक्त, (iii) दीक्षा अंगीकार करने वाला, (iv) राग और द्वेष बहुत कम, और वीतराग भाव की ओर अग्रसर या वीतरागी।

**उपरोक्त लेश्याओं में से प्रथम 3 लेश्या अप्रशस्त (अशुभ) हैं और अंतिम 3 प्रशस्त (शुभ) हैं।**

## हमें मन के विचार कैसे रखने चाहिए ?

हमें हमारे मन से ही पूछना है कि क्या मैं अप्रशस्त लेश्या में रहता हूँ? अगर हाँ, तो अब मुझे अपने विचार बदलकर प्रशस्त लेश्या के विचारों में रहना चाहिए। अपने जीवन को अच्छा बनाकर मोक्ष मार्ग की ओर कदम बढ़ाने चाहिए।

## स्मरण रखने योग्य बातें

- भाई-भाई के बीच मनमुटाव और स्वार्थ भावना का त्याग कीजिए नहीं तो आपका घर नरक बन जायेगा। भाई के प्रति प्रेम और त्याग की भावना अपनाइये, घर का स्वर्ग सुरक्षित रहेगा।
- श्रद्धाशील, स्नेहशील, सहनशील और समन्वयशील रहने वाला ही आत्म शांति को प्राप्त करता है।
- हर घड़ी मुस्कराता रहे, जो दुःख में न दीन है। जमाने की हर खुशी, उस व्यक्ति के अधीन है।
- अच्छे विचार, मधुर वाणी और सौम्य व्यवहार हमारे लेश्यामंडल को सकारात्मक बनाते हैं।
- कुरूप चेहरे की बजाय कुरूप बने मन को बदलने की आवश्यकता है, क्योंकि चेहरे की कुरूपता एक व्यक्ति को पीड़ित करती है जबकि मन की कुरूपता से अनेक व्यक्ति पीड़ित होते हैं।

कथा रूपी विजय पथ

# अतिमुक्त कुमार

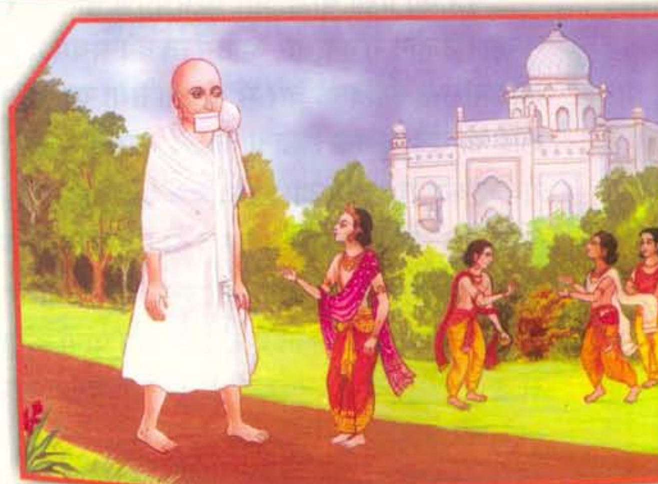

**पो**लासपुर नगर के राजा **विजयसेन** की रानी **श्रीदेवी** की कुक्षि से **अतिमुक्त कुमार** का जन्म हुआ। जब बालकुमार लगभग सात साल का था उस समय श्रमण भगवान महावीर स्वामी **पोलासपुर** पधारे और श्रीवत्स उद्यान में विराजित हुए। उनके सुशिष्य **गणधर श्री गौतम स्वामी** छट्ठ के पारणे के लिए गोचरी लेने के लिए नगर में पधारे। उस समय राजकुमार अतिमुक्त नगर के **इन्द्रस्थान** नामक क्रीड़ा मैदान में खेल रहा था। गौतम स्वामी उस मैदान के पास से गोचरी लेने निकले। अतिमुक्त कुमार की दृष्टि गणधर गौतम पर पड़ी, तो वह उनकी ओर आकर्षित हुआ और पास में जाकर प्रश्न किया—"**महात्मन्! आप कौन हैं? आप कहाँ और क्यों जा रहे हैं ?**"

गौतम गणधर ने कहा—"देवानुप्रिय! मैं जैन साधु हूँ। आत्म कल्याण के लिए मैंने दीक्षा ग्रहण की है। अहिंसा आदि पाँच महाव्रत, 5 समिति, तीन गुप्ति, रात्रि भोजन त्याग आदि नियमों की मैं आराधना करता हूँ और (छट्ठ) बेले की तपस्या करता हूँ। आज मेरे बेले का पारणा है, इसलिए गोचरी लेने जा रहा हूँ।"

"चलो, मैं आपको गोचरी दिलाता हूँ।" ऐसा कहकर अतिमुक्त कुमार ने गणधर गौतम की अंगुली पकड़ ली और चलने लगे। गौतम स्वामी को लेकर वे राजमहल में आये। रानी श्रीदेवी गौतम गणधर को देख आनंदित हुई और उनके स्वागत में आसन पर से उठकर उन्हें वंदन नमस्कार किया, निर्दोष आहार-पानी बहराया और आदर के साथ सात-आठ कदम उनको पहुँचाने गई।

अतिमुक्त ने गणधर गौतम स्वामी से जिज्ञासावश पूछ लिया—"महात्मन्! आपके धर्म गुरु कौन हैं और आप कहाँ रहते हैं ?"

"देवानुप्रिय! **मेरे धर्म गुरु भगवान महावीर स्वामी** नगर के बाहर **श्रीवत्स उद्यान** में विराजमान हैं, मैं उनके पास रहता हूँ।" गौतम स्वामी ने कहा।

अतिमुक्त बोला—"मैं भी आपके साथ भगवान को वंदन करने आना चाहता हूँ।" "जैसी आपकी इच्छा।" गौतम स्वामी ने कहा।

भगवान के पास पहुँचकर अतिमुक्त ने वंदन किया। भगवान ने उन्हें उपदेश फरमाया, जिससे **उनको वैराग्य उत्पन्न हुआ।** अतिमुक्त कुमार ने भगवान से कहा—"आपका उपदेश सुनकर मेरा आस्था भाव और वैराग्य जागृत हुआ है। इसलिए माता-पिता की आज्ञा लेकर मैं आपके पास दीक्षा लेना चाहता हूँ।" भगवान ने उन्हें दीक्षा योग्य जानकर कहा—"तुम्हें जैसा सुख हो, वैसा करो परन्तु आत्म-कल्याण करने में देर मत करो।"

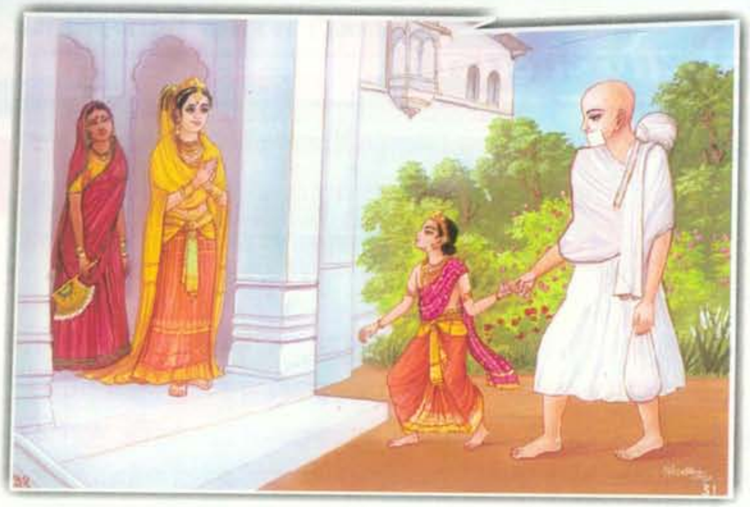

राजकुमार अतिमुक्त माता-पिता के पास आकर कहने लगा—"आपकी आज्ञा हो, तो मैं श्रमण भगवान महावीर स्वामी के पास दीक्षा लेकर उनका शिष्य बनकर धर्म की आराधना करूँ।"

माता-पिता ने आश्चर्यचकित होकर कहा—"अरे बेटा! आप तो बहुत छोटे हो। आपको दीक्षा और संयम का मतलब क्या है, वह नहीं पता है। आपको धर्म की क्या जानकारी है?"

राजकुमार अतिमुक्त ने कहा— **"माता! मैं छोटा हूँ। परन्तु जो चीज जानता हूँ, वह नहीं जानता और जो नहीं जानता हूँ, वह जानता हूँ।"** राजकुमार अतिमुक्त की गूढ़ बात पर हतप्रभ होकर माता-पिता ने पूछा—"क्या कहा? बेटा स्पष्ट करो। हमें आपकी बात समझ में नहीं आई।"

**राजकुमार अतिमुक्त ने कहा—"मैं यह जानता हूँ कि जिसने जन्म लिया है, वह अवश्य मरेगा। परन्तु मैं यह नहीं जानता कि कहाँ, कैसे और कब मृत्यु होगी। मैं नहीं जानता कि जीव कौन-से कर्मों से तिर्यंच, मनुष्य और देवगति में उत्पन्न होता है। परन्तु इतना अवश्य जानता हूँ कि जीव खुद के कर्मों से ही चार गति में उत्पन्न होता है।"**

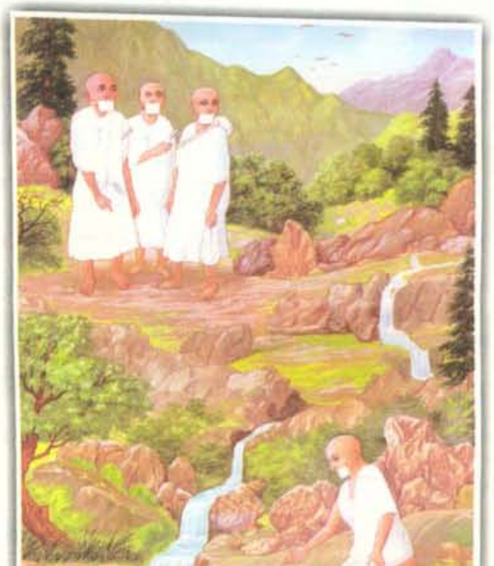

पुत्र की ऐसी बुद्धि और वैराग्यपूर्ण बात जानकर माता-पिता के आश्चर्य का पार न रहा। उन्होंने राजकुमार अतिमुक्त को संयम की कठोर साधना और उसमें आते विघ्न और परिषह आदि के बारे में बताया तथा यह भी समझाया कि संयम का पालन करना लोहे के चने चबाना जितना कठिन काम है। इस तरह अनेक प्रकार से समझाकर उन्हें रोकने का प्रयत्न किया, परन्तु पुत्र की दृढ़ता के सामने उनकी एक नहीं चली और अन्त में उन्होंने दीक्षा की आज्ञा दे दी। राजकुमार अतिमुक्त ने तुरंत दीक्षा ले ली।

एक बार चातुर्मास में अतिमुक्त मुनि स्थविर मुनियों के साथ शौच आदि के लिए बाहर गये थे। तब उन्होंने एक छोटा-सा पानी का झरना बहता देखा। बाल सुलभ चेष्टा से उन्होंने मिट्टी की पाल बाँधी और पानी को रोक दिया। वे अपना पात्र पानी में तैराने लगे और गाने लगे—"मेरी नाव पानी में तैर रही है, मेरी नाव पानी में तैर रही है।"

**अतिमुक्त मुनि का यह कार्य बड़े संतो को पंसद नहीं आया।** वे चुपचाप अपने स्थान पर वापस आये और भगवान महावीर से अतिमुक्त मुनि द्वारा बहते झरने पर मिट्टी की पाल बाँधकर पात्र पानी में तिराने की बात कही। भगवान ने कहा—"**अतिमुक्त मुनि इसी भव में मोक्ष जाने वाले हैं**। आप उनकी हीलना, निंदा तथा उपेक्षा मत करो। आप उनका सत्कार करके उन्हें सच्ची शिक्षा और गोचरी पानी देकर सेवा करो।"

भगवान की आज्ञा स्वीकार करके बड़े साधु अतिमुक्त मुनि की सेवा करने लगे। अतिमुक्त मुनि ने उसके बाद **ग्यारह अंग सूत्रों का (शास्त्रों का) अध्ययन** किया। **गुणरत्न संवत्सर तप** तथा अनेक प्रकार के तप किये और सब कर्मों का नाश करके **मोक्ष** में गये।

**सज्झाय**

(तर्ज - इचकदाना, बिचकदाना...)

प्रेम बढ़ाना, भूल न जाना, घर को स्वर्ग बनाना।
हो पावन संकल्प हमारा, निभना और निभाना... ॥ टेर ॥
छोटी सी जिन्दगानी है, क्या रखा तकरार में,
हर चेहरे पर हो मुस्कान, मिलती खुशियाँ प्यार में,
प्रेम के रस में, सब है वश में, प्रेम का दीप जलाना... ॥ 1 ॥
मात-पिता है पूज्य हमारे, दिल ना कभी दुःखाना,
पाला-पोसा योग्य बनाया, उनको नहीं भूलाना,
है उपकारी, ऋण है भारी, अपना फर्ज निभाना... ॥ 2 ॥
नहीं किसी से ईर्ष्या हो, नहीं किसी से हो अनबन,
नहीं पराया है कोई प्राणी, अन्तर में हो अपनापन,
गौतम से प्रभु फरमाते हैं, मैत्री गुण सरसाना... ॥ 3 ॥

## मुँहपत्ति का क्या अर्थ है ?

मुँहपत्ति का अर्थ है–मुखवस्त्रिका ।
सफेद (White) रंग का 8 पड़ (तह) वाला कपड़ा (Cotton cloth) मुख पर रखकर सफेद धागे के द्वारा कान से बाँधना होता है ।

उँगुली के नीचे की ओर बनी इस रेखा की चौड़ाई को अँगुल कहते हैं।

## मुँहपत्ति कैसी होती है ?

मुँहपत्ति का कपड़ा लम्बाई में 21 अँगुल और चौड़ाई में 16 अँगुल का होता है । फोल्ड करने के बाद जो 8 पट वाली मुँहपत्ति तैयार होती है वह 8 x 5¼ अँगुल की होती है।

## मुँहपत्ति पहनने से क्या लाभ होता है ?

1. वायुकाय जीवों की रक्षा होती है ।
2. जैनधर्म का गौरव बढ़ता है ।
3. श्रावक के 4th अभिगम (उत्तरासन) का पालन होता है ।
4. अपना थूक दूसरों पर नहीं उछलता है ।

## मुँहपत्ति की आवश्यकता क्यों है ?

1. तीर्थंकर भगवान की आज्ञा है ।
2. जैनधर्म का चिन्ह (Symbol) है ।
3. जैन होने की पहचान होती है ।

## मुँहपत्ति का उपयोग कब करना चाहिए ?

1. धर्म की बातें करते समय ।
2. साधु-साध्वी जी के दर्शन करते समय ।
3. ज्ञानशाला में ।
4. संवर, सामायिक, पौषध में
5. धर्मस्थान में ।

*देवलोक के इन्द्र महाराज जब भी भगवान् के दर्शन करने आते हैं, तो वे खुले मुँह कभी भी प्रभु से नहीं बोलते हैं। मुँहपत्ती से अहिंसा की शुरुआत होती है।*

**प्रसंग**—मंगलवाड़ का एक धर्मिष्ठ परिवार आचार्य श्री विजयराज जी म. सा. के दर्शनार्थ ब्यावर गया। दर्शन-सेवा हुई। शाम को वापिस लौट रहे थे। सायंकालीन प्रतिक्रमण का समय हो गया। दादीसा मुँहपत्ति बाँधकर धर्मध्यान करने लग गये। जंगल में से गाड़ी पार हो रही थी। पाँच-सात गुंडे आये, लाठियों के प्रहार से गाड़ी को रोका, दरवाजा खुलवाया। सामने दादीसा दिखे। मुँहपत्ति को देखकर डाकुओं के सरदार ने कहा–"अरे यह तो जैन भक्तों की गाड़ी है। इसे छोड़ दो।" बच गये सभी यात्री।

*बोलो किसने बचाया? मुँहपत्ति ने।*

## भगवान् महावीर स्वामी ने स्थानाङ्ग सूत्र में फरमाया है कि साधक तीन मनोरथों का बार-बार चिन्तन करता रहे

किसी को Doctor, Lawyer, Engineer बनने की इच्छा होती है, तो किसी को C.A. या M.B.A. बनने की। यह इच्छा शायद इस भव में पूरी भी हो जाए लेकिन मृत्यु के बाद इन पदवियों (Degrees) की कोई कीमत (Value) नहीं होती है।

लेकिन इस दुनिया में भगवान ने हमें एक ऐसी पदवी भी दी है, जो मृत्यु के बाद भी साथ में रहती है। उसका नाम है—**समकित।**

समकित का अर्थ है—सुदेव, सुगुरु और सुधर्म के प्रति सच्ची श्रद्धा।

जो जीव समकिती होता है उसे श्रावक या साधु बनने की भावना होती ही रहती है। श्रावक या साधु बनने से ही सच्ची धर्म की साधना होती है और मोक्ष मिलता है।

*शायद सच्चे श्रावक या साधु बनने में देर लगे, तो भी अपने समकित की सुरक्षा के लिए भगवान ने 3 मनोरथ बताए हैं।*

**मनोरथ का अर्थ है भावना** जिन भावों की इच्छा करने से मन का रथ कर्म निर्जरा करे वह मनोरथ है।

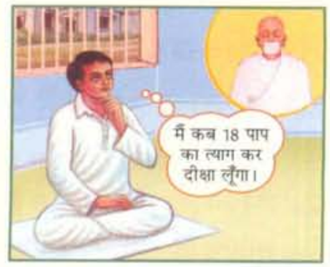


पहले मनोरथ में हम ऐसा चिंतन करते हैं कि "अहो जिनेश्वर देव! मैं कब आरम्भ और परिग्रह कम करूँगा। वह दिन मेरा धन्य और परम कल्याणकारी होगा।" दूसरे मनोरथ में श्रावकजी ऐसा चिंतन करते हैं कि "अहो जिनेश्वर देव! जिस दिन मैं 18 पाप का त्याग कर दीक्षा लूँगा। वह दिन मेरा धन्य और परम कल्याणकारी बनेगा।" तीसरे मनोरथ में श्रावक जी ऐसा चिंतन करते हैं कि "अहो जिनेश्वर देव! जिस दिन मैं आहार-पानी का त्याग कर, सर्व जीवों को क्षमा देकर, पंडित मरण (संथारा) प्राप्त करूँगा। वह दिन मेरा धन्य और परम कल्याणकारी बनेगा।"

**कठिन शब्द :** आरम्भ—छह काय जीवों की हिंसा करना।
परिग्रह—किसी वस्तु पर आसक्ति करना।
To have deep attachment for possessions.

**कथा रूपी विजय पथ**

# आर्द्रकुमार (मुँहपत्ति)

आर्द्रक नाम के अनार्य देश के (Foreign Country) राजा आर्द्रिक और रानी आर्द्रका के पुत्र का नाम था—**आर्द्रकुमार।** आर्द्रिक राजा का श्रेणिक राजा के साथ मैत्री सम्बन्ध था। मित्रता के कारण वे एक-दूसरे को भेंट भेजा करते थे। राजा श्रेणिक के पुत्र का नाम अभयकुमार था।

पिता और श्रेणिक राजा के बीच जो भेंट व्यवहार था उसे देखकर आर्द्रकुमार की भी इच्छा हुई कि वह अभय कुमार को भेंट भेजे। एक दिन उन्होंने भावपूर्ण संदेश एवं भेंट अभयकुमार को भेजी।

आर्द्रकुमार का मनोभाव जानकर अभयकुमार ने सोचा—आर्द्रकुमार कोई प्रशस्त आत्मा लगता है। कदाचित् वह संयम की विराधना करने के कारण अनार्य देश में उत्पन्न हुआ है। **अब मेरा कर्तव्य है कि उस भव्यात्मा को सन्मार्ग पर लाने का कुछ प्रयत्न करूँ।** मैं ऐसा निमित्त (Situation) उपस्थित करूँ कि जो उसके पूर्व संस्कार जगाने और जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न करने का निमित्त

बने। उन्होंने साधुता का स्वरूप बताने वाले उपकरण रजोहरण, मुखवस्त्रिका आदि भेजे और कहलवाया कि वह इस भेंट को एकान्त में ले जाकर देखें।

आर्द्रकुमार उपहार पेटिका लेकर एकान्त कक्ष में गए और पेटिका खोल कर उपहार देखने लगे। धर्म के उपकरण देखकर उन्हें आश्चर्य हुआ। वे सोचने लगे, **यह क्या है? उनका उपयोग (Use) क्या हो सकता है? क्या ऐसी वस्तु पहले कभी मैंने देखी है?** ऐसा चिन्तन करते हुये वे मूर्छित हो गये, वापस होश में आने पर **उन्हें जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न हुआ और वे अपना पूर्वभव देखने लगे।**

आर्द्रकुमार ने जब जातिस्मरण ज्ञान से अपना पूर्वभव जाना, तो उन्हें दीक्षा की भावना जगी, उन्होंने अपने पिता से आर्यदेश भारत में जाने की आज्ञा माँगी।

आर्द्रकुमार के पिता ने भारत जाने की अनुमति नहीं दी, तो वे निराश हो गए। उन्हें भारत देश और अभयकुमार की बातों में रस आने लगा। राजा को संदेह हुआ कि कहीं चुपके से भारत नहीं चला जाए, इसलिए उन्होंने अपने पुत्र की रखवाली में 500 सामंत लगा दिए। पर आर्द्रकुमार ने यहाँ से मुक्त होने की योजना बनाई।

एक दिन रक्षकों से छिपकर घोड़े पर सवार होकर समुद्र किनारे पहुँचा एवं जहाज में बैठकर भारत आ गये। यहाँ आते ही वे साधुवेश धारण कर स्वयं दीक्षित बन गए।

## साधना की गहराई

## तीर्थंकर भगवान के चौंतीस अतिशय

तीव्र और उत्कृष्ट पुण्योदय से सर्वजन हित की भावना से पूर्वभव में बद्ध पुण्य के उदय से होने वाले जनसाधारण के लिए दुर्लभ पौद्गलिक रचना विशेष को **अतिशय** कहते हैं।

1. तीर्थंकर भगवान के नख व बाल बढ़े नहीं, सुशोभित रहे। 2. शरीर निरोगी रहे। 3. रक्त और माँस गाय के दूध के समान श्वेत और मीठा होवे। 4. श्वासोच्छ्वास पद्म कमल के समान सुगंधित होवे। 5. आहार, निहार अदृश्य रहे। 6. आकाश में धर्म चक्र चले। 7. आकाश में तीन छत्र सोहे। 8. दो चंवर ढुलावें। 9. आकाश में पाद-पीठ सहित सिंहासन चले। 10. आकाश में इन्द्र ध्वज चले। 11. उनके चारों ओर दिव्य प्रभा मंडल सुशोभित होवे। 12. अशोक वृक्ष छाया करे। 13. विषम भूमि भी सम बन जावे। 14. काँटा उल्टा होवे। 15. वायु अनुकूल रहे। 16. छह ऋतु अनुकूल रहे। 17. सुगंधित वर्षा से धरती सिंचित होवे। 18. पाँच वर्ण के अचित फूलों की वर्षा होवे। 19. अशुभ पुद्गल नष्ट होवे। 20. शुभ पुद्गल प्रकट होवे। 21. योजनगामी वाणी ध्वनित होवे। 22. अर्द्धमागधी भाषा में देशना देवें। 23. समस्त श्रोता प्रवचन को अपनी-अपनी भाषा में समझें। 24. जन्म-जात वैरी भी अपना वैर भूल जावें। 25. अन्यमत वाले देशना सुनकर विनय करें। 26. प्रतिवादी निरूत्तर हो जावें। 27. पच्चीस योजन तक कोई रोग नहीं होवे। 28. पच्चीस योजन तक उपद्रव नहीं होवे। 29. पच्चीस योजन तक स्वचक्री का भय नहीं होवे। 30. पच्चीस योजन तक परचक्री लश्कर का भय नहीं होवे। 31. अतिवृष्टि नहीं होवे। 32. अनावृष्टि नहीं होवे। 33. दुष्काल नहीं पड़े। 34. पहले उत्पन्न हुए उपद्रव शांत होवे।

## सरगम

*(तर्ज–जहाँ डाल-डाल पर......)*

**मैं बनूँ आराधक इस भव में,**
**मेटूँ भव-भव का फेरा,**
**हो सफल मनोरथ मेरा।**
**कृपा आपकी चाहूँ भन्ते,**
**पाऊँ शिव सुख डेरा,**
**हो सफल मनोरथ मेरा ॥टेर॥**

**देवों के अति सुख भोगों से,**
**तृप्त नहीं हो पाया,**
**दीन बना तिर्यंच नरक के,**
**कष्टों को सह पाया (2),**
**मिला मुझे अब दुर्लभ नर भव,**
**हो अब ज्ञान उजेरा... ॥ 1 ॥**

**करुणा की धारा ही, निमित्त बनी संयम की,**
**कर तेरा सम्बल भगवन्, पकड़ी डोर परम की (2),**
**गौतम से प्रभु फरमाते हैं,**
**आया आज सवेरा... ॥ 2॥**

# NAMASKAR MAHAMANTRA
# नमस्कार महामंत्र

नमोकार अर्थात् नमस्कार। विश्व में यह पहला और अकेला मंत्र है जिसमें किसी व्यक्ति विशेष की उपासना नहीं की गई है। अपितु आत्मिक गुणों की वन्दना की गई है। इसलिए यह मंत्र किसी व्यक्ति, समाज और सम्प्रदाय से जुड़ा हुआ नहीं है, सबका है, सभी के लिए है अर्थात् विश्व-बन्धुत्व की भावना को सँजोए हुए है। आत्मिक गुणों की वन्दना से अहंकार का विसर्जन होता है और नमन का भाव जागृत होता है। इस मंत्र को चौदह पूर्वों का सार कहा गया है।

पाँच पदों और पैंतीस अक्षरों में निबद्ध यह मंत्र प्राकृत भाषा में है। इस मंत्र में प्रयुक्त पाँच पद आत्मा की विशुद्ध अवस्थाएँ हैं, जिनका नित्य नमन और मनन करने से आत्म-शक्ति जगती है। यह मंत्र इस प्रकार है—

*णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं,*
*णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं,*
*एसो पंच णमोक्कारो, सव्व पाव प्पणासणो,*
*मंगलाणं च सव्वेसिं, पढ़मं हवई मंगलं॥*

## नमस्कार महामंत्र में कितने पद हैं और वे कौन कौन से हैं ?

**नमस्कार महामंत्र के पाँच पद हैं—**

| अरिहंत भगवान | सिद्ध भगवान | आचार्य जी महाराज | उपाध्याय जी महाराज | पूज्य साधु-साध्वीजी |
|---|---|---|---|---|
| वर्ण - सफेद | वर्ण - लाल | वर्ण - पीला | वर्ण - हरा | वर्ण - काला |
| गुण - 12 | गुण - 8 | गुण - 36 | गुण - 25 | गुण - 27 |
| अक्षर - 7 | अक्षर - 5 | अक्षर - 7 | अक्षर - 7 | अक्षर - 9 |

माला के मणके 108 - पाँच पदों के गुण 12 + 8 + 36 + 25 + 27 = 108 इसलिये मणके भी 108 ही होते हैं।

*अरिहंत—* अरिहन्त का सन्धि विच्छेद—अरि+हन्त। 'अरि' का अर्थ है शत्रु और 'हन्त' का अर्थ है हनन या नाश करना। संसारी जीवों के सबसे बड़े शत्रु उसके अपने आठ कर्म हैं। इन आठ कर्मों में से चार कर्मों का नाश करने वाला साधक वस्तुतः अरिहन्त कहलाता है। अरिहन्त भगवान् बारह गुणों और आठ महा प्रतिहार्यों से सुशोभित, चौंतीस अतिशयों से सुसज्जित तथा 18 दोषों से रहित, सर्वज्ञ व सर्वदर्शी होते हैं।

*सिद्ध—* साधक की सिद्ध अवस्था सम्पूर्ण कर्मों से रहित अवस्था है। औदारिक, तेजस् और कार्मण इन तीनों शरीरों का सर्वथा त्याग कर इस अवस्था में पहुँचकर साधक आठ आत्मगुणों से युक्त होता है और संसार के आवागमन से सदा-सदा के लिए मुक्त हो जाता है।

*आचार्य—* साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविका इस चतुर्विध संघ रूपी नौका के नाविक के समान आचार्य होते हैं। जो पाँच आचार का पालन स्वयं करते हैं और करवाते हैं।

**उपाध्याय—** ज्ञान ज्योति को जलाने वाले, 32 आगमों के अर्थ सहित ज्ञाता उपाध्याय कहलाते हैं। जो निरंतर स्वाध्याय करते और करवाते भी हैं।

**साधु—** 5 महाव्रतों को यावज्जीवन तक स्वीकार करने वाले, 5 समिति- 3 गुप्ति का शुद्ध पालन करने वाले साधु-साध्वी कहलाते हैं।

## हमें नमस्कार महामंत्र क्यों बोलना चाहिए ?

(1) भगवंतों को नमस्कार किया गया है।
(2) पुण्य का बंध होता है।
(3) कर्म की निर्जरा होती है।
(4) चित्त (मन) प्रसन्न रहता है।
(5) स्वाध्याय तप का लाभ होता है।
(6) मन को शांति प्राप्त होती है।
(8) इससे हमें हमारे भगवान का स्वरूप समझ में आता है।
(9) खराब विचार, विकथा और प्रमाद (आलस) छूटता है।
(10) नमस्कार महामंत्र गिनते-गिनते अगर आयुष्य का बंध होवे तो सद्गति (अच्छी गति) मिलती है।

## आयुष्य का बंध होने का क्या मतलब है ?

**हमारी वर्तमान उम्र का $\frac{2}{3}$ भाग बीत जाने पर अगले भव का आयुष्य बंधन पड़ता है। यदि उस वक्त आयुबंध के परिणाम न आते हैं, तो शेष बची हुई उम्र के $\frac{2}{3}$ भाग बीत जाने पर आयुबंध होने का अवसर प्राप्त होता है। ऐसे अनेक बार अवसर प्राप्त होते हैं। यदि फिर भी आयुबंध न पड़े, तो मृत्यु से अन्तर्मुहूर्त पूर्व अवश्य आयुबंध होता है। अगले भव का आयुबंध जब तक नहीं होता है, तब तक प्राण अपने तन से नहीं निकलते हैं।**

**यह नमस्कार महामंत्र हमारा प्राण बनना चाहिए। इसे हम हर समय याद करेंगे। सुबह उठते ही, खाने से पहले, स्कूल या घर से बाहर जाने से पहले, सोने से पहले याद करके स्मरण करेंगें।**

### नवकार जपने से लाभ–

- 8 करोड़, 8 लाख, 8 हजार, 808 बार जपने से संसार का आवागमन मिट जाता है।
- 9 लाख, 9 हजार, 908 बार जपने से जीव नरक में नहीं जाता है।
- 1 करोड़ 11 लाख 11 हजार 111 बार भावपूर्वक जपने से तीर्थंकर गौत्र के दलिक इकट्ठे करता है।
- 1 अक्षर के स्मरण मात्र से 7 सागरोपम के पाप नष्ट हो जाते हैं।
- 1 पद के स्मरण मात्र से 50 सागरोपम के पाप नष्ट हो जाते हैं।
- पूरा नवकार गिने तो 500 सागरोपम के पाप नष्ट हो जाते हैं।

# नवकारसी

नवकारसी पच्चक्खाण अर्थात् पूर्वरात्रि के 12 बजे से प्रात: सूर्य उदय के 48 मिनिट तक खाना पीना नहीं एवं सूर्योदय के 48 मिनिट होने के बाद नीचे बैठकर तीन नवकार गिनने के बाद खाना पीना आरम्भ करना।

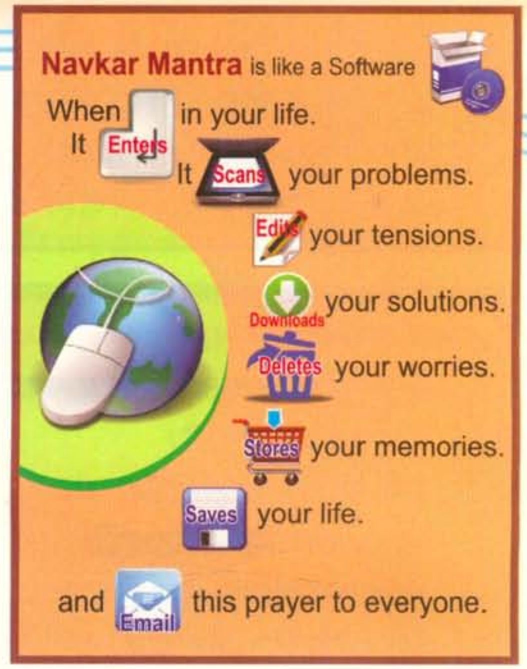


## नवकारसी लेने का पाठ

उगए सूरे नमोक्कार सहियं पच्चक्खामि, चउव्विहं पि आहारं असणं-पाणं-खाइमं- साइमं, अण्णत्थऽणाभोगेणं, सहसागारेणं वोसिरामि।

**पारणे की विधि**—नवकारसी का पच्चक्खाण सम्मं काएणं न फासियं, न पालियं, न तीरियं, न किट्टियं, न सोहियं, न आराहियं, आणाए अणुपालियं न भवई तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

### *नवकारसी आदि पच्चक्खाण करने से लाभ*

नरक में रही हुई आत्मा अकाम निर्जरा के कारण भयंकर दु:खों को सहन करके सौ वर्ष में जितने कर्मों का क्षय करती है, उतने कर्मों का क्षय मात्र एक नवकारसी का पच्चक्खाण करने वाला व्यक्ति करता है। इतने वर्षों में भयंकर दु:खों को सहन करके नरक का जीव जितने कर्म क्षय करता है, उतने कर्मों का क्षय इन पच्चक्खाणों को करने वाला व्यक्ति करता है। एक तरफ नरक के इतने दु:ख सहन करने पड़े और दूसरी तरफ नवकारसी इत्यादि करने से इतने कर्मों का क्षय हो, तो बोलो आप क्या पसन्द करोगे? मात्र थोड़े समय के लिए एवं सरलता से हो सके ऐसा यह त्याग है। बिल्कुल मामूली कष्ट, किन्तु उसका फल अपरम्पार है।

- एक नवकारसी — 100 वर्षों के अशुभकर्म क्षय होते हैं।
- एक पोरसी — 1,000 वर्षों के अशुभकर्म क्षय होते हैं।
- एक बियासना — 1 लाख वर्षों के अशुभकर्म क्षय होते हैं।
- एक एकासना — 10 लाख वर्षों के अशुभकर्म क्षय होते हैं।
- एक आयंबिल — 1 हजार क्रोड़ वर्षों के अशुभकर्म क्षय होते हैं।
- एक उपवास — 10 हजार क्रोड़ वर्षों के अशुभकर्म क्षय होते हैं।

## साधना की गहराई

### *भूखे रहे बिना बेले का लाभ कैसे मिलता है, (प्राचीन धारणानुसार)*

1. सूर्योदय होते ही सन्त-सतियों को संयम में कल्पनीय वस्तु की दिनभर की 'अनुज्ञा' देने वाले को।
2. व्याख्यान वाँचने वाले को शुद्ध भाव से हुकारा देने वाले को।
3. मांगलिक सुनते समय 'तहत्ति' बोल कर उसे स्वीकार करने से।
4. स्थानक में यतनापूर्वक कचरा निकालने वाले को।
5. 'बड़ी साधु वन्दना' भाव सहित फेरने वाले को।
6. व्याख्यान वाँचने वाले को।
7. सामायिक-प्रतिक्रमण आदि से पहले मुँहपत्ति की प्रतिलेखन करने वाले को।

### *पच्चक्खाण की अँगूठी से क्या लाभ?*

1. चौबीस घण्टे में लगभग बीस घण्टे चौविहार का लाभ।
2. जितनी बार बदलना हो, उतनी बार नवकार मंत्र गिनने का लाभ।
3. नवकार मंत्र के प्रभाव से खाने-पीने में जहर भी आ जाये तो अमृत हो जायेगा।
4. अकस्मात् दुर्घटना में कालधर्म हो जाने वाले को, सद्गति का लाभ।
5. बार-बार खाने की आदत घटेगी, जिससे तप का लाभ।
6. खाने में कंट्रोल होने से स्वास्थ्य का भी लाभ।

ऐसा सुन्दर खाते-पीते मुक्ति का मार्ग जानकर धर्म प्रेमी भाई-बहनों को स्वयं को पच्चक्खाण की अँगूठी रखना चाहिए एवं अन्यों को भी प्रेरणा करना चाहिए।

## आठ कर्म क्षयार्थ :
## भगवान महावीर स्वामी की साधना

1. ज्ञानावरणीय कर्म क्षय करने के लिए ध्यान किया।
2. दर्शनावरणीय कर्म क्षय करने के लिए निद्रा पर विजय प्राप्त की।
3. वेदनीय कर्म क्षय करने के लिये बावीस परिषह समभाव से सहे।
4. मोहनीय कर्म क्षय करने के लिये गृहवास का त्याग किया।
5. आयुष्य कर्म क्षय करने के लिये भरी जवानी में दीक्षा ली।
6. नाम कर्म क्षय करने के लिये उपसर्ग समभाव से सहन किये।
7. गौत्र कर्म क्षय करने के लिये अनार्य देश में विचरे।
8. अंतराय कर्म क्षय करने के लिये उग्र तपस्या, कठिन अभिग्रह किये।

## रोगोत्पत्ति के नव कारण

शरीर में किसी प्रकार के विकार उत्पन्न होना रोग कहलाता है। नव प्रकार से शरीर में रोग आते हैं—

1. **अत्यासन**—अधिक बैठने से अथवा अधिक खाने से। 2. **अहितासन**—आरोग्य के प्रतिकूल आसन से बैठने से अथवा अपथ्यकारी आहार करने से। 3. **अति निद्रा**—अधिक नींद लेने से। 4. **अति जागरण**—अधिक जागते रहने से। 5. **उच्चार निरोध**—बड़ी नीत-मल का आवेग रोकने से। 6. **प्रस्रवण निरोध**—लघु नीत-मूत्र रोकने से। 7. **मार्ग गमन**—अधिक चलने से या निरंतर चलते रहने से। 8. **भोजन प्रतिकूलता**—अपनी प्रकृति के प्रतिकूल भोजन से। 9. **इन्द्रियार्थ विकोपन**—इन्द्रियों के विकार से, विषयों में अति गृद्ध रहने से।

## सरगम

(तर्ज—क्या खूब लगती हो...)

नवकार जपने से, सारे सुख मिलते हैं,
जीवन में तन-मन के, सारे दुःख मिटते हैं।
जाप जपो जपते रहो, बंधन कटते हैं,
मन उपवन में खुशियों के, फूल खिलते हैं॥टेर॥

अड़सठ अक्षर हैं इसके, हाँ इसके,
जो ध्याता है, दुःख टल जाते उसके।
परमेष्ठी पाँच है पावन, हाँ पावन,
श्री नवपदजी पवित्र है,
मन भावन...जाप जपो... ॥1॥

पापों से बचकर रहना, हाँ रहना,
दुःख आये तो, हँसते-हँसते सहना।
नवकार करेगा रक्षा, हाँ रक्षा,
ये अरिहंत है, प्रसन्नता का
नक्शा...जाप जपो... ॥2॥

जब कोई हमसे रुठे, हाँ रुठे
दिल टूटे या रिश्ता कोई छूटे।
मन में न उदासी लाना, नहीं लाना,
परमेष्ठी से दिल का नाता
रचाना...जाप जपो... ॥3॥

**कथा रूपी विजय पथ**

# अमरकुमार (नमस्कार सूत्र)

मगधदेश के राजा श्रेणिक चित्रशाला बनवा रहे थे, परन्तु उसका दरवाजा पूरा बनने से पहले ही टूट जाता था। किसी ने राजा को सलाह दी कि "बत्तीस लक्षण वाले बालक की यदि बलि दी जाए, तो यह दरवाजा बन जायेगा।" उस समय राजा श्रेणिक भगवान महावीर के श्रावक नहीं थे। उन्होंने बलिदान की बात मान ली। लेकिन प्रजा में से जबरदस्ती किसी बालक को बलि के लिए कैसे तैयार कर सकते हैं? इसलिए उन्होंने ढिंढ़ोरा पिटवाया—"**जो कोई भी अपने बत्तीस लक्षण वाले बालक को राजा को देगा, उन्हें राजा बालक के वजन जितनी सोनैया देंगे।**"

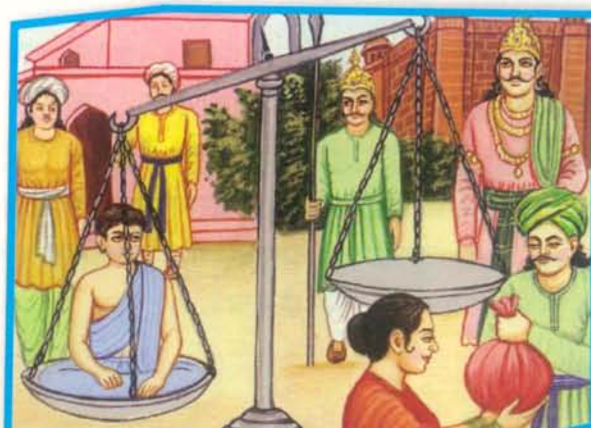

उनके ही नगर में अमरकुमार नाम का एक 32 लक्षणी बालक था। उसका रूप बहुत सुन्दर और आकर्षक था। उसकी वाणी में मिठास थी। उसके गरीब पिता **ऋषभदत्त** ब्राह्मण उसे बहुत प्रेम करते थे। लेकिन उसकी माता को उसके प्रति बहुत नफरत थी।

अमरकुमार की माता ने राजा का ढिंढ़ोरा सुना, तो ऐसा कुविचार उत्पन्न हुआ—"यह ही मौका है, अमरकुमार को मिटा देने का। उसे यदि राजा को दे

दिया जाये तो हमारी गरीबी और बला दोनों एक साथ दूर हो जाएगीं।" ब्राह्मणी की बात सुनकर ब्राह्मण के मन को धक्का लगा। वह सोचने लगा– 'इतने प्रिय बेटे को कैसे दे देवें ?'

परन्तु भूख के दु:ख के आगे बड़े-बड़े भी पिघल जाते हैं और वह तो एक गरीब ब्राह्मण था। वो भी भूख और दु:ख से त्रस्त। अंत में उसने मन मारकर ब्राह्मणी की बात मान ली। ऋषभदत्त ने अपना प्यारा बेटा राजा को सौंप दिया। अमरकुमार बहुत रोया, विनंती की, परन्तु माता-पिता नहीं माने और बेटे के बदले में सोनैया लेकर चले गये।

लोग उनकी आलोचना करने लगे कि ये माता-पिता हैं या जिन्दा राक्षस ? धन की खातिर कोई ऐसे सुन्दर पुत्र की बलि चढ़ा देता है क्या ? राजा को सौंप दिया, धिक्कार है उन्हें। इधर चित्रशाला में अमरकुमार की बलि देने की तैयारी शुरू हो गई। वेदी बना दी गई। उसमें से अग्नि की ज्वालाएँ निकल रही थीं, लोग इकट्ठे होकर बात करने लगे– "ये कैसा अनर्थ है ? राजा के दिल में दया नहीं है ?" परन्तु राजा को यह बात कहने की किसी की हिम्मत नहीं हुई। कुछ लोग मन ही मन में बहुत दु:खी हो रहे थे, तो कुछ निर्दयी लोग माता-पिता का पक्ष लेकर खुश हो रहे थे। कैसा विचित्र संसार है यह ? किसी को जिस बात का दु:ख है, वही दूसरों के लिए खुशी का कारण है।

राज सेवक अमरकुमार को लेकर चित्रशाला में आ गये। अमरकुमार की आँखें तो रो-रोकर सूज गईं थी। परन्तु अब रोने से कोई फायदा नहीं था। जब माता-पिता ही वैरी बन गये, तो वहाँ दूसरा कौन मदद कर सकता था ? उसे मरने के अलावा कुछ नहीं दिखाई दे रहा था। धीरे-धीरे अमरकुमार सामान्य होने का प्रयत्न करने लगा और सोचते-सोचते अचानक उसे किसी जैन मुनि द्वारा सिखाया हुआ **नमस्कार महामंत्र** याद हो आया। यह तो मानो डूबते को नाव मिली! बेसहारे को सहारा मिला! उसे बड़ा आनन्द हुआ। वह मन को मजबूत कर एकाग्रचित्त होकर अटूट श्रद्धा और भक्ति के साथ नवकार का स्मरण करने लगा– **"नमो अरिहंताणं, नमो सिद्धाणं, नमो आयरियाणं, नमो उवज्झायाणं, नमो लोए सव्व साहूणं।"** नवकार का स्मरण करते हुये अमरकुमार ने शीतल और सुगंधित पानी के हौज में प्रवेश कर रहा हो, वैसे अग्नि में प्रवेश किया।

अचानक राजा श्रेणिक चक्कर खाकर नीचे जमीन पर बेहोश होकर गिर पड़े। मंत्री उन्हें होश में लाने का प्रयास करने लगे। वैद्य भी आकर उपचार करने लगे, लेकिन श्रेणिक को होश नहीं आया। सबके मन में विचार आने लगा कि 'अमरकुमार को दु:ख दिया उसका बदला मिला है।'

अमरकुमार तो चिता में किसी योगी की तरह नवकार गिनते, ध्यान लगाकर बैठा था। सबको लगा–'इस बालक में बहुत शक्ति है।' इस तरह चिता शांत हो गई, लेकिन अमरकुमार को कुछ नहीं हुआ। सब अमरकुमार के चरणों में गिरकर राजा को होश में लाने के लिए विनंती करने लगे। अमरकुमार ने नवकार बोलकर राजा पर पानी छिड़का। राजा होश में आने लगे और उठकर बैठ गए। लोग अमरकुमार की प्रशंसा करने लगे। श्रेणिक राजा ने उसे प्रेम से आलिंगन किया और कहा– "हे वत्स! मुझे माफ कर। तू जो माँगेगा वह मैं दूँगा।"

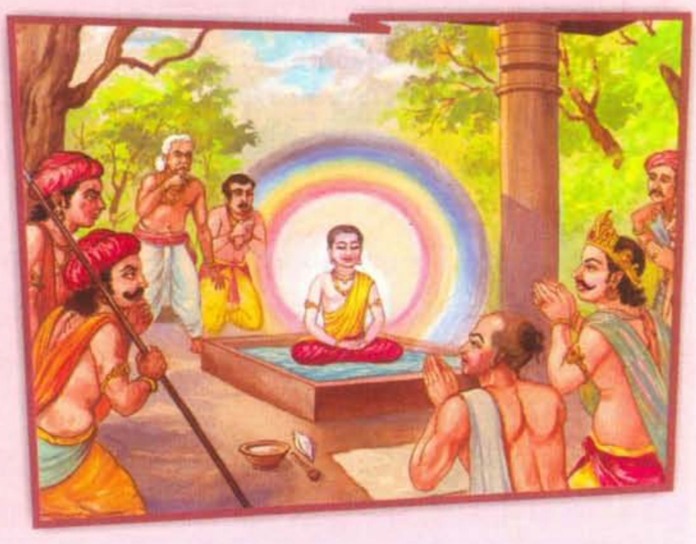

अमरकुमार ने कहा– "हे राजन्! मुझे कुछ नहीं चाहिए। मेरे पास तो मेरा नवकार मंत्र है, वह श्रेष्ठ है।" उसे लगा कि संसार पूरा स्वार्थ का सगा है। अरे! खुद माता-पिता भी? ऐसे **संसार की असारता** जानकर अमरकुमार ने **वैराग्य के साथ दीक्षा ली** और सब दु:खों का अंत किया। नवकार मंत्र की सच्ची श्रद्धा के कारण अमरकुमार का नाम अमर हो गया।

*धन्य है अमरकुमार की दृढ़ता को.....?*
*धन्य है उनकी श्रद्धा को.....??*

## ओघा का अर्थ है रजोहरण

**जीवों की यतना करने का ऊन (Woollen) का बना हुआ साधन।**

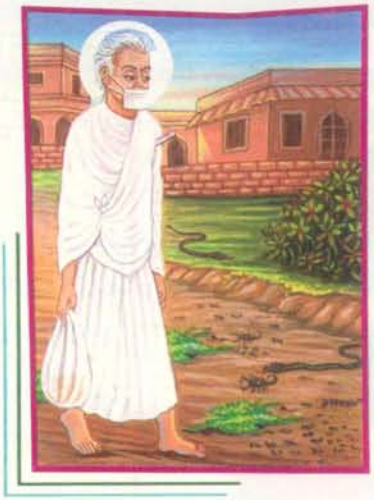

- **ओघा किस तरह बँधता है ?**

  ऊन की लगभग 151 फलियों को धागे में पिरोकर फिर लकड़ी की डंडी के ऊपर बाँधा जाता है।

- **ओघे का उपयोग कौन करता है ?**

  ओघा का उपयोग भगवान महावीर की आज्ञा का पालन करने वाले साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका—ये 4 तीर्थ करते हैं।

- **ओघे का उपयोग कब करते हैं ?**

  साधु दीक्षा ग्रहण करते समय से लेकर आजीवन ओघा साथ में रखते है और जब-जब जहाँ पर भी जीव दिखाई दे तो वह मरे नहीं इसलिए उसे रजोहरण से पूँजकर एक तरफ कर देते हैं। जब रात में जीव दिखाई नहीं देते हैं, उस समय रजोहरण से जमीन पूँजकर ही चलते हैं। श्रावक 24 घंटे सांसारिक कार्य करते समय साथ में रजोहरण नहीं रख सकते, परन्तु पौषध करते हैं या रात्रि में सामायिक-संवर करते हैं, तो उस समय इस रजोहरण का उपयोग कर पूँजकर चलते हैं।

### श्रावक और साधु के रजोहरण में क्या फर्क होता है ?

साधु के रजोहरण में लकड़ी की डंडी पर सफेद वस्त्र बँधा रहता है। इस वस्त्र को नसित्थिया कहते हैं। श्रावक के रजोहरण पर यह कपड़ा नहीं होता है।

- **रजोहरण का उपयोग करने से क्या लाभ होता है ?**

  रजोहरण के उपयोग से बहुत लाभ होते हैं—1. तीर्थंकर भगवान की आज्ञा का पालन होता है। 2. चींटी, मकोड़े, कुंथवा, मकड़ी, खटमल जैसे अनेक बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय जीवों की यतना होती है। 3. इसका दूसरा नाम धर्मध्वज भी है। यह साथ में रहने से साधुरूप की पहचान होती है। जैनधर्म का गौरव बढ़ता है।

यह ओघा ही संसार ओघ (समंदर) से बाहर निकालता है।
ऐसा महान् है यह ओघा।

# श्रमण निर्ग्रंथ के सुख की तुलना

(सूत्र श्री भगवतीजी शतक १४, उद्देशक ९)

| संयम पालन से | देवों के सुख को उल्लंघे |
|---|---|
| 1. एक मास शुद्ध संयम पालन से | — वाणव्यंतर देवों के सुख का उल्लंधन करता है। |
| 2. दो मास शुद्ध संयम पालन से | — नौ निकाय देवों के सुख का उल्लंघन करता है। |
| 3. तीन मास शुद्ध संयम पालन से | — असुरकुमार देवों के सुख का उल्लंघन करता है। |
| 4. चार मास शुद्ध संयम पालन से | — ग्रह, नक्षत्र, तारा, देवों के सुख का उल्लंघन करता है। |
| 5. पाँच मास शुद्ध संयम पालन से | — चन्द्र-सूर्य देवों के सुख का उल्लंघन करता है। |
| 6. छह मास शुद्ध संयम पालन से | — पहले, दूसरे देवलोक के देवों के सुख का उल्लंघन करता है। |
| 7. सात मास शुद्ध संयम पालन से | — तीसरे, चौथे देवलोक के देवों के सुख का उल्लघंन करता है। |
| 8. आठ मास शुद्ध संयम पालन से | — पाँचवे, छठे देवलोक के देवों के सुख का उल्लंघन करता है। |
| 9. नौ मास शुद्ध संयम पालन से | — सातवें, आठवें देवलोक के देवों के सुख का उल्लंघन करा है। |
| 10. दस मास शुद्ध संयम पालन से | — नौ से बारह देवलोक के देवों के सुख का उल्लंघन करता है। |
| 11. ग्यारह मास शुद्ध संयम पालन से | — नौ ग्रैवेयक देवों के सुख का उल्लंघन करता है। |
| 12. बारह मास शुद्ध संयम पालन से | — पाँच अनुत्तर विमान देवों के सुख का उल्लंघन करता है। |

इससे अधिक शुद्ध संयम पाले, तो उसी भव में सिद्ध-बुद्ध-मुक्त बने।

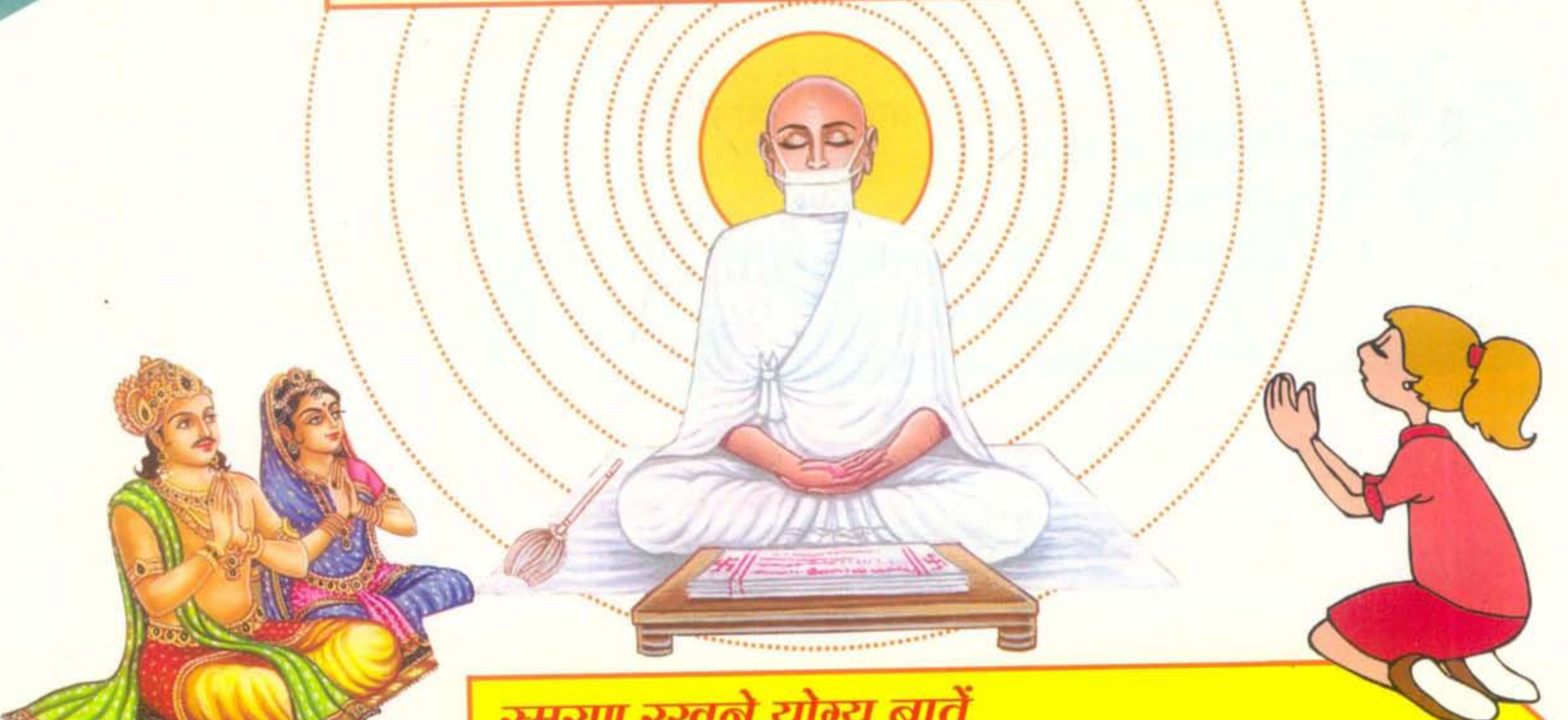

## स्मरण रखने योग्य बातें

- धार्मिक उपकरणों के प्रति आदर भाव, अहो भाव और उन्नत भाव बने रहें, तो साधक अपनी साधना को महान् बना लेता है।
- ओघा कूड़ा-कचरा निकालने का साधन नहीं है किन्तु कर्मों का कूड़ा-कचरा निकालने का एक धार्मिक उपकरण है, जिसे सहेज कर रखना चाहिए।

# आर्य वज्रस्वामी

अवन्ती देश में तुम्बवन ग्राम था। वहाँ पर इब्भपुत्र धनगिरि था। धनगिरि एक धर्मपरायण व्यक्ति था। धनपाल श्रेष्ठी ने अपनी सुपुत्री सुनन्दा का विवाह धनगिरि के साथ करना चाहा। जब धनपाल का प्रस्ताव धनगिरि के सामने आया तब धनगिरि ने स्पष्ट रूप से प्रस्ताव को अस्वीकार करते हुए कहा कि मैं विवाह नहीं करूँगा, संयम लूँगा। धनपाल के अत्यधिक आग्रह पर धनगिरि को सुनन्दा के साथ विवाह करना पड़ा, पर उसका मन संसार में न लगा।

अपनी पत्नी को गर्भवती छोड़कर ही उन्होंने आर्य सिंहगिरि के पास दीक्षा ग्रहण की। बाद में बच्चे का जन्म हुआ। थोड़ा बड़ा होने पर बच्चे ने महिलाओं के मुँह से सुना कि पिता धनगिरि ने दीक्षा ली है। यह सुनते ही बच्चे को जातिस्मरण ज्ञान हुआ। उसने सोचा माता का मेरे प्रति अपार मोह है क्योंकि एकमात्र मैं ही उसकी आँखों का सितारा हूँ। मोह के कारण माता मुझे कभी भी दीक्षा की अनुमति नहीं दे सकेगी। अतः माता के मोह को कम करने के लिए वह दिन-रात जोर-जोर से रोने लगा। माता सुनन्दा को न खाते चैन था, न बैठे चैन था। वह बालक से बहुत ही परेशान हो गई।

आर्य सिंहगिरि परिभ्रमण करते हुए तुम्बवन में पधारे। जब धनगिरि भिक्षा के लिए जाने लगे तब आर्य सिंहगिरि ने शुभ लक्षण देखकर अपने शिष्यों को आदेश दिया कि भिक्षा में जो भी सचित्त और अचित्त वस्तु मिल जाये उसे बिना विचारे ले लेना।

धनगिरि अन्य स्थानों पर भिक्षा लेने के पश्चात् सुनन्दा के यहाँ पर पहुँचे। सुनन्दा बच्चे से ऊब गई थी। ज्योंहि भिक्षा पात्र आगे रखा कि सुनन्दा ने आवेश में आकर बालक को पात्र में रख दिया और वह बोली—"आप तो चले गये और इसे पीछे छोड़ दिया, रो-रोकर इसने मुझे परेशान कर दिया, अब इसे आप ले जाइए।"

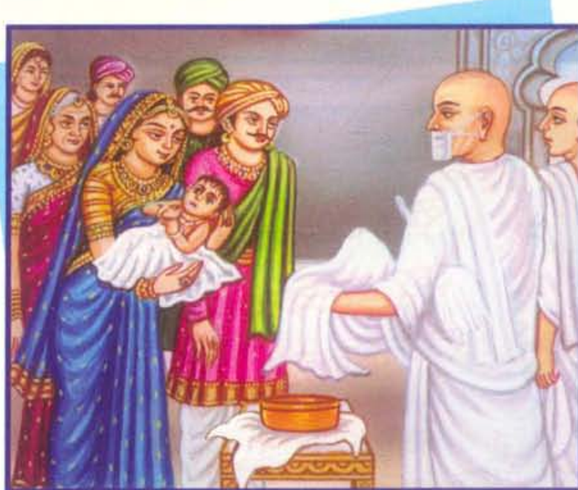

धनगिरि ने कहा—"सुनन्दा! तुम यह निर्णय भावुकता के वश में कर रही हो, बाद में तुम्हें विचार न करना पड़े, यह पहले सोच लेना।"

सुनन्दा बोली—"मैंने खूब अच्छी तरह सोच लिया है। मुझे अब इसकी जरूरत नहीं है, इसे आप ले जाइए।"

धनगिरि ने छह मास के बालक को ले लिया और लाकर गुरु को सौंप दिया। अति भारी होने से बच्चे का नाम आचार्य ने वज्र रख दिया। पालन-पोषण हेतु उसे गृहस्थ को दे दिया। श्राविका के साथ वह उपाश्रय आता। साध्वियों के सम्पर्क में रहने से और निरन्तर स्वाध्याय सुनने से उसे ग्यारह अंग कंठस्थ हो गये। अब बच्चा तीन वर्ष का हुआ तब सुनन्दा ने पुनः धनगिरि से पुत्र की याचना की। धनगिरि ने कहा—"अब हम इसे नहीं दे सकते।" सुनन्दा ने राजा से जाकर प्रार्थना की कि मेरा पुत्र मुझे मिलना चाहिए।

राजा ने आदेश दिया कि राजसभा में एक ओर इसके पिता बैठें और दूसरी ओर इसकी माता बैठे। बीच में बालक रहे। माता-पिता बालक को अपने पास बुलाये। यदि बालक माता के पास चला जाय तो बालक पर माता का अधिकार रहेगा। यदि पिता के बुलाने पर पिता के पास जायेगा तो पिता का। सुनन्दा, मुनि धनगिरि और वज्र को राजसभा में बुलाया गया, सुनन्दा अपने साथ विविध प्रकार के खिलौने ले गई थी। मेवे-मिठाइयाँ ले गई थी, वस्त्राभूषण ले गई थी। उन सभी को दिखाकर वह वज्र को अपनी ओर बुलाने लगी। पर वज्र ने उधर आँख उठाकर भी नहीं देखा। जब धनगिरि ने अपने हाथ में रजोहरण लेकर बुलाया तो वज्र ने दौड़कर रजोहरण उठा लिया। इसलिए राजा ने निर्णय दिया कि वज्र को मुनि धनगिरि को ही सौंपा जाए। यह देखकर सुनन्दा को वैराग्य आया और उसने भी दीक्षा ग्रहण की। ग्रंथकारों का मंतव्य है कि वज्र कुमार ने भी लघुवय में दीक्षा ली।

एक दिन आचार्य सन्तों के साथ बहिर्भूमि के लिए गये। वज्रमुनि अकेले उपाश्रय में थे। सन्तों के भण्डोपकरण को लक्ष्य में लेकर आगमों का अध्ययन करवाने लगे। अध्ययन की शैली अत्यन्त सुन्दर थी। आचार्य आये, उन्होंने मकान के बाहर खड़े रहकर सुना, बड़े प्रभावित हुए, फिर उन्होंने समग्र शास्त्रों का अध्ययन करवाया। वज्रमुनि की विद्वत्ता से प्रभावित होकर पाँच सौ मुनि उनके संघ में सम्मिलित हुए।

पाटलीपुत्र के इभ्यश्रेष्ठी धनदेव की पुत्री रुक्मिणी अनुपम सुन्दरी थीं। लोगों के मुँह से उसने वज्रस्वामी के दिव्य और भव्य रूप के वखाण सुने थे, उनके गुणों की चर्चाएँ सुनी थीं। उसने यह प्रतिज्ञा ग्रहण की कि वज्रस्वामी के अतिरिक्त मैं किसी को भी पति के रूप में ग्रहण नहीं करूँगी।

एक समय वज्रस्वामी पाटलीपुत्र पधारे। धनश्रेष्ठी ने भी पुत्री के साथ करोड़ों की सम्पत्ति दहेज में देने का प्रस्ताव दिया, पर तनिक मात्र भी वे कनक और कान्ता के मोह में उलझे नहीं, किन्तु रुक्मिणी को प्रतिबोध देकर प्रव्रज्या प्रदान की।

ईस्वी सन् 646 में चीनी यात्री हुएनत्साँग भारत आया था। नालन्दा से वह पुनः अपने देश जाना चाहता था, किन्तु असहाय था। उस समय वज्रस्वामी

ने उससे कहा—"तुम चिन्ता न करो। असम के राजा कुमार और कान्यकुब्ज के राजा श्रीहर्ष तुम्हारी सहायता करेंगे। राजा कुमार का दूत तुम्हें लिवाने के लिए आ रहा है।" वज्रस्वामी की ये भविष्यवाणियाँ पूर्ण सत्य सिद्ध हुईं। हुएनत्साँग ने अपनी यात्रा की पुस्तक में उनका महान् भविष्य द्रष्टा के रूप में उल्लेख किया है।

अपना अन्तिम समय सन्निकट समझ अपने शिष्य वज्रसेन से कहा—"द्वादश वर्षीय दुष्काल पड़ेगा अत: साधु संघ के साथ तुम सौराष्ट्र और कोंकण प्रदेश में जाओ और मैं रथावर्त्त पर्वत पर अनशन करने जाता हूँ। जिस दिन तुम्हें लक्ष मूल्य वाले चावल में से भिक्षा प्राप्त हो उसके दूसरे दिन सुकाल होगा, ऐसा कह आचार्य संथारा करने हेतु चले गये।

वज्रस्वामी का जन्म वीर निर्वाण सं. 496 में हुआ। 504 में दीक्षा ली। 536 में आचार्य पद पर आसीन हुए और 584 में स्वर्गस्थ हुए।

आर्य वज्रस्वामी के पट्ट पर आर्य वज्रसेन आसीन हुए। वज्रस्वामी की भविष्यवाणी के अनुसार उस समय भयंकर दुष्काल पड़ा। निर्दोष भिक्षा का मिलना असम्भव हो गया जिसके कारण 784 श्रमण अनशन कर परलोकवासी हुए।

भूख से सभी छटपटाने लगे। जिनदास श्रेष्ठी ने एक लाख दीनार से एक अंजलि अन्न मोल लिया। वह दलिया में विष मिलाकर रखने की तैयारी कर रहा था कि वज्रस्वामी के कहने के अनुसार आचार्य वज्रसेन ने सुभिक्ष की घोषणा की और सभी के प्राणों की रक्षा की। दूसरे दिन अन्न से परिपूर्ण जहाज आ गये। जिनदास ने वह अन्न खरीद लिया और गरीब व्यक्तियों को बिना मूल्य लिए वितरण कर दिया। कुछ समय के पश्चात् वर्षा हुई सर्वत्र आनन्द की उर्मियाँ उछलने लगीं।

वज्रस्वामी के चमत्कारों की अनेक घटनाएँ जैन साहित्य में प्रसिद्ध हैं।

## क्या आपको पता है, इस बालक को क्यों जातिस्मरण ज्ञान हुआ?

क्योंकि यह बालक पिछले भव में देव था। एक बार गौतम स्वामी कुंडरिक-पुंडरिक अध्ययन का स्वाध्याय कर रहे थे उस समय यह देव भी गौतम स्वामी जहाँ पर थे, वहाँ क्रीड़ा (घूमने) करने आया हुआ था। इस अध्ययन को सुनकर देव को बड़ी प्रसन्नता हुई और वह देव भी इसे याद रखकर जब तक उसका आयुष्य था, तब तक हर रोज कई बार इस अध्ययन का स्वाध्याय करने लगा। यह स्वाध्याय और गौतम स्वामी के दर्शन के संस्कार के फल से इस देव को मानव भव प्राप्त हुआ और जातिस्मरण ज्ञान भी हुआ और संयम भी प्राप्त हुआ।

## सरगम

**तर्ज : तेरे जैसा यार कहाँ.....**

संयम जैसा स्थान कहाँ, कहाँ ऐसी शांति है।
आराधन करे जो भी, आत्मिक उत्क्रांति है॥टेर॥
अनंतों को पार लगाया, शाश्वत सुख दिला के,
एकाभवतारी बनाया, सर्वार्थसिद्ध पहुँचाके,
अनादि मिथ्यात्वी को, अन्तर्मुहूर्त्त में शांति है॥1॥
भयंकर रोग मिटाया, अनाथी मुनि का इसने,
प्रतिज्ञा इसकी करते ही, शांति पायी जिसने,
कर्मों का क्षय करके, मिटा ली भव भ्रांति है॥2॥
संयमी रूप को देखकर, जातिस्मरण को पाया,
मृगापुत्र को देखा, दृढ़ वैराग्य है आया,
आओ ऐसे स्थानों में, अनादि परिश्रांति है,
संयम पालो तन मन से, मोक्ष में विश्रांति है॥3॥

## व्रत किसे कहते हैं?

जीवन को मर्यादित बनाने के लिए, आत्म कल्याण के लिए बिना जरूरत की (demands) चीजों को कम करने के लिए, अनर्थ के पाप से बचने के लिए जो नियम स्वीकार किये जाते हैं, उन्हें व्रत कहते हैं।

व्रत को धारण करने से अहिंसा और अपरिग्रह व्रत की रक्षा होती है। जैसे हमारे सामने नाना प्रकार की भोजन सामग्री रखी है, नये-नये वस्त्र रखे हैं, कई मुखवास सामने हैं। पर हमने व्रत लिया है - मैं सिर्फ 7 वस्तुऐं खाऊँगा, दो सूती वस्त्र पहनूँगा, मात्र इलायची का मुखवास लूँगा इत्यादि मर्यादा करके अन्य भोग साधनों का त्याग करने से मन में लालसा व इच्छा घट जाती है।

व्रत-नियम कोई बंधन नहीं, किन्तु कर्मों के बंधन से मुक्त करने वाले हैं। जैसे—

**1. पानी के लिए मटका, 2. हवा के लिए ट्यूब, 3. पावर के लिए बल्ब, 4. शर्ट के लिए बटन, 5. पैंट के लिए बैल्ट, 6. दरवाजे के लिए कुंटा, 7. मुँहपत्ति के लिए डोरा बंधन रूपी होने पर भी उनके महत्व एवं उपयोग को बढ़ाने वाला है।** इसी प्रकार व्रत-नियम बंधन रूप होने पर भी हमारे जीवन को सुव्यवस्थित करने वाले हैं। इस प्रकार व्रत-नियम बंधन नहीं, परन्तु आत्मा की सुरक्षा है।

जब कभी हमारे मन में व्रत-नियम पालने के हल्के भाव आये तो हमें गुरु भगवंत को याद करना चाहिए कि कठिन व्रतनियमों का पालन करते हुए भी वे अपना साधुपना कितनी सहजता से पालते हैं। संयम में रहकर भी कई तपस्याएँ करते हैं। वैराग्यमय जीवन जीते हैं। गुरु भगवंतों की पहचान है व्रत-नियम का पालन। अगर हम व्रत-नियम के पालन में ढीले पड़ जायेंगे तो दृढ़ श्रावक-श्राविका कैसे बन पायेंगे ?

### व्रत के सम्बन्ध में ध्यान देने योग्य बातें—

1. व्रत प्रत्याख्यान सोच-समझकर धारण करने चाहिए।
2. लिए हुए व्रत को आत्म साक्षी से पालने चाहिए।
3. लिए हुए व्रत को समय-समय पर याद करके सजग (alert) रहना चाहिए।
4. जब कभी व्रत-नियम में कोई दोष लग जाये, तो गुरु भगवंत से प्रायश्चित्त लेकर आलोचना कर लेनी चाहिए।
5. "प्राण जाये पर वचन न जाए" इस प्रकार दृढ़तापूर्वक व्रतों का पालन करना चाहिए।

### निर्मल व्रत के पालन से क्या लाभ होता है?

1. आत्मा के लिए हितकारी है। जीवन मर्यादित बनता है।
2. राग-द्वेष कम होते हैं। पापों से बच सकते हैं।
3. स्वास्थ्य ठीक रहता है।
4. इच्छाओं पर अंकुश लगता है।
5. जितना त्याग बढ़ता है, उतना ही जीवन सुखी बनता है।

नित्य के छोटे-छोटे व्रत-नियमों से आत्मा कर्मों के भार से हल्की होती है। इसलिए हमें प्रतिदिन कुछ न कुछ व्रत-नियम अवश्य ग्रहण करने चाहिए। छोटे-छोटे व्रतों को धारण करने से ही आत्मा त्याग के पथ पर आगे बढ़ती हुई सिद्ध-बुद्ध-मुक्त बन सकती है।

यहाँ एक गेम दिया जा रहा है जिसमें कुछ नम्बर हैं। उन पर अपनी अंगुली फिराएँ, जिस नम्बर पर अंगुली आये उस नम्बर वाला नीचे लिखा नियम आप ग्रहण करें, बच्चों से करवाएँ। आत्मा को पावन बनाएँ–

| | | | | | | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 14 | 1 | 10 | 8 | 2 | 4 | 7 | 13 | 3 | 6 | 11 | 4 | 5 | 8 | |
| 2 | 13 | | 3 | 8 | | 9 | 5 | 4 | 15 | 6 | 7 | 11 | 1 | 10 |
| 9 | 5 | 12 | 1 | 7 | 2 | 15 | 3 | 11 | 7 | 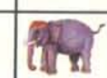 | | 13 | 8 | 2 |
| | 9 | 2 | 6 | 10 | 4 | 11 | 1 | | 15 | 3 | 8 | 7 | 14 | |
| 3 | 11 | 7 | 10 | 5 | 14 | 9 | 12 | 8 | 6 | 2 | 11 | 10 | 4 | 1 |
| 13 | 14 | 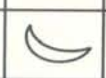 | 8 | 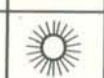 | 15 | 1 | 5 | 9 | 10 | 2 | 4 | 6 | 3 | 7 |
| 10 | 8 | 14 | 1 | 7 | 5 | 10 | | 2 | 8 | 15 | 3 | 9 | 11 | 4 |
| | 15 | 1 | 14 | 2 | 4 | 13 | 6 | 3 | 12 | 8 | 5 | 11 | 7 | 10 |
| 1 | 9 | 4 | 3 | 7 | 14 | | 2 | 11 | 6 | 10 | 5 | 8 | 12 | |
| 10 | 2 | 15 | 4 | | 5 | 14 | | 7 | | 8 | 3 | 10 | 6 | 1 |
| | 6 | 3 | 7 | 1 | 8 | 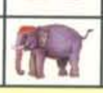 | 5 | 9 | 12 | 10 | 15 | 4 | 2 | 11 |

1. प्रातः उठकर तीन बार नवकार गिनना। 2. हरी घास पर नहीं चलना। 3. खाना झूठा नहीं डालना। 4. प्रातः उठकर तीन बार तिक्खुत्तो के पाठ से वंदना करना। 5. "श्री महावीराय नमः" नव बार बोलें। 6. "मेरा भला, तेरा भला, सबका भला" नव बार बोलें। 7. अपना काम स्वयं करना। 8. सोते समय 7 बार और उठते समय 8 बार नवकार गिनें 9. आज दिनभर में आधा घंटा मौन। 10. "मुझे वीतराग बनना हैं" एक माला फेरना। 11. भोजन करते समय टी.वी. नहीं देखना। 12. ऊपर से नमक नहीं लेना। 13. "नमो नाणस्स" की एक माला। 14. काँच में मुँह (चेहरा) नहीं देखना। 15. फ्रिज का पानी नहीं पीना।

अपने नाम के पहले अक्षर से प्रारम्भ एक वस्तु का त्याग करना।

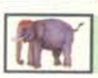 मुँहपत्ति बाँधकर 11 नवकार का जाप करना

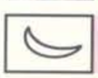 North-East के बीच में सीमंधर स्वामी को तीन वंदन करना।

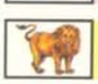 एक पेंसिल किसी गरीब बच्चे को दान देना

1 से 24 तीर्थंकर के नाम बोलना

## चौदह नियम

समुद्र जितने पाप को
बूँद जितना बनाने वाले,
पर्वत जितने पाप को
राई जितना बनाने वाले
ये छोटे-छोटे नियम.....

हमारे दैनिक जीवन में उपयोग में आने वाली बहुत-सी वस्तुएँ बड़े-बड़े कारखानों में बनती हैं, जहाँ अग्नि की भट्टियाँ दिन-रात जलती रहती हैं। भरपूर पानी व Electricity का उपयोग होता है। त्रस-स्थावर जीवों की निरंतर हिंसा होती रहती है। उसमें बनने वाली वस्तुओं का उपयोग करने या नहीं करने पर भी पच्चक्खाण नहीं लेने से हम उस सारे पाप के भागीदार बनते हैं।

इसलिए 14 नियमों को धारणकर अपनी आत्मा को पाप से बचाएँ। प्रतिदिन के लिए मर्यादा रखने वाले पदार्थ–

## श्रावक के चौदह नियम

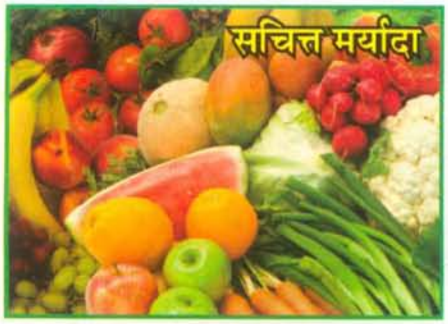


**15 से अधिक सचित्त का त्याग**
जीव सहित वस्तु अर्थात् नमक, कच्चा पानी, फल, फूल, मूल, शाक, बीज आदि कोई भी सचित्त वस्तु, जो छेदन-भेदन होकर तथा अग्नि आदि का शस्त्र पाकर अचित्त न हुई हो, उसका परिमाण करना।

**50 द्रव्य के उपरान्त त्याग**
रोटी, दाल, भात आदि द्रव्यों का परिमाण करना।
(जितना स्वाद बदलता जाए, उतने ही प्रकार के द्रव्य समझना।)

**एक विगय एवं महाविगय का त्याग**
दूध, दही, घी, तेल, मिठाई आदि
महाविगय - मक्खण, शहद आदि....

**चार जोड़ी के अलावा सबके त्याग**
जूते, चप्पल, मौजे आदि.....

**दस मुखवास के उपरान्त त्याग**
पान, सुपारी, चूर्ण,
लौंग, इलायची आदि.....

**चार जोड़ी वस्त्र के सिवाय त्याग**
पहनने-ओढ़ने के सारे वस्त्रों की.....

**दो प्रकार के कुसुम के सिवाय सबका त्याग**
सूँघने की वस्तु–फूल, इत्र आदि.....

**स्कूटर, कार के सिवाय सबका त्याग**
साईकिल, स्कूटर, कार, रेल,
हाथी, घोड़ा आदि.....

**मेरे घर को छोड़, 10 घर के उपरान्त त्याग**
पलंग, खाट, बिछौने आदि.....

**दो प्रकार के विलेपन के उपरान्त त्याग**
केसर, चंदन, तेल, उबटन आदि.....

**आज अब्रह्मचर्य सेवन का त्याग**
मैथुन-सेवन, गन्दे चित्र, गन्दे साहित्य, टी.वी. का त्याग करना।

**छहों दिशा में 10 कि. मी. के आगे जाने का त्याग**
ऊँची, नीची, तिरछी दिशा में जाने की.....

**स्वयं स्नान के लिए 4 बाल्टी से अधिक लेने का त्याग**
स्नान के जल की मर्यादा

**छोटा व बड़ा भोजन की मर्यादा करना**
गुलाब जामुन, जलेबी, रसगुल्ला, रसमलाई, चमचम, पाँच मिष्ठान से अधिक लेने का त्याग।

*प्रतिदिन चौदह नियम लेने पर अविरत आस्रव में बहुत रोक लग जाती है। यदि किसी दिन चौदह नियम न लिए जा सकें तो जितने नियम लेने की शक्ति-सामर्थ्य हो उतने नियम अवश्य ग्रहण करने चाहिए।*

## पच्चक्खाण लेने का पाठ

इस प्रकार मैंने जो मर्यादा व आगार रखे हैं, उसके उपरांत उपयोग सहित त्याग, **"एगविंह तिविहेणं न करेमि मणसा वयसा कायसा तस्स भंते! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।"**

**विशेष ज्ञातव्य :** कभी परिस्थितिवश नियम टूट रहा हो, तो 3 बार नवकार गिनकर खुले हो सकते हैं।

## पच्चक्खाण पारने का पाठ

मैंने अहोरात्रि के लिए द्रव्यादि की मर्यादा करके शेष का पच्चक्खाण किया है—**तं सम्मं काएणं न फासियं, न पालियं, न तीरियं, न किट्टियं, न सोहियं, न आराहियं, आणाए अणुपालियं न भवई तस्स मिच्छामि दुक्कडं।**

**अथवा** कल धारण किए नियमों में कोई दोष लगा हो तो मिच्छामि दुक्कडं।

# P FOR PRATIKRAMAN प्रतिक्रमण

## कर्मों के अतिक्रमण का प्रतिक्रमण करना

प्रतिक्रमण अर्थात् प्रति = पीछे, क्रमण = हटना

पश्चाताप पूर्वक पाप से पीछे हटने की क्रिया।

"जिस प्रकार जज (न्यायाधीश) के सामने एक आरोपी अपनी भूल को स्वीकार करता है, उसी प्रकार प्रतिक्रमण करते समय अपने द्वारा हुए पापों को स्वीकार करना चाहिए। इस प्रकार सच्चे भावपूर्वक प्रतिक्रमण करने से पाप धुल जाते हैं, कर्म नष्ट हो जाते हैं।"

जिनाज्ञा के पालन के लिए प्रतिदिन प्रतिक्रमण अवश्य करना चाहिए।

जिस प्रकार वस्त्र प्रतिदिन धोए जाते हैं, घर में से कचरा प्रतिदिन बाहर निकाला जाता है। भोजन करने के बर्तन प्रतिदिन माँजे जाते हैं, भोजन की मेज-डायनिंग टेबल प्रतिदिन साफ की जाती है, उसी प्रकार आत्मा पर लग रहे पाप रूपी कचरे को साफ करने के लिए प्रतिक्रमण प्रतिदिन करना चाहिए। यह बात अच्छी तरह समझ गये हैं, तो अब प्रतिक्रमण करते रहना।

**प्रतिक्रमण करने से लाभ**—उपाध्याय श्री यशोविजय जी म. सा. ने कहा है कि सैंकड़ों वर्षों से रहा हुआ अंधेरा जिस प्रकार एक रोशनी का स्विच दबाने से या दियासलाई जलाने मात्र से दूर भाग जाता है, उसी प्रकार प्रतिक्रमण की क्रिया शुद्ध भावपूर्वक करने से आत्मा में रहे हुए भव-भव के पाप नष्ट हो जाते हैं।

प्रतिक्रमण करने के लिए किसी को उपदेश—प्रेरणा देने पर 10 करोड़ गायों को अभयदान देने जितना फल मिलता है। प्रतिक्रमण देवसी (Day), राइसी (Night), पाक्षिक (Fifteenth Night), चातुर्मासिक (4 months) और सांवत्सरिक (Yearly)—पाँच प्रकार का होता है। इसी तरह मिथ्यात्व, अव्रत, प्रमाद, कषाय और अशुभ योग, ये पाँच प्रकार के प्रतिक्रमण भी होते हैं।

हम जो पाप करते हैं, उन पाप कर्मों से हमारी आत्मा भारी हो जाती है। कर्म से भारी आत्मा नरक और तिर्यंच गति में भटकती रहती है। अगर इसे सुगति में ले जाना हो, तो इन पाप कर्मों का नाश करना पड़ता है। इन पाप कर्मों का नाश करने के लिए सरलता के साथ शुद्ध हृदय से गुरुभगवंत के समक्ष पापों को प्रकट करना आलोचना है। पापों से बंधे हुए कर्मों को दूर करने के लिए प्रायश्चित रूप में तप या सामायिक करने को गुरु प्रेरणा देते हैं। उसे विधि सहित पूर्ण करने पर हमारी आत्मा पाप से मुक्त हो जाती है।

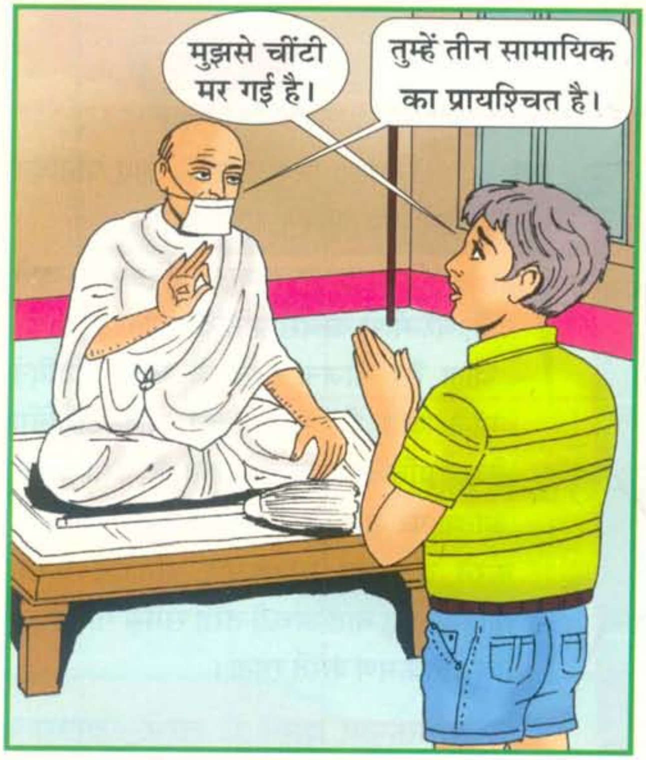


## स्मरण रखने योग्य बातें

- पश्चात्ताप वह आग है, जिससे कर्म समूह जलकर खाक हो जाता है।
- सच्चा पश्चात्ताप वह होता है जिसमें व्यक्ति पुनः वह पाप नहीं करने का संकल्प लेता है। पुनः-पुनः उसी पाप को करते रहने से पश्चात्ताप की सार्थकता प्राप्त नहीं होती।
- सम्यक्त्व की प्राप्ति करके मिथ्यात्व का प्रतिक्रमण महाराजा श्रेणिक ने किया, व्रत ग्रहण कर अरणक अणगार ने अव्रत का प्रतिक्रमण किया। महाराजा परदेशी ने प्रमाद का प्रतिक्रमण किया। कषाय का प्रतिक्रमण चंडकौशिक नाग ने किया। अशुभ योग का प्रतिक्रमण प्रसन्नचन्द्र राजर्षि ने किया।

## सरगम

(तर्ज : तुझको पुकारे मेरे.....)

जैन धर्म को पाया पुण्य से, सच्चा जैनी बनूँ मैं ये ही भाव है॥टेर॥

1. 14 राजू का, लोक ये सारा मैंने, देख लिया है, होऽऽऽऽ
चार गति का, सुख दुःख मैंने सारा, जान लिया है,
अब तो थका हूँ भरपूर, हो (2).. सच्चा जैनी..... ॥1॥
2. कितना ही पानी, कितना ही भोजन इसमें, डाल चुका हूँ, होऽऽऽऽ
फिर भी ये खाली, रहता है किंतु मैं तो, हार चुका हूँ
अनशन को लेके छोडूँ देह को, हो (2).. सच्चा जैनी..... ॥2॥
3. पूर्व भवों में, कर्म जो बाँधे सारे, भोग रहा हूँ, होऽऽऽऽ
जंजीर ऐसी, डाली जो मैंने खुद से, खोल रहा हूँ,
मुक्त बने ये मेरी आत्मा, हो (2).. सच्चा जैनी..... ॥3॥

## अठारह पाप के फल

*पाप हँसते-हँसते बँधते हैं, जब उदय में आते हैं तो हम रोते हैं। कर्माधीन यह जीव गर्भ में क्यों मरता है? भिखमंगा क्यों बनता है? कौआ, सर्प आदि पशु योनि में क्यों जाता है? इन बातों की जानकारी करें एवं पाप से बचें—*

| क्रम | पाप के नाम | इस भव में | आते भव में |
|---|---|---|---|
| 1. | प्राणातिपात | हिंसा (हत्या) करे तो | अल्पायुषी (युवा, बाल) गर्भ में मरे। |
| 2. | मृषावाद | झूठ बोले तो | गूंगा, बेसुरा बने। |
| 3. | अदत्तादान | चोरी करे तो | बिना हाथ-पैर, आँख-कान का बने। |
| 4. | मैथुन | बलात्कार करे तो | नपुंसक बने। |
| 5. | परिग्रह | एक पैसा भी दान न दे तो | भिखमंगा, दरिद्री बने। |
| 6. | क्रोध | क्रोध करे तो | सर्प, बिच्छु, सिंह, बंदर बने। |
| 7. | मान | मान करे तो | चांडाल, दास, भेड़िया, बकरा बने। |
| 8. | माया | माया करे तो | स्त्री बने, जेल में जावे। |
| 9. | लोभ | लोभ करे तो | व्यापार में खोट आवे, धरोहर डूबे। |
| 10. | राग | राग करे तो | अधिक तुच्छ परिवार वाला बने। |
| 11. | द्वेष | द्वेष करे तो | नीच कुल, सूअर, कुत्ता बने। |
| 12. | कलह | कलह करे तो | कुटुम्ब, मित्रादि क्लेशमय मिले। |
| 13. | अभ्याख्यान | कलंक लगावे तो | सीता-अंजना जैसी दशा होवे। |
| 14. | पैशुन्य | चुगली करे तो | चील, शिकारी आदि से परेशान होवे। |
| 15. | परपरिवाद | निंदा करे तो | कोढ़ी (दुर्गंधी, कुवर्ण) कुरूप बने। |
| 16. | रति-अरति | रति-अरति करे तो | जंगल में भील, बिल्ली आदि बने। |
| 17. | माया-मृषा | कपट सहित झूठ बोले तो | कौआ, चील आदि बने। |
| 18. | मिथ्यादर्शन शल्य | कुदेव-कुगुरु को वंदे तो | ऊँट, पाड़ा, गधा आदि बने। |



## आनंद श्रावक (प्रायश्चित्त)

वाणिज्यग्राम नगर में **'जितशत्रु'** नाम का राजा राज्य करता था। उसी नगर में आनंद नाम का एक महान ऋद्धिवान गृहस्थ रहता था। उसकी पत्नी का नाम **'शिवानंदा'** था, जो रूपवती और गुणसंपन्न थी।

**आनंद श्रावक की ऋद्धि—**आनंद के पास चार करोड़ स्वर्णमुद्राओं का भंडार था, चार करोड़ स्वर्णमुद्रा व्यापार में लगाई हुई थीं और चार करोड़ स्वर्णमुद्रा धन और घर की चीजों में लगी हुई थीं। उसके पास 40,000 गायों के चार गोकुल थे। पाँच सौ गाड़ियाँ व्यापार की चीजें लाने में तथा पाँच सौ गाड़ियाँ गोकुल की घास तथा अन्य सामान लाने-ले जाने के काम में आती थी। चार जहाज परदेश में व्यापार के काम में आते थे। आनंद जितने वैभवशाली थे, उतने ही बुद्धिमान, उदार और लोगों के विश्वासपात्र थे।

**आनंद श्रावक को समकित प्राप्ति—**एक बार भगवान महावीर वाणिज्य ग्राम नगर के द्युतिपलाश उद्यान में पधारे। राजा, प्रजा एवं आनंद भी उनके दर्शन और वंदन करने

गये। भगवान का वैराग्यपरक उपदेश सुनकर आनन्द को **समकित (सच्ची समझ) की प्राप्ति हुई और उन्होंने श्रावक के 12 व्रत धारण किए।**

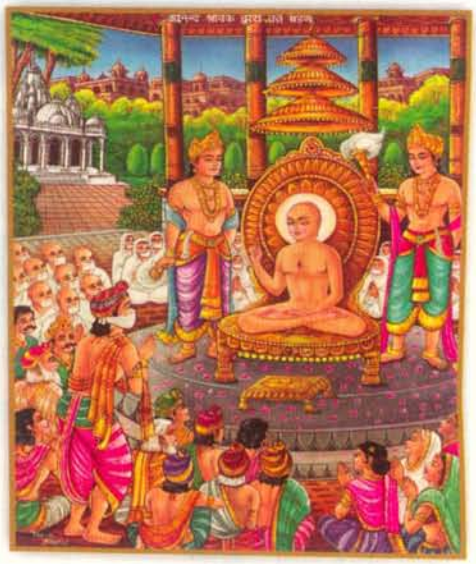

**आनंद और शिवानंदा दोनों बने बारह व्रतधारी**—आनंद श्रावक भगवान को वंदन करके घर की ओर चले। आज उन्हें सच्ची समझ प्राप्त हुई, इसलिए वो आनन्द में थे। वे खुद को धन्य मान रहे और पत्नी को भी ऐसा महालाभ दिलाने घर पहुँचे। घर जाकर पत्नी से कहा—"आज का दिन हमारे लिए परम कल्याणकारी है, ऐसा लाभ फिर नहीं मिलेगा। हमारे नगर के बाहर श्रमण भगवान महावीर पधारे हैं। उनकी पावन वाणी से प्रेरणा पाकर मैंने श्रावक के 12 व्रत धारण किये हैं। आप भी वहाँ जाकर भगवान को वंदन नमस्कार करके, व्रत धारण करके, श्राविका बनकर, मानव-जन्म को सफल बना लो।" **पत्नी शिवानंदा, आनंद श्रावक के वचन सुनकर आनन्दित हुई। वह भी प्रभु के पास जाकर 12 व्रतधारी श्राविका बन गई।**

**आनंद श्रावक ने ग्यारह पडिमा धारण की**—आनंद श्रावक के 12 व्रत धारण करने का 15वाँ वर्ष चल रहा था। उन्होंने अपने बड़े पुत्र को सारा कारोबार सौंपा और धर्मध्यान में लग गये। वे कोल्लाक सन्निवेश की पौषधशाला में श्रावक की 11 पडिमा (विशेष नियम) धारकर रहने लगे। इन 11 पाडिमाओं की आराधना करने में पाँच साल 6 माह लगे। उनका शरीर तप-त्याग के कारण दुर्बल और खून-माँस के बिना सूख गया था। उनके शरीर में से हड्डियाँ और नसें दिखने लगीं तथा उनसे उठा-बैठा भी नहीं जाता था।

**आनंद श्रावक का संथारा**—एक रात्रि को धर्मचिंतन करते उन्होंने सोचा कि 'अब मैं बहुत दुर्बल हो गया हूँ, परन्तु जब तक मेरी आत्मा तथा शरीर में शक्ति है, तब तक मैं मेरी अंतिम साधना कर लूँ।' ऐसा चिन्तन कर उन्होंने संथारा लेकर आहार पानी का सर्वथा त्याग कर दिया और आत्मा के शुभ भावों में रमण करने लगे। शुभभाव, सुन्दर परिणाम तथा लेश्या की शुद्धि से उन्हें **अवधिज्ञान (विशिष्ट ज्ञान)** की प्राप्ति हो गयी।

**गौतम गणधर का आगमन**—उसी समय श्रमण भगवान महावीर स्वामी उनके नगर में पधारे। गणधर गौतम छठ्ठ (बेले के) के पारणे के लिए प्रभु की आज्ञा लेकर नगर में गये। वहाँ लोग आनंद श्रावक के संथारे (संलेखना) की चर्चा कर रहे थे, यह सुनकर उन्हें आनंद श्रावक को देखने की भावना हुई। वे आनन्द श्रावक की पौषधशाला में गये। उन्हें देखकर आनंद श्रावक ने आनंदित होकर सोते-सोते ही उन्हें वंदन नमस्कार किया और कहा—**"आप मेरे नजदीक पधारिए। मैं आपके चरणों में वंदन करना चाहता हूँ। क्योंकि मुझ में इतनी शक्ति नहीं कि मैं आपके पास आ सकूँ।"** गौतम गणधर के नजदीक आते ही आनंद श्रावक ने वंदन नमस्कार करके पूछा—**"क्या श्रावक को अवधिज्ञान हो सकता है?"** गौतम गणधर ने कहा—**"हाँ।"** आनंद श्रावक ने कहा—**"मुझे अवधिज्ञान हुआ है। उत्तर दिशा में चूल्लहिमवंत पर्वत तक, शेष तीनों दिशाओं में लवण समुद्र में 500 योजन तक, नीचे पहली नरक के "लोलुच्य" नामक नरकावास तक एवं ऊपर प्रथम देवलोक की ध्वजा तक अपने अवधिज्ञान से देख रहा हूँ।"** गौतम स्वामी ने कहा—**"श्रावक को इतना विशाल अवधिज्ञान नहीं होता। आपको मिथ्यादोष न लगे, इसलिए इसकी आलोचना करो।"** आनंद श्रावक ने विस्मय से कहा—**"क्या सच बोलने वाले को भी आलोचना करनी पड़ती है?"** गणधर गौतम आनंद श्रावक की बात सुनकर भगवान महावीर के पास आये। ईर्यावहिया तथा दूसरे श्रमण सूत्र का काउसग्ग किया। भगवान को वंदन नमस्कार करके पूछ लिया कि **"भंते! आनन्द श्रावक को आलोचना करनी चाहिए या मुझे करनी चाहिए।"** भगवान ने कहा—**"आनंद श्रावक सत्य बोलते हैं, इसलिए आप उनके पास जाकर माफी माँगे।" गौतम स्वामी ने तुरन्त वापिस नगर में जाकर आनंद श्रावक से क्षमा माँगी।** चार ज्ञान के धारक, भगवान के प्रथम शिष्य का विनय कितना?..... उनके विनय को धन्य-धन्य हो.....!

प्रथम नरक, लवण समुद्र, चुल्लहिमवंत पर्वत एवं देवलोक को अपने अवधिज्ञान से देखते हुए आनन्द श्रावक

आनंद श्रावक ने **20 साल तक श्रावक धर्म** की आराधना की, **एक महीने का संलेखना** करके पंडित मरण को प्राप्त कर **पहले देवलोक में** देव के रूप में जन्म लिया। वहाँ से आयुष्य पूर्ण करके महाविदेह क्षेत्र में मनुष्य होकर, दीक्षा लेकर **मोक्ष को प्राप्त करेंगे।**

## शांति का राजमार्ग

**No Competition**
**No Comparison, No Complain**

## कम सामान, जीवन शांत

हम सब चिंता मुक्त, परेशानी मुक्त जीवन जीना चाहते हैं पर क्या हमने कभी सोचा है कि परेशानियाँ, दिक्कतें आती क्यों हैं? जीवन में कई सारी परेशानियाँ, समस्याएँ बहुत सारा सामान इकट्ठा करने से एवं उसमें आसक्ति (attachment) रखने से होती है। भगवान ने इसे परिग्रह का नाम दिया है और परिग्रह को पाप बताया है। अतः हमें शांति से जीवन जीने हेतु कम सामान, साधनों का उपयोग करना चाहिए। जीवन में अपने माता-पिता से किसी भी वस्तु को प्राप्त करने हेतु जिद्द नहीं करनी चाहिए। जिद्दी बच्चों का स्वयं का जीवन भी खराब होता है और उनके सम्पर्क में आने वाले व्यक्ति भी परेशानी महसूस करते हैं।

## अशांति क्या है ?

**अशांति समस्त दु:खों का मूल है।** यह स्वयं को भी दु:ख में डालती है और दूसरों को भी। भगवान महावीर फरमाते हैं कि यदि कैलाश पर्वत के समान सोने-चाँदी के असंख्यात (uncountable) पर्वत भी मिल जाये, तो भी लोभी मनुष्य को संतोष नहीं होता। **इच्छा आकाश के समान अनंत है।** इसलिए उसका पूर्ण होना असंभव है। इकट्ठी की गई वस्तुओं पर किसी प्रकार की आँच नहीं आए, उनकी चोरी न हो जाए आदि चिंता से मानसिक अशांति बढ़ती जाती है। संसार में **झूठ, चोरी, अन्याय, हिंसा, छल-कपट** आदि जो पाप हो रहा है, उसका कारण परिग्रह की भावना और मन की अशांति है। **ज्यादा वस्तुएँ, धन, दौलत, साधन, सुविधाओं को प्राप्त करने के लिए मानव पागल बन रहा है। इन इच्छाओं को सीमित (reduce or minimum) करेंगे तो ही शांति मिलेगी।**

### कम सामान रखने से निम्न लाभ होते हैं—

- सामान सम्भालने में परेशानी नहीं होती।
- समय की बर्बादी नहीं होती।
- जीवोत्पत्ति की सम्भावना कम रहती है।
- संतोष का भाव बना रहता है।
- अनर्थ पाप से बच जाते हैं।
- परिग्रह के पाप से बच जाते हैं।
- दुर्गति का मेहमान नहीं बनना पड़ता।
- पैसे की भी बचत हो जाती है।
- तीर्थंकर भगवान की आज्ञा का पालन होता है।
- आवश्यकता होने पर ढूँढ़ने में कठिनाई नहीं होती है।

## मन की शांति के महत्त्वपूर्ण सूत्र

1. अपनी सोच सकारात्मक रखें। सकारात्मकता का 'स' स्वर्ग के महल बनाता है जबकि नकारात्मकता का 'न' नरक की ओर ले जाता है।
2. मिजाज को हमेशा ठंडा (Cool-Cool) रखें।
3. जैसा माहौल मिले, वैसे ढ़ल जाइए।
4. खुद को हँसता-मुस्कुराता गुलाब का फूल बनाइए। अगर मुस्कुराने की आदत रहेगी, तो दूसरों के आँसू पौंछने में भी आप सफल हो जायेंगे। जो आपको अपूर्व शान्ति देगा।
5. पुरुषार्थ और भाग्य पर भरोसा रखें।

### घर की शांति में बहू की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। अतः सच्ची व अच्छी बहू की पहचान

सास की आँखों में कभी आँसू मत लाना
ससुर से कभी ऊँचे स्वर में मत बोलना
देवर को कभी तेवर मत दिखाना
ननंद का कभी आनंद मत छीनना
दादा-दादी से कभी दादागिरी मत करना
पति का कभी पतंग मत करना
जेठ का कभी rate मत करना
जेठानी की सेठानी मत बनना

## स्मरण रखने योग्य बातें

- चिंता कल की समस्याओं का समाधान नहीं कर सकती, मगर आज की शांति का हरण तो जरूर ही कर लेती है।
- जिनमें साहस है, समय है, पुरुषार्थ है और काम करने की धुन है मगर एक सहिष्णुता की कमी के कारण वे असफल हो जाते हैं।
- जिनके पास जीवन की शांति है, उनके पास और कोई सुख-सुविधा के साधन न भी हों तो भी वे संतुष्ट दिखाई देते हैं।

## सरगम

### अनुकूलता हो प्रतिकूलता हो

(तर्ज—प्यार दिवाना होता है.....)

अनुकूलता हो प्रतिकूलता हो, समभावों में रहूँ,
ऐसी शक्ति, मुझको देना, और न कुछ चाहूँ... ॥टेर॥
अपने किए कर्मों का हमको, मिलता शुभाशुभ फल,
आज इसे समता से न भोगूं, उदय आयेंगे कल,
आत्म रमण में, मशगूल हो, शुभ चिंतन को पाऊँ ॥1॥
हम चाहे दुनियाँ को बदल दे, हो ही नहीं सकता,
हम बदले तो जग बदलेगा, ये नियम सच्चा,
अपनी अनादि, आदत बदले, जागृत हो जाऊँ ॥2॥
शुभ कर्मों की रूसवाई से, विचलित ना होंगे,
कर्मों से लड़कर हम एक दिन, विजय पथ पायेंगे,
जग का, कण-कण, सुख को पाए, भावना ये भाऊँ ॥3॥
मेरी खुशी कोई छीन न सकता, हो वात्सल्य विकास,
गुरु शिक्षा से हमने पाया, ऐसा दृढ़ विश्वास,
रोते-रोते, भले ही आये, हँसते ही जाऊँ ॥4॥

## साधना की गहराई

### 24वें तीर्थंकर शासनपति भगवान महावीर स्वामी का संक्षिप्त परिचय

**पूर्व परिचय :**

| | |
|---|---|
| 1. समकित की प्राप्ति | नयसार के भव में |
| 2. समकित प्राप्ति का कारण | सुसाधुओं को निर्दोष दान |
| 3. नीच गौत्र का बंधन | मरीची के भव में |
| 4. नीच गौत्र बंध का कारण | कुल का अभिमान |
| 5. गर्भ हरण | हरिणगमेषी देव द्वारा |
| 6. गर्भ हरण तिथि | आसोज वदी तेरस |
| 7. गर्भ हरण कितने दिन बाद हुआ | 83वीं रात्रि में |
| 8. किस आरे में | अवसर्पिणी काल के चौथे आरे में। |
| 9. च्यवन | 10वें प्राणत देवलोक से |
| 10. च्यवन राशि | कन्या |

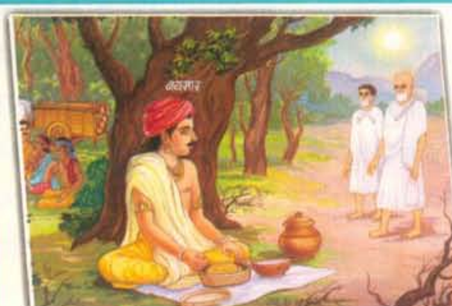

**जन्म परिचय :**

| | |
|---|---|
| 11. जन्म-स्थल | कुण्डलपुर |
| 12. जन्म-तिथि | चैत्र शुक्ला त्रयोदशी |
| 13. जन्म-समय | मध्य रात्रि |
| 14. गौत्र | काश्यप |
| 15. नाम | वर्धमान, महावीर, ज्ञातपुत्र |
| 16. वर्धमान नाम | धन-धान्य की वृद्धि होने से |
| 17. वर्ण | सुवर्ण (पीला) |
| 18. रक्त का वर्ण | श्वेत (गाय के दूध के समान) |
| 19. ऊँचाई | 7 हाथ |
| 20. चिन्ह | सिंह केसरी |
| 21. शारीरिक लक्षण | 1008 |
| 22. जन्म के समय ज्ञान | मति, श्रुत, अवधिज्ञान |

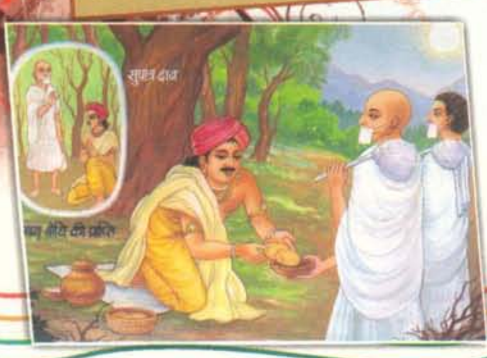

## गृहस्थ परिचय :

| | | |
|---|---|---|
| 23. | प्रथम माता | देवानंदा |
| 24. | प्रथम पिता | ऋषभदत्त |
| 25. | प्रसिद्ध माता-पिता | त्रिशला-सिद्धार्थ |
| 26. | दादोसा | सर्वार्थ राजा |
| 27. | दादीसा | श्रीमती |
| 28. | भाई | नंदीवर्धन |
| 29. | भाभी | ज्येष्ठा |
| 30. | बहन | सुदर्शना |
| 31. | पत्नी | यशोदा |
| 32. | पुत्री | प्रियदर्शना |
| 33. | जंवाई | जमाली |
| 34. | चाचा | सुपार्श्व |
| 35. | मामा | चेटक राजा |
| 36. | मामी | ज्येष्ठा |
| 37. | ससुरजी | समरवीर |
| 38. | सासुजी | धारिणी राणी |

## संयम और तप :

| | | |
|---|---|---|
| 39. | दीक्षा तिथि | मार्ग शीर्ष कृष्णा दसमी |
| 40. | दीक्षा शिविका | चन्द्रप्रभा |
| 41. | दीक्षा शिविका के निर्माता | शक्रेन्द्र |
| 42. | दीक्षा वन | ज्ञात खण्ड वन |
| 43. | दीक्षा वृक्ष | अशोक वृक्ष |
| 44. | प्रतिदिन दान | एक करोड़ आठ लाख स्वर्ण-मुद्राएँ |
| 45. | वर्षीदान | 3 अरब 88 करोड़ 80 लाख स्वर्ण-मुद्राएँ |
| 46. | प्रथम लोच के बाल ग्रहण कर्त्ता | शक्रेन्द्र |
| 47. | बालों का विसर्जन | क्षीर सागर |
| 48. | दीक्षा पाठ | करेमि भंते |
| 49. | दीक्षा वस्त्र प्रदाता | शक्रेन्द्र |
| 50. | दीक्षा वस्त्र संयोग | 13 मास |
| 51. | दीक्षा लेते ही ज्ञान | मन:पर्यव ज्ञान |
| 52. | दीक्षा के बाद नींद | सिर्फ एक मुहूर्त |
| 53. | चातुर्मास | 42 |
| 54. | सर्वाधिक चातुर्मास | राजगृही नगरी में |
| 55. | प्रथम चातुर्मास | अस्थिग्राम में |
| 56. | दीक्षा तप | बेला |
| 57. | उत्कृष्ट तप | 6 माह का |
| 58. | प्रथम पारणा | बहुल ब्राह्मण द्वारा |
| 59. | तपस्या के दिन | 4166 दिन |
| 60. | परिषह | चंडकौशिक सर्पडंस, कान में कीलें, शूलपाणी यक्ष, संगमदेव के 6 मास तक उपसर्ग। |
| 62. | कील निकालने वाले वैद्य | खरक वैद्य |
| 63. | कुल समवशरण | 8 |
| 64. | तीर्थंकर नामकर्म का उपार्जन भव | 25वें नंदनमुनि के भव में |
| 65. | तीर्थंकर नामकर्म बंध का कारण | 1125645 मासखमण उत्कृष्ट भाव से (कहीं-कहीं 1160000 मासखमण माने गये हैं।) |
| 66. | चारित्र पर्याय | 42 वर्ष |

## धार्मिक परिवार :

| | | |
|---|---|---|
| 67. | एक साथ सर्वाधिक दीक्षा | 4411 |
| 68. | गणधर | 11 |
| 69. | साधु | 14,000 |
| 70. | साध्वी | 36,000 |
| 71. | श्रावक | 1,59,000 |
| 72. | श्राविका | 3,18,000 |
| 73. | केवलज्ञानी साधु | 700 |
| 74. | केवलज्ञानी साध्वी | 1,400 |
| 75. | अवधिज्ञानी साधु | 1,300 |
| 76. | मन:पर्यव ज्ञानी साधु | 500 |
| 77. | चौदह पूर्वधारी साधु | 300 |
| 78. | वैक्रिय लब्धिधारी साधु | 700 |
| 79 | चर्चावादी साधु | 400 |
| 80. | प्रमुख साधु | गौतमस्वामी |
| 81. | प्रमुख साध्वी | चंदनबाला |
| 82. | प्रमुख श्रावक | आनंद, कामदेव, शंख, शतक |
| 83. | प्रमुख श्राविका | सुलसा, रेवती |
| 84. | अंतिम चौदह पूर्वधर | भद्रबाहु स्वामी |

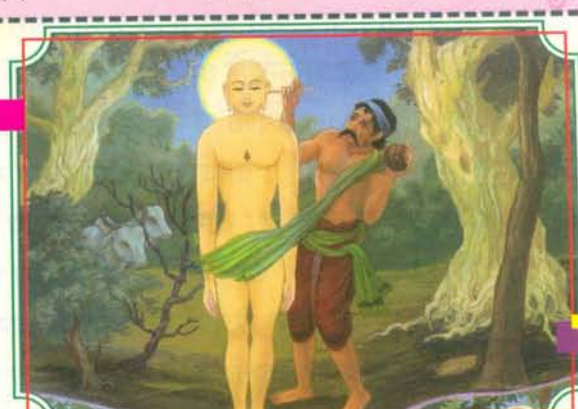

*केवलज्ञान :*

| | | |
|---|---|---|
| 85. | तिथि | वैशाख सुदी दसमी |
| 86. | गाँव | जृंभिका |
| 87. | स्थान | श्यामाक गाथापति के खेत में |
| 88. | वृक्ष | शाल्मली वृक्ष के नीचे |
| 89. | नदी | ऋजुबालिका नदी के तट पर |
| 90. | आसन | गोदुहासन |
| 91. | मुहूर्त्त | विजय |
| 92. | प्रहर | चौथा प्रहर |
| 93. | तप | बेला |
| 94. | प्रथम देशना के श्रोता | देव |
| 95. | खाली देशना | प्रथम |

*निर्वाण :*

| | | |
|---|---|---|
| 96. | तिथि | कार्तिक कृष्णा अमावस्या |
| 97. | आसन | पद्मासन |
| 98. | नक्षत्र | स्वाति नक्षत्र |
| 99. | अंतिम चातुर्मास | पावापुरी (हस्तीपाल राजा के पौषधशाला में) |
| 100. | अंतिम देशना | उत्तराध्ययन सूत्र, विपाक सूत्र के दस अध्याय |

**कथा रूपी विजय पथ**

# महारानी त्रिशला और देवानंदा

प्राचीनकाल की घटना है नगर में एक प्रतिष्ठित संयुक्त परिवार रहता था। जहाँ पर हर कार्य साथ में होता था जैसे व्यापार, खाना, रहना आदि। सब संयुक्त होने से भाई-भाई में विश्वास था। देवरानी जेठानी में प्रेम था। सबका आपस में स्नेह व्यवहार था। एक गुप्त गृह में परिवार का सारा का सारा धन, बहुओं के आभूषण की पेटियाँ आदि सुरक्षित थीं। एक बार किसी आवश्यक कार्य से देवरानी ने गुप्त गृह खोला। वर्षों से उसकी नजर जेठानी के रत्नों के डिब्बे पर थी। आज अवसर देख उसने जेठानी के आभूषणों की पेटी चुरा ली। गुप्त गृह बंद कर दिया। कालांतर में जेठानी ने अपनी आभूषणों की पेटी संभाली। ढूँढ़ने पर भी नहीं मिली तो सबसे पूछा पर व्यर्थ...। आखिर देवरानी अपनी चतुराई पर खुश थी। पाप करके प्रसन्न होने से निकाचित् कर्मों का बंध पड़ा। कई भवों के बाद देवरानी का जीव देवानंदा के रूप में उत्पन्न हुआ। जेठानी का जीव त्रिशला महारानी के रूप में उत्पन्न हुआ।

भगवान् महावीर स्वामी का जीव दसवें देवलोक का आयुष्य बीस सागरोपम (असंख्य काल) पूर्ण कर जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में ब्राह्मण कुंड नगर में ऋषभदत्त ब्राह्मण की पत्नी देवानंदा की कुक्षि में उत्पन्न हुए। उसी समय भगवान की पहली माता देवानन्दा ने चौदह तेजस्वी महास्वप्न देखे। 82½ रात्रि व्यतीत होने के पश्चात् देवानन्दा के पूर्वकृत पाप कर्म का उदय हुआ। उस समय प्रथम देवलोक के इन्द्र शकेन्द्र ने अपने अवधिज्ञान से देखा कि भरतक्षेत्र में इस अवसर्पणी काल के अंतिम तीर्थंकर ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुए हैं। ब्राह्मण कुल याचक (माँगकर खाने वाले) कुल कहलाता है। तीर्थंकर सदा क्षत्रिय कुल में जन्म लेते हैं। उन्होंने अपने अवधिज्ञान से उपयोग लगाकर देखा कि वर्तमान में इस भरत क्षेत्र में तीर्थंकर को जन्म देने की योग्यता रखने वाली ऐसी दूसरी माता कौन-सी है, जो क्षत्रिय कुल में उत्पन्न हुई हो, जिसके उभय कुल पवित्र हों (जिस कुल की 51 पीढ़ियाँ पवित्र होती हैं, ऐसे उत्तम कुल में ही तीर्थंकर जन्म धारण करते

हैं)। कुंडलपुर के क्षत्रिय महाराज सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला को देखते ही शकेन्द्र महाराज का चित्त प्रफुल्लित हो उठा। तीर्थंकर बनने वाली आत्मा को धारण करने की योग्यता रखने वाली महारानी त्रिशला को उन्होंने भाव नमन किया। अपने आभियोगिक हरिणगमैषी देव को आज्ञा प्रदान की कि तुम अति शीघ्र जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में जाओ और देवानन्दा के गर्भस्थ शिशु को वहाँ से उठाकर महारानी त्रिशला के गर्भ में सुखपूर्वक रखो। महारानी त्रिशला के गर्भ में पल रही कन्या के गर्भ को देवानन्दा ब्राह्मणी के गर्भ में स्थापित करो। अत्यंत प्रमुदित भाव से हरिणगमैषी देव ने सारा कार्य सुख पूर्वक सम्पन्न किया। उसी रात्रि देवानन्दा ब्राह्मणी ने 14 महास्वप्नों को अपने मुख से निकलते हुए देखा। स्वप्न देखकर वह आर्त्तध्यान में चली गई।

त्रिशला महारानी 14 महास्वप्नों को अपने उदर में प्रवेश करते हुए देखकर हर्षित होती है। भगवान की आत्मा गर्भ में आते ही सिद्धार्थ महाराज के राज्य में अपार वृद्धि हुई। भंडार, अन्न, धन, राज्य एवं सुखों की वृद्धि को देखकर बालक का जन्म होने पर गुण निष्पन्न नाम वर्धमान रखा गया ।

## *यह 14 स्वप्न क्या है?*

तीर्थंकर भगवान् जब माता की कुक्षि में आते हैं, तब भगवान् की माता चौदह तेजस्वी महास्वप्नों को अर्धनिद्रित अवस्था में देखती है। जो भव्य आत्मा के जन्म होने का संकेत है। ये 14 महास्वप्न चित्र में दिए हैं।

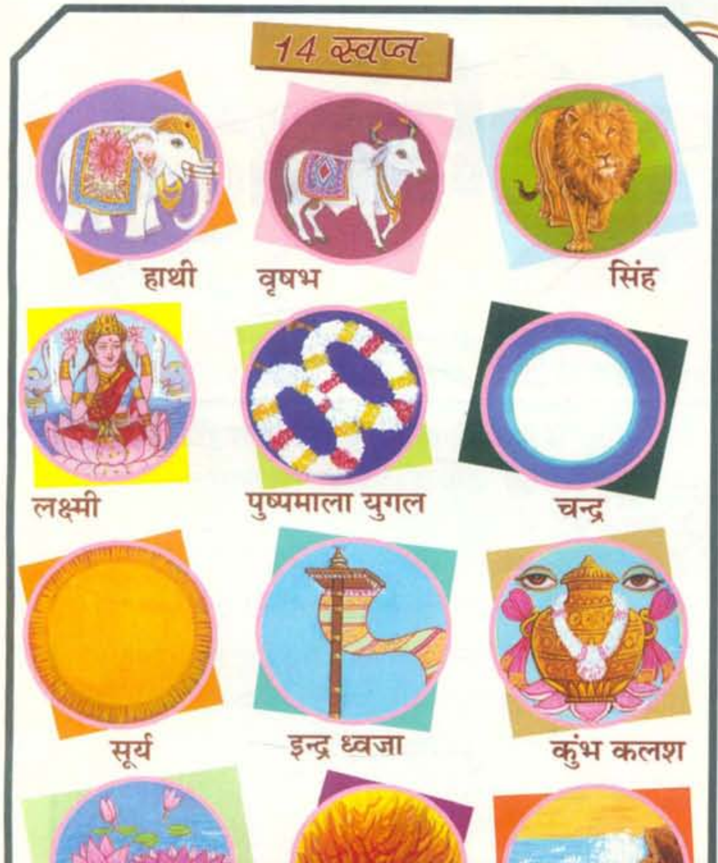


**तीर्थंकर की माता जो 14 स्वप्न देखती हैं, उन्हें कंठस्थ रखने का सरल तरीका—**

7 स्वप्न स्थावर सम्बन्धित + 7 स्वप्न त्रस सम्बन्धित।

*स्थावर सम्बन्धित—*

| | |
|---|---|
| पृथ्वीकाय से 2 स्वप्न | — 1. कुंभ कलश, 2. रत्नों की राशि |
| अप्काय से 2 स्वप्न | — 1. क्षीर समुद्र, 2. पद्म सरोवर |
| तेउकाय से 1 स्वप्न | — 1. अग्निशिखा |
| वायु से 1 स्वप्न | — 1. ध्वजा पताका |
| वनस्पतिकाय से 1 स्वप्न | — 1. पुष्पमाला युगल |

*त्रसकाय सम्बन्धित—*

| | |
|---|---|
| तिर्यंचगति से 3 स्वप्न | —1. गज, 2. वृषभ, 3. सिंह |
| देवगति से 4 स्वप्न | —1. चन्द्र, 2. सूर्य, 3. लक्ष्मी, 4. देव विमान |

*विशेष—*

1. प्रथम तीर्थंकर की माता ने पहला स्वप्न वृषभ का देखा, अंतिम तीर्थंकर की माता ने पहला स्वप्न सिंह का देखा, जबकि शेष 22 तीर्थंकरों की माताओं ने पहला स्वप्न हाथी का देखा।
2. तीर्थंकर और चक्रवर्ती की माता 14 स्वप्न, वासुदेव की माता 7 स्वप्न, बलदेव की माता 4 स्वप्न और मांडलिक राजा की माता 1 स्वप्न देखती है।

### रात्रि भोजन का अर्थ क्या है ?

सूर्यास्त (Sunset) के बाद भोजन करना रात्रि भोजन है।

### रात्रि भोजन का त्याग क्यों करना चाहिए ?

1. रात्रि भोजन त्याग करना भगवान की आज्ञा है।

2. Science बताता है कि सूर्यास्त के बाद खाना खाने से पाचन क्रिया (Digestive System) बिगड़ जाती है। अनेक रोग भी हो सकते हैं। नाभिकमल सूर्योदय के समय खुलता है और सूर्यास्त के बाद बंद हो जाता है। इसीलिए जो भी आहार Sunset के बाद किया जाता है वह आहार पेट में ही पड़ा रहता है। उसका पाचन नहीं होता है और फिर सुबह उठकर वापस आहार लेते हैं। उस समय नाभिकमल को दुगुना काम करना पड़ता है, जिससे रोग होने की सम्भावना होती है।

3. दिन में सूर्य के ताप से वातावरण में रहे हुए सूक्ष्म कीटाणु निष्क्रिय हो जाते हैं। रात्रि में पुनः सक्रिय हो जाते हैं, जो हमारे स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद हैं।

4. दिन में $O_2$ ऑक्सीजन भरपूर रहती है, जो भोजन के साथ मिलकर हमारे पेट में जाती है। वह स्वास्थ्य के लिए उपयोगी होती है।

5. रात्रि में न दिखने पर अगर जूँ खाने में आ जाए तो जलोदर (पेट बढ़ना) की बीमारी हो जाती है।

6. अगर मकड़ी (Spider) आ जाए तो कोढ़ निकलता है।

7. चींटी से पिस्ती, 8. बिच्छु से एग्जिमा, 9. मच्छर से मलेरिया, 10. विषैले जंतु खाने से प्राणांतक हो जाता है।

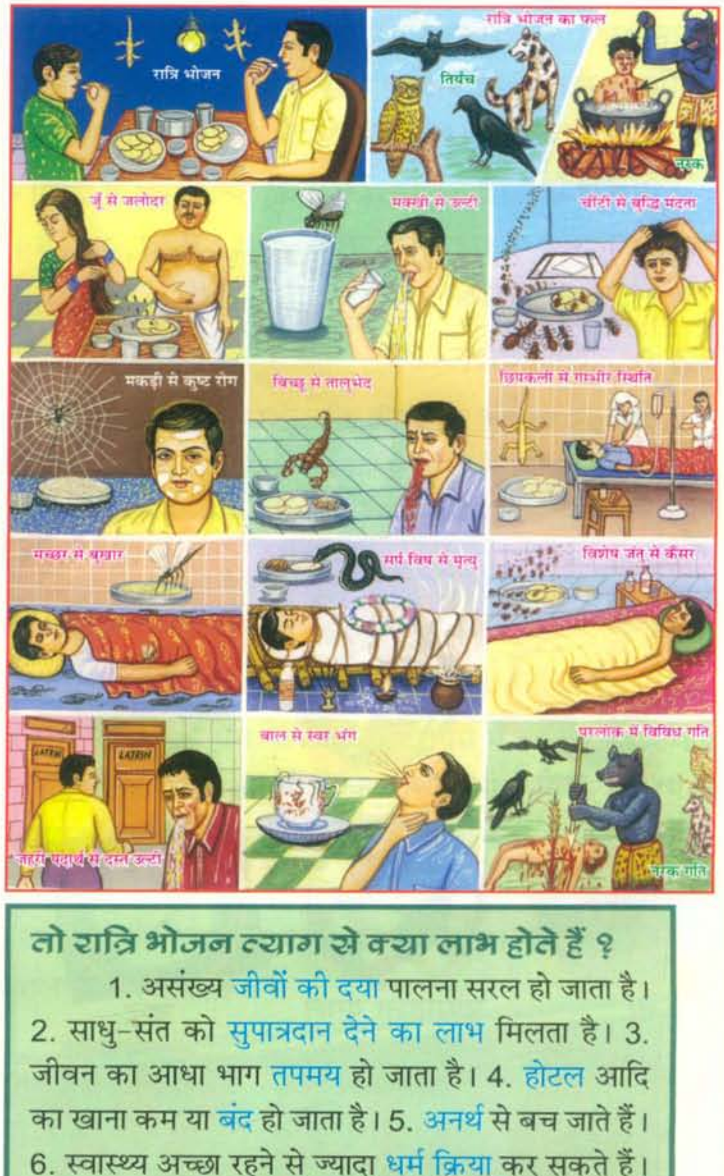


### तो रात्रि भोजन त्याग से क्या लाभ होते हैं ?

1. असंख्य जीवों की दया पालना सरल हो जाता है। 2. साधु-संत को सुपात्रदान देने का लाभ मिलता है। 3. जीवन का आधा भाग तपमय हो जाता है। 4. होटल आदि का खाना कम या बंद हो जाता है। 5. अनर्थ से बच जाते हैं। 6. स्वास्थ्य अच्छा रहने से ज्यादा धर्म क्रिया कर सकते हैं। 7. प्रतिक्रमणादि का समय मिलता है। 8. मांसाहार का दोष नहीं लगता है। 9. अहिंसा व्रत का पालन होता है। 10. मनुष्य बुद्धिमान और निरोग बनता है। 11. दुर्व्यसनों से बच जाता है। 12. मन और इन्द्रियाँ वश में हो जाती है।

## रात्रि भोजन त्याग के पच्चक्खाण क्यों करने चाहिए ?

एक दिन सीता और गीता दोनों बहनें स्थानक में व्याख्यान सुनने गईं। वहाँ महासती जी रात्रि भोजन के त्याग के बारे में समझा रहीं थीं। रात्रि भोजन से होने वाली हानि सुनकर दोनों ने रात्रि भोजन त्याग का संकल्प किया। लेकिन सीता ने एक कदम आगे चलकर रात्रि भोजन का प्रत्याख्यान ले लिया।

दोनों ही अच्छी तरह से नियमानुसार रात्रि भोजन त्याग का पालन करती थी। फिर एक दिन अपने नजदीकी रिश्तेदार के घर शादी में जाना हुआ। वहाँ शाम को चौविहार की भी व्यवस्था थी। सीता और गीता दोनों चौविहार करने पहुँच गईं। दोनों ने प्लेट भी ले ली थीं,

तभी वहाँ पर उनकी कुछ चचेरी बहनें आईं और चौविहार करने से मना करने लगीं। कहने लगीं कि एक ही दिन का तो सवाल है। हमेशा तो करती ही हो ना? हमारे साथ कब खाना खाओगी? गीता ने सोचा कि ठीक है एक दिन में क्या है? इन्हें मैं क्यों दु:ख पहुँचाऊँ? इसलिए उसने वापस प्लेट रख दी। पर सीता नहीं मानी। वह बोली—मैं तो रात्रि भोजन नहीं कर सकती, क्योंकि मेरे तो पच्चक्खाण है। अगर आप सभी मेरे साथ ही खाना चाहती हैं, तो चलो मेरे साथ चौविहार कर लो। परन्तु सभी बहनों ने मना कर दिया। सीता ने चौविहार कर लिया। कुछ समय बाद रात हो गई। तभी एक जहरीली छिपकली सब्जी के पतीले में गिर गई। खाना प्रारम्भ हो गया। रात्रि में छिपकली दिखाई नहीं दी और सारी सब्जी जहरीली हो गई। इस वजह से जिसने भी रात को खाना खाया, उन सब लोगों को Food poision हो गया और लोगों को दस्त और उल्टियाँ शुरू हो गईं। परिणाम स्वरूप Doctor, Hospital, Medicine, Injection और तकलीफ का सिलसिला शुरू हो गया।

एक-दो दिन बाद जब वे सभी ठीक हो गये, तो लोगों ने सोचा रात्रि भोजन न करने से ही सीता बच गई है। इसलिए हम सब जब भी सामुहिक प्रसंग मनायेंगे, तो भोजन दिन में ही रखेंगे।

समाज के अंदर एक बड़ी जागृति आ गई। इस छोटे से प्रसंग से लोगों की आँखें खुल गईं। इसलिए हमें भी यह निश्चय करना चाहिए कि शादी, Birthday Party, Reception जैसे बड़े-बड़े प्रसंग रात्रि में न करके दिन को ही मनायेंगे और बड़ों को समझाकर इतिहास में नई क्रांति लायेंगे।

आज से हम भी भगवान की आज्ञा का पालन कर अनंत कर्मों की निर्जरा कर लें !!!

क्या आपको पता है, जब से किसी भाई या बहन की दीक्षा हो जाती है, तब से उन्हें यावत् जीवन तक रात्रि भोजन के पच्चक्खाण हो जाते हैं। हमारे साधु-साध्वीजी कभी भी कोई भी मुसीबत आए, गरमी में प्यास लगे फिर भी रात्रि को खाने-पीने के बारे में सोचते भी नहीं हैं। हम सप्ताह में एक दिन रात्रि भोजन त्याग करें। फिर बढ़ाते-बढ़ाते पूरा रात्रि भोजन त्याग कर भगवान के पक्के और सच्चे श्रावक बनें।

## साधना की गहराई

### भगवान महावीर स्वामी की घोरातिघोर तपस्या का लेखा

भगवान् महावीर स्वामी की उम्र लगभग साढ़े 72 वर्ष की थी, जिसमें से प्रथम के 30 वर्ष गृहस्थ जीवन में रहे, अंतिम के 30 वर्ष तीर्थंकर पद में रहे। मध्य के साढ़े 12 वर्ष छद्मस्थ-अवस्था में घोर तपस्या की, जिसका वर्णन इस प्रकार है—

(1) भगवान् महावीर ने 6 महीने का तप 1 बार किया। (2) पाँच महीने 25 दिन का तप 1 बार किया। (3) चार महीने का तप 9 बार किया। (4) तीन महीने का तप 2 बार किया। (5) अढ़ाई महीने का तप 2 बार किया। (6) डेढ़ महीने का तप 2 बार किया। (7) दो महीने का तप 6 बार किया। (8) एक महीने का तप 12बार किया। (9) पन्द्रह दिन का तप 72 बार किया। (10) तीन दिन का तप 12 बार किया। (11) दो दिन का तप 229 बार किया। (12) भद्रतप—4 दिशाओं में 4-4 प्रहर का ध्यान किया और बेले की तपस्या से पूर्ण किया, ऐसा 1 बार किया। (13) महाभद्रतप—4 दिशाओं में 8-8 प्रहर का ध्यान किया और चोले की तपस्या से पूर्ण किया, ऐसा 1 बार किया। (14) सर्वतोभद्रतप—4 दिशाओं में अढ़ाई-अढ़ाई दिन का ध्यान किया और 10 की तपस्या से पूर्ण किया, ऐसा 1 बार किया। कुल मिलाकर 11 वर्ष 6 महीने 25 दिन की तपस्या हुई एवं 349 दिन का पारणा हुआ।

ऐसे श्री भगवान् महावीर स्वामी को हमारा भाव सहित वन्दन-नमस्कार होवे। आपकी कृपा से हमारा ज्ञान बढ़े, हमारा ध्यान बढ़े, हमारा तप बढ़े, हमारा त्याग बढ़े और हमारा वैराग्य बढ़े। हम भी आपके समान सिद्ध-बुद्ध-मुक्त बनें।

## सरगम

तर्ज : ए मेरे दिले.....

जीवन बहता पानी, नहीं पल भर रुक सकता।
जो होता है उसको, कोई रोक नहीं सकता ॥ टेर ॥
जब हुई बिमारी तो, डॉ. को बुलवाया,
लो दवा ठीक होगी, डॉ. ने बतलाया,
हुई साँस अगर बंद तो, डॉ. क्या कर सकता ॥ 1 ॥
पंडित ने शादी की, शुभ वेला बतलाई,
सज-धज करके दुल्हन, वर मंडप में आई,
पड़ जाता दिल दौरा, पंडित क्या कर सकता ॥ 2 ॥
होगा कल रघुवर का, शुभ राज तिलक प्यारा
सुन अवधपुरी का है, पुलकित जन-जन सारा,
वनवास हुआ पल में, दशरथ क्या कर सकता ॥ 3 ॥
चाहे हो होली या, राखी या दिवाली,
ये मौत बड़ी निष्ठुर, करती झोली खाली,
किस्मत के आगे तो, कोई क्या कर सकता ॥ 4 ॥

### स्मरण रखने योग्य बातें

- चटपटी चाट चाहे खाने की हो या बातों की हो, बिना संयम के अनर्थ करती है।
- चर्बी बढ़ाना आसान है, घटाना बहुत कठिन हो जाता है। बढ़ी चर्बी अनेक रोगों को खुला आमंत्रण देती है।
- चाय की चुस्की थोड़ी देर की मगर, सुस्ती ज्यादा देर तक रहती है।
- खाने वाले खाने में विवेक रखें तो सेहत अच्छी रहती है।

कथा रूपी विजय पथ

# मेघकुमार

राजगृही के महाराज 'श्रेणिक' एक बार सिंहासन पर उदास बैठे थे। सदा की भांति 'अभयकुमार' पिता को प्रणाम करने आया। अपने पिता को चिन्तित देखकर 'अभय' ने चिंता का कारण जानना चाहा। महाराज 'श्रेणिक' ने चिन्ता को मिटाने वाला समझकर 'अभय' से कहा—'वत्स! चिन्ता का एक कारण है, तेरी विमाता धारिणी के गर्भ के योग से मनोभाव (दोहद) बने हैं कि मैं महाराज के साथ हाथी पर सवार होकर वन-क्रीड़ा करने जाऊँ। उस समय वर्षा हो रही हो, चारों ओर हरियाली से वन, वनस्थली खिल रही हो। बस, इसी चिन्ता में दुर्बल हो रही है। इस असमय में वर्षा कैसे हो?'

'अभयकुमार' ने सांत्वना देते हुए कहा—'मैं मातु-श्री की भावना को पूरी करने का प्रयास करूँगा। आप चिन्ता न करें।'

'अभयकुमार' पौषधशाला में गया। तीन दिन का तप करके ध्यान में बैठ गया। अपने पूर्व-परिचित देव को आमन्त्रित किया। तीन दिन के बाद देवता आया। 'धारिणी' का मनोरथ (दोहद) पूरा करने को अकाल में देवता ने वर्षा की। महारानी भी महाराज के साथ हाथी पर चढ़कर वन में गई। हरित भूमि को देखकर परम प्रसन्न हो उठी।

सवा नौ महीनों के बाद पुत्र का जन्म हुआ। मेघ का दोहद उत्पन्न होने से पुत्र का नाम 'मेघकुमार' रखा गया। युवावस्था में आठ राजकन्याओं के साथ विवाह किया गया। एक बार भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधारे। मेघकुमार उपदेश सुनकर संयम लेने को उद्यत हुए। माता के पास से जब आज्ञा लेनी चाही तब माता ने कहा—'पुत्र! तेरे इस कोमल शरीर से संयम का निर्वाह कठिन है। संयम का पथ तलवार की पैनी धार पर चलने जैसा है। इसलिए सांसारिक वैभव का उपभोग करो।' लेकिन जब महारानी 'धारिणी' ने देखा कि मेघकुमार की भावना तीव्र है, यह किसी भांति संसार में रहने को तैयार नहीं है, तब मोह को एक ओर करते हुए कहा—'मेरा कहा मानकर कम-से-कम एक दिन का राज्य तो कर लो।'

सोचा था, राज्य-सिंहासन मिलते ही उसमें फंस जाएगा। पर हुआ उल्टा। माता-पिता के आग्रह से जब राज्याभिषेक कर दिया गया, तब मेघ बोला—'अब मेरी आज्ञा सबको मान्य होगी ही। अत: शीघ्रातिशीघ्र रजोहरण एवं पात्र लाओ। मैं संयम लूंगा। राजसी ठाठ को ठुकराकर 'मेघकुमार' संयमी बन गये।

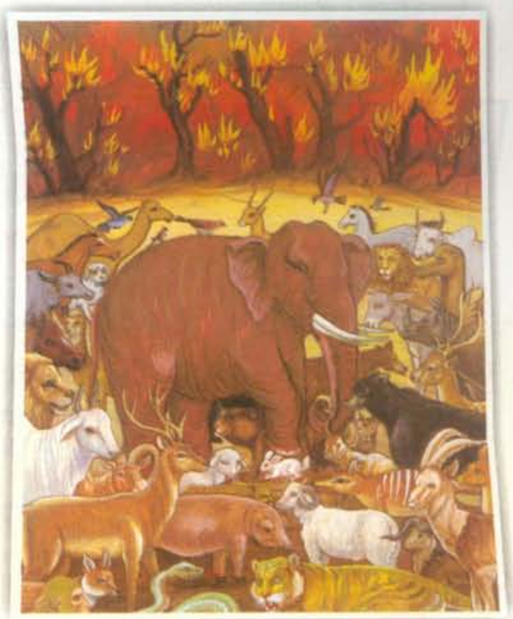

रात्रि के समय मेघमुनि को सोने के लिए स्थान द्वार के पास मिला। रात में सन्तों के आने-जाने के कारण मेघ मुनि को नींद नहीं आयी। नींद नहीं आने से 'मेघमुनि' खिन्न हो गये। विचारों में शिथिलता आ गई। पहले तो सारे मुनिगण मुझसे इतने प्रेम से बोलते थे, पास में बिठाते थे। आज इन्होंने मुझे यों फुटबाल के समान किनारे छिटका दिया। पहली रात में ही यह हाल है, तो आगे क्या शुभ की आशा की जाए। मैं तो प्रात:काल प्रभु से पूछकर अपने घर चला जाऊँगा।

प्रात:काल होते ही प्रभु को पूछने तथा झोली-रजोहरण सौंपने के लिए 'मेघमुनि' प्रभु के पास आए, वंदना की। भगवान् तो पहले ही 'मेघमुनि' की मनोभावना देख चुके थे। अत: सम्बोधित करते हुए एवं प्रबुद्ध करते हुए कहा—'मेघ! एक रात्रि के कष्ट से तूं यों घबरा गया। अधीर हो उठा। घर जाने को तैयार हो गया, पर तुझे याद है, तूं पिछले जन्म में कौन था? देख, तूं पिछले जन्म में हाथियों के झुण्ड का स्वामी था। अनेक हथिनियों के साथ मस्त बना तूं रह रहा था। तूं पहले एक बार मेरुप्रभु हाथी के भव में दावानल में जल चुका था। इसलिए अगली बार तूं चार कोस भूभाग के वृक्षों को तथा घास-फूस को उखाड़कर अपने-आपको सुरक्षित अनुभव कर रहा था। संयोगवश एक बार वन में दावानल लगा। जंगल के सभी जीव-जन्तु उसी मैदान में आ गए, जहाँ तूं रह रहा था। वह मंडल जीवों से भर गया था। तूं खड़ा था। तेरे पैर में खुजलाहट चली। तूने पैर को खुजलाने के लिए एक पैर ऊपर किया। इतने में तेरे पैर के स्थान पर एक शशक आ बैठा। तूने पैर नीचे रखना चाहा तो उस खरगोश को देखकर सोचा, मेरे कारण यह मर जाएगा। यों ढाई दिन तक ऊपर पैर किए खड़ा रहा। इतने में दावानल शान्त हुआ। सारे प्राणी अपने-अपने स्थान की ओर चले गये। जब तूने पैर नीचे किया तब तक पैर अकड़ चुका था। पैर रखते ही तू गिर गया और वहाँ तेरी मृत्यु हो गई। वहाँ से मरकर तूं राजा का पुत्र हुआ है। मेघ! पशु-भव में तो तूने सारी बातें सुधारी। इस मनुष्य-जीवन में थोड़े से कष्ट से घबराकर बात बिगाड़ रहा है। मेघ! जरा सोच!

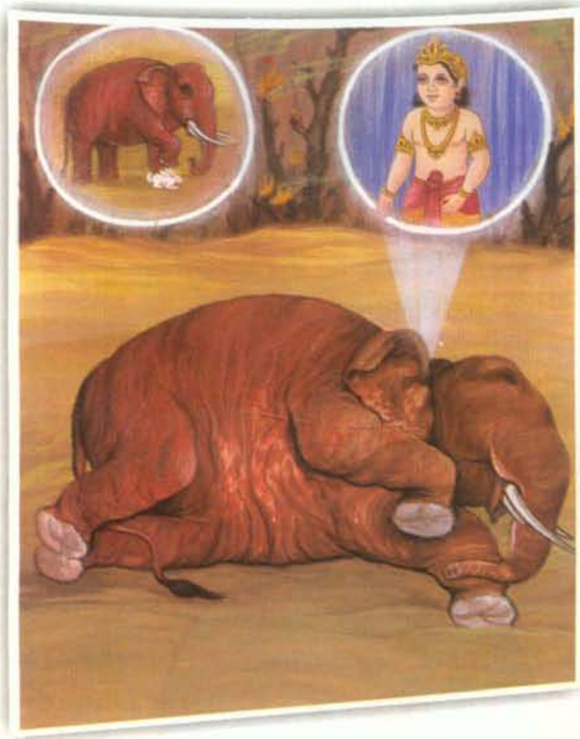

'मेघमुनि' को प्रभु की वाणी सुनते-सुनते जाति स्मरणज्ञान हो आया। झुलसते हुए मैदान को देखकर रोंगटे खड़े हो गये। प्रभु के पैरों में गिरकर दोषों की आलोचना की। मन को स्थिर करके पुन: व्रतों में सुस्थिर बने। अपने-आपको संघ के प्रति समर्पित करते हुए 'मेघमुनि' ने कहा—'प्रभुवर! मैं अपनी इन दो आँखों के सिवा पूरा शरीर साधु-संतों की परिचर्या के लिए समर्पित करता हूँ। आप जैसा भी चाहें इसका उपयोग करें। केवल ये दो आँखें मैं ईर्याशोधन के लिए अपने अधिकार में रखता हूँ, शेष सारा शरीर आपके लिए समुपस्थित है।'

यों समर्पित होकर उत्कृष्ट परिचर्या, संयम, साधना, तप, आराधना में जुटे। ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। गुणरत्न संवत्सर आदि विभिन्न प्रकार के तप किये। अन्त में सब संतों से क्षमायाचना करके प्रभु की आज्ञा लेकर एक महीने के अनशन में समाधिमरण प्राप्त किया और विजय विमान में उत्पन्न हुए। वहाँ से महाविदेह में उत्पन्न होकर मोक्ष में जाएँगे।

# S FOR ➡ SAAMAAYIK सामायिक

## धर्म की ABCD सामायिक है।

### सामायिक का क्या अर्थ है ?

**सम् + आय + इक = सामायिक**

यानि समता रूपी आय की प्राप्ति जिससे होती है, उसे 'सामायिक' कहते हैं।

### एक सामायिक कितने समय की होती है ?

- एक सामायिक (कम से कम) 2 घड़ी = 48 मिनिट = 1 मुहूर्त्त की होती है।
- मुँहपत्ति, आसन, पूँजणी आदि उपकरण साथ में लेकर ही सामायिक करें।

### सामायिक एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें—

1. 48 मिनिट तक पापों का त्याग किया जाता है।
2. संसार से हटकर अपनी आत्मा के समीप पहुँचा जाता है।
3. सामायिक से समभाव की प्राप्ति होती है।
4. पूर्व के बंधे अनन्त कर्मों की निर्जरा होती है।
5. नये कर्म आने बन्द हो जाते हैं।
6. सुदेव-सुगुरु-सुधर्म के प्रति श्रद्धा बढ़ती है।
7. 14 राजूलोक के सभी जीवों को अभयदान मिलता है।

साथ ही, Physical Rest, Mental Rest, Tension Relief व मोक्ष की Booking हो जाती है।

### सामायिक में पाप की चार सीढ़ियों का त्याग होता है।

**पाप की चार सीढ़ियाँ**

1. अतिक्रम—पाप करने का विचार करना।
2. व्यतिक्रम—पापकारी साधनों को इकट्ठा करना।
3. अतिचार—पाप करने के लिए प्रवृत्त होना।
4. अनाचार—पाप क्रिया कर लेना।

### सामायिक में क्या प्रवृत्तियाँ नहीं करनी चाहिए ?

सामायिक में 10 मन की, 10 वचन की, 12 काया की अशुभ प्रवृत्तियों को टालना चाहिए। इसे सामायिक के दोष कहते हैं। इस प्रकार 32 दोषों को टालकर सामायिक करनी चाहिए। (ये दोष सामायिक सूत्र के पीछे दिए हुए हैं।)

### हमें सामायिक क्यों करनी चाहिए?

1. सामायिक एकान्त (only) निर्जरा के लिए करनी चाहिए।
2. किसी सांसारिक सुख या वस्तु पाने की इच्छा के बिना सामायिक करनी चाहिए।
3. एक सामायिक करने में 92,59,25,925 पल्योपम (एक पल्योपम यानि असंख्य वर्ष) से अधिक स्थिति का नरक गति नाम कर्म का क्षय होता है।
4. छह काय जीवों की रक्षा के लिए सामायिक करनी चाहिए।
5. क्रोध, मान, माया, लोभ आदि कषायों को हलका करने के लिए सामायिक करनी चाहिए।
6. अपने आत्म-स्वरूप का चिंतन करने के लिए सामायिक करनी चाहिए।

### सामायिक में क्या-क्या करना चाहिए ?

1. धार्मिक पुस्तकें पढ़नी चाहिए।
2. सूत्र की गाथा, नया पाठ सीखना चाहिए।
3. आत्मगुणों का चिंतन करना चाहिए।
4. व्याख्यान श्रवण, प्रार्थना, ध्यान, काउसग्ग आदि करना चाहिए।

### जैन साधु की सामायिक को क्या कहते हैं ?

जैन साधु की सामायिक को दीक्षा कहते हैं।

नोट— यदि एक सामायिक का समय भी आपके पास नहीं है, तो भगवान् ने Short व सरल तरीका बताया "संवर" का।

# S FOR ➡ SAMVAR संवर

*नवीन कर्मों के आगमन को जो रोकता है, उसे संवर कहते हैं। संवर कहीं पर भी, कभी भी, कितनी भी देर के लिए किया जा सकता है। आपके पास सामायिक करने जितना समय नहीं है, तो आप अपनी सुविधानुसार पाँच मिनट, दस मिनिट तक के लिये या नहीं पारूँ नहीं चितारूँ तब तक के लिये भी ले सकते हैं।*

*संवर का पच्चक्खाण इस प्रकार है—*

**द्रव्य से**—18 पाप और पाँच आस्रव के सेवन का पच्चक्खाण।

**क्षेत्र से**—सम्पूर्ण लोक प्रमाण।

**काल से**—एक बार नमस्कार सूत्र अथवा णमो अरिहंताणं बोलकर न पारूँ तब तक।

**भाव से**—उपयोग सहित पच्चक्खाण का पालन करूँगा,

**एगविहं, तिविहेणं, न करेमि, मणसा, वयसा, कायसा तस्स भंते, पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।**

छोटे-छोटे नन्हें-मुन्ने खिलते मुस्कुराते बच्चे जब तक परिपक्व न हों तब तक 3 नवकार मंत्र गिनकर किसी भी प्रत्याख्यान को पार सकते हैं। जैसे—नवकारसी, पोरसी, संवर, सामायिक आदि।

*संवर पारणे की विधि—*

**"मेरा संवर पूरा हुआ। इसमें जो कोई दोष लगा हो, तो उसके लिए तस्स मिच्छामि दुक्कडं।"**

फिर एक नवकार सूत्र का कायोत्सर्ग करें।

**कथा रूपी विजय पथ**

## राजा श्रेणिक और सामायिक का महत्व

एक बार श्रेणिक महाराज ने भगवान् महावीर से पूछा—"भगवन् ! मैं मरकर कहाँ जाऊँगा?"

तब भगवान् महावीर ने कहा—"श्रेणिक ! आप मरकर तीसरे नरक में जाओगे।"

श्रेणिक बोले—"भगवन् ! मैं नरक में नहीं जाना चाहता, इसके लिए आप कोई उपाय बताओ।"

भगवान् बोले—"यदि तुम (1) पुणिया श्रावक की एक सामायिक खरीद लो, अथवा (2) एक दिन के लिए कालसौकरिक कसाई से भैंसों को मारना बन्द करवा दो, अथवा (3) कपिला दासी के हाथ से दान दिलवा दो, अथवा (4) तुम स्वयं एक नवकारसी का पच्चक्खाण कर लो, तो तुम्हारा नरक गमन छूट जायेगा।"

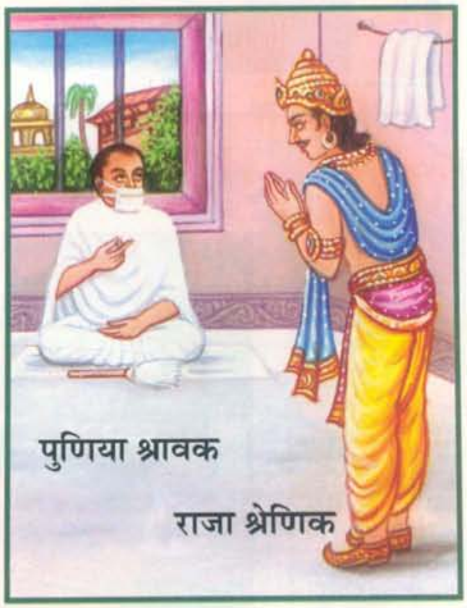


यह सुनकर श्रेणिक महाराज तुरन्त पुणिया श्रावक के पास उसकी एक सामायिक खरीदने के लिए आए। परन्तु पुणिया श्रावक ने कहा—"हे राजन् ! जिन्होंने आपको सामायिक को खरीदने भेजा है, उनसे पहले सामायिक की कीमत तो पता कर लो।"

राजा श्रेणिक श्रमण भगवान महावीर के पास आये और उनसे सामायिक के महत्त्व के बारे में पूछा। तब प्रभु ने बताया—"सामायिक एक ऐसा कीमती आराधना रत्न है, जिसकी कोई मनुष्य/देव कीमत नहीं लगा सकता। इसके अलावा किसी के द्वारा की गई सामायिक का फल, किसी दूसरे को नहीं मिल सकता।" यह सुनकर राजा श्रेणिक प्रभु को वंदन-नमस्कार करके वापस अपने महल लौट आए।

अतः स्वयं के द्वारा की गई सामायिक का फल ही स्वयं के काम में आता है। इसलिए सामायिक करने में आलस्य अथवा प्रमाद नहीं करना चाहिए।

इसके बाद राजा श्रेणिक ने कालसौकरिक कसाई को अपने राजदरबार में बुलाकर कहा "तुम एक दिन के लिए जीवों को मारना बन्द कर दो।" वह बोला–"राजन् ! यदि मैंने एक दिन के लिए भैंसों को मारना बंद कर दिया, तो पीढ़ियों से चला आ रहा मेरा पुश्तैनी धंधा चौपट हो जायेगा।" इससे राजा श्रेणिक कुपित हो गये और उसे अंधेरी कोटड़ी में डलवा दिया। अंधेरी कोटड़ी में रहकर कालसौकरिक कसाई ने भैंसों के चित्र बना–बनाकर उनकी भाव हिंसा करने लगा। इस तरह राजा श्रेणिक द्वारा भैंसों की हिंसा बन्द न करवाने से श्रेणिक के नरक में न जाने का दूसरा उपाय भी विफल हो गया।

बच्चों ! जिस प्रकार भैंसों को मारे बिना भी उसके चित्र बना–बनाकर उन्हें भावों से मारने के कारण पाप लगता है। उसी प्रकार मोबाइल, कम्प्यूटर अथवा इण्टरनेट में कार एक्सीडेंट आदि का वीडियो गेम खेलने से भी भाव हिंसा के कारण, पापों का बंध होता है।

तत्पश्चात् राजा श्रेणिक ने कपिला दासी से श्रमण मुनियों को दान देने के लिए कहा। कपिला दासी ने दान देने से साफ इन्कार कर दिया। तब राजा ने बलपूर्वक उसका हाथ पकड़ा और मुनिराज को दान दिलाने लगे। दान देते हुए कपिला दासी मन ही मन बड़बड़ाने लगी कि यह दान मैं नहीं दे रही हूँ बल्कि राजा का चम्मच दे रहा है। ऐसा मन में भाव रखने से कपिला को दान का फल नहीं मिला और उसके द्वारा दिया गया दान सुपात्रदान नहीं कहलाया।

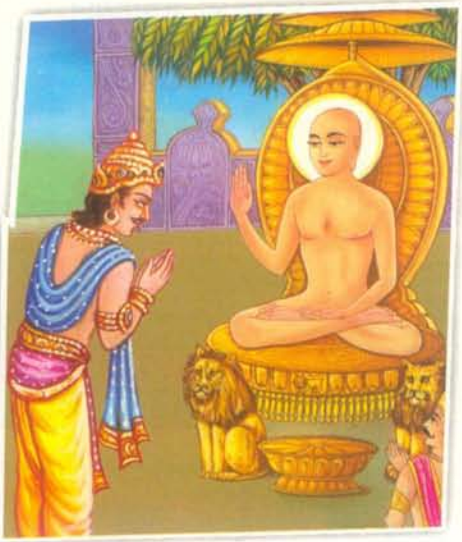

अत: बच्चों ! हमें सुपात्रदान देते समय अपने भाव शुद्ध और निर्मल रखने चाहिए। जैनधर्म में भावों को ही सर्वाधिक महत्ता दी गई है।

अंत में राजा श्रेणिक ने नवकारसी का तप करने का विचार किया। नवकारसी अर्थात् रात्रि के 12 बजे के बाद से लेकर सूर्योदय से 48 मिनट तक कुछ नहीं खाना–पीना। अगले दिन राजा श्रेणिक ने नवकारसी का पच्चक्खाण तो लिया, परन्तु प्रात:काल श्रेणिक महाराज को इतनी जोर से भूख लगी कि उन्होंने फल खाकर नवकारसी का पच्चक्खाण तोड़ दिया। इस तरह अनेक प्रयत्न करने पर भी राजा श्रेणिक स्वयं को नरक में जाने से रोक न सके।

## सरगम

### ओ मेरे मनवा......

(तर्ज - नूरी)

आजा रे, आजा रे ओ मेरे मनवा आ जा, अपने घर में आजा रे।
होऽऽऽऽ मनवा मनवा मनवा...... ॥टेर॥
अपने घर में, पल न टिकता, बाहर भागा जाता,
कितना-कितना, समझाऊँ मैं, फिर भी धूम मचाता। आजा रे..... ॥1॥
अपना आखिर, अपना होता, और पराया सपना,
पैर जो रखता, पर सीमा में, उसको पड़ता तपना। आजा रे..... ॥2॥
रूप पराये, जो भी निहारे, उन पर कितना झूमे,
कितना सुन्दर, तेरा मंदिर, बाहर फिर क्यों घूमे। आजा रे..... ॥3॥
शीतल-शीतल, सुख का झरना, बाग में तेरे बहता,
जग की झूठी, माया में फँस, क्यों व्यथाएँ सहता। आजा रे..... ॥4॥
अपने भीतर, झाँक जरा तूं, क्षणभर स्थिर चित्त होकर,
धन का अक्षय कोष भरा है, देख स्वयं का तलघर। आजा रे..... ॥5॥

# छह आरों का वर्णन

| क्र. | द्वार के नाम | 1 आरा | 2 आरा | 3 आरा | 4 आरा | 5 आरा | 6 आरा |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1. | नाम | सुखमा-सुखमा | सुखमा | सुखमा-दु:खमा | दु:खमा-सुखमा | दु:खमा | दु:खमा-दु:खमा |
| 2. | अर्थ | अत्यंत सुख | सुख | सुख अधिक-दु:ख कम | दु:ख अधिक-सुख कम | दु:ख | अत्यंत दु:ख |
| 3. | आरे की स्थिति | 4 कोटाकोटी सागरोपम | 3 कोटाकोटी सागरोपम | 2 कोटाकोटी सागरोपम | 1 कोटाकोटी सागरोपम में 42,000 वर्ष कम | 21,000 वर्ष | 21,000 वर्ष |
| 4. | मनुष्यों की स्थिति | लगते-3 पल्योपम उतरते-2 पल्योपम | लगते-2 पल्योपम उतरते-1 पल्योपम | लगते-1 पल्योपम उतरते-1 करोड़ पूर्व | लगते-1 करोड़ पूर्व उतरते-100 वर्ष झा. | लगते-100 वर्ष झा. उतरते-20 वर्ष | लगते-20 वर्ष उतरते-16 वर्ष |
| 5. | मनुष्यों की अवगाहना | लगते-3 कोस उतरते-2 कोस | लगते-2 कोस उतरते-1 कोस | लगते-1 कोस उतरते-500 धनुष | लगते-500 धनुष उतरते-7 हाथ | लगते-7 हाथ उतरते-1 हाथ | लगते-1 हाथ उतरते-मुंड हाथ |
| 6. | पसलियाँ | लगते-256 उतरते-128 | लगते-128 उतरते-64 | लगते-64 उतरते-32 | लगते-32 उतरते-16 | लगते-16 उतरते-8 | लगते-8 उतरते-4 |
| 7. | जवानी | लगते-49 दिन में उतरते-64 दिन में | लगते-64 दिन में उतरते-79 दिन में | लगते-79 दिन में उतरते-32 वर्ष में | लगते-32 वर्ष में उतरते-16 वर्ष में | लगते-16 वर्ष में उतरते-8 वर्ष में | लगते-8 वर्ष में उतरते-4 वर्ष में |
| 8. | काल | लगते-भोगकाल उतरते-भोगकाल | लगते-भोगकाल उतरते-भोगकाल | लगते-भोगकाल उतरते-धर्मकाल | लगते-धर्मकाल उतरते-धर्मकाल | लगते-धर्मकाल उतरते-पापकाल | लगते-पापकाल उतरते-महाकाल |
| 9. | गति | लगते-देवगति उतरते-देवगति | लगते-देवगति उतरते-देवगति | लगते-देवगति उतरते-पाँच गति | लगते-पाँच गति उतरते-पाँच गति | लगते-पाँच/चार गति उतरते-चार गति | दो दुर्गति नरक, तिर्यंच |
| 10. | धरती की सरसाई | लगते-मिश्री जैसी उतरते-शक्कर जैसी | लगते-शक्कर जैसी उतरते-गुड़ जैसी | लगते-गुड़ जैसी उतरते-घटिया गुड़ जैसी | लगते-अच्छी मिट्टी जैसी उतरते-घटिया मिट्टी जैसी | लगते-घटिया मिट्टी जैसी उतरते-कुम्हार के निमाडे की राख जैसी | लगते-बंजर उतरते-अत्यंत घटिया राख |
| 11. | आहार की इच्छा | लगते-तीन दिन से उतरते-दो दिन से | लगते-दो दिन से उतरते-एक दिन से | लगते-एक दिन से उतरते-एक बार | लगते-एक बार उतरते-अनेक बार | लगते-अनेक बार उतरते-बार बार | लगते-बार-बार उतरते-बार-बार |
| 12. | कितना आहार | तुवर की दाल बराबर | बेर के बराबर | आँवले के बराबर | शरीर प्रमाण | अनियत | पूरे दिन |
| 13. | किसका आहार | फल/फूल | फल/फूल | फल/फूल/अन्न | अन्नाहार | अन्नाहार/तुच्छाहार | माँसाहार |
| 14. | वास निवास | वनवास | वनवास | वन/घर | नगरवास | नगरवास | बिलवास |
| 15. | संतति | सिंहवत् | सिंहवत् | सिंहवत् | गायवत् | गायवत् | कुतियावत् |
| 16. | संहनन | वज्रऋषभनाराच | वज्रऋषभनाराच | वज्रऋषभनाराच | 6 संहनन | 6 संहनन अंत में एक | सेवार्त |
| 17. | संस्थान | समचतुरस्र | समचतुरस्र | समचतुरस्र | 6 संस्थान | 6 संस्थान अंत में एक | हुण्डक |
| 18. | स्पर्श | मक्खन जैसा | रेशम के गुच्छे जैसा | आक की रुई जैसा | रुई जैसा | कंकर पत्थर के सदृश | सर्प-बिच्छू डंक जैसा तलवार धार सदृश |

19. वर्षा द्वार—पहले आरे में वर्षा होगी, तो दस हजार वर्ष तक धरती की सरसाई नहीं जायेगी। दूसरे आरे में वर्षा होगी, तो हजार वर्ष तक धरती की सरसाई नहीं जायेगी। तीसरे आरे में वर्षा होगी, तो सौ वर्ष तक धरती की सरसाई नहीं जायेगी। चौथे आरे में वर्षा होगी, तो दस वर्ष तक धरती की सरसाई नहीं जायेगी। पाँचवें आरे में तरसता-तरसता बरसे, बरसता-बरसता सूखे। छठे आरे में भोभर के अंगारे और खड्ग धार जैसी वर्षा होगी, पर्वत प्रासाद टूट जायेंगे।

## तत्त्व का अर्थ क्या है?

**तत्त्व अर्थात् वस्तु का वास्तविक स्वरूप तथा जिसका सदाकाल के लिए अस्तित्व है।**

### तत्त्व कितने हैं—

तत्त्व नौ हैं—(1) जीव तत्त्व, (2) अजीव तत्त्व, (3) पुण्य तत्त्व, (4) पाप तत्त्व, (5) आश्रव तत्त्व, (6) संवर तत्त्व, (7) निर्जरा तत्त्व, (8) बंध तत्त्व, (9) मोक्ष तत्त्व।

### 1. जीव तत्त्व—

जिसमें चेतना होती है अर्थात् जिसे सुख-दुःख का अनुभव होता है, उसे जीव कहते हैं।

### जीव का स्वरूप कैसा है?

- जीव का लक्षण **चेतना** है।
- जीव **नित्य-शाश्वत** (हमेशा रहने वाला) है।
- जीव आठ **कर्मों का कर्ता** है।
- जीव आठ **कर्मों का भोक्ता** है।
- भव्य जीव आठ कर्मों का क्षय कर **मोक्ष** प्राप्त कर लेता हैं।

### *Nine Tattva*

O there are nine elements in this universe
Would you like to name them?
Living things are jeev Tattva
Non living things are Ajiv Tattva
Good deeds are Punya Tattva
Bad deeds are Paap Tattva
To say, "Welcome Karma" is Ashrav Tattva
No Entry for karma is Samvar Tattva
To say, "Bye Bye Karma" is Nirjara Tattva
Karma mixed in Atma is Bandh Tattva
My pure Aatma will stay in Moksha
Oh God! Give me Moksh Moksh Moksh

### जीव के कितने भेद हैं?

जीव के दो भेद हैं—(1) त्रस जीव, (2) स्थावर जीव।

**(1) त्रस जीव**—जो जीव अपने आप हलन-चलन करते हैं, वे धूप से छाया में और छाया से धूप में आ-जा सकते हैं, वे त्रस जीव कहलाते हैं। उदाहरण—मनुष्य, नारकी, गाय, लट, चींटी, मच्छर, चूहा, मछली, देव इत्यादि।

**(2) स्थावर जीव**—जिनमें स्वयं हिलने-चलने की योग्यता नहीं है, उन्हें स्थावर जीव कहते हैं। उदाहरण—पृथ्वीकाय (मिट्टी), अप्काय (पानी), तेउकाय (अग्नि), वायुकाय (हवा), वनस्पतिकाय (पेड़-पौधे, कन्दमूल, हरी सब्जी आदि)।

## 2. अजीव तत्त्व–

जिसमें चेतना नहीं होती, सुख-दु:ख अनुभव करने की शक्ति नहीं होती है, उसे अजीव तत्त्व कहते हैं। उदाहरण–टेबल, कुर्सी, पेन, पेन्सिल, आसन, पुस्तक, शरीर इत्यादि यह सब अजीव है।

अजीव में ज्ञान, दर्शन और अनुभव शक्ति नहीं होती है। रूपी अजीव का स्वभाव सड़ना, गलना और नाश होने वाला है। इसलिए भगवान् ने अजीव वस्तुओं के उपयोग का संयम बताया है। अत: हमें हमारे दैनिक जीवन में अजीव वस्तुओं का उपयोग करते समय भी संयम रखना चाहिए। इनका दुरुपयोग नहीं करना चाहिए।

अजीव वस्तुओं में आसक्ति नहीं रखनी चाहिए क्योंकि उनका स्वभाव ही नाश होने वाला है। नाश होने वाली वस्तु हमारी कैसे हो सकती है? अत: आत्मा ही हमारी है, जो सदा हमारे साथ रहती है।

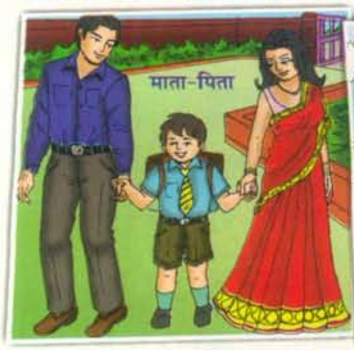


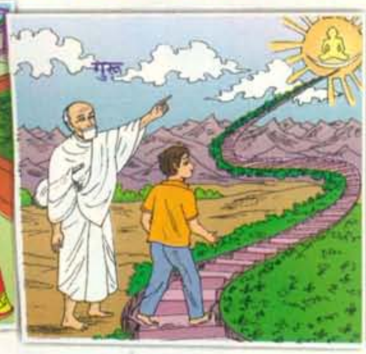


### पुण्य कैसे बँधता है ?

1. धर्म करने से पुण्य बँधता है।
2. दूसरों की मदद करने से पुण्य बँधता है।
3. नमस्कार सूत्र, सामायिक, प्रतिक्रमण, आगम वांचन करने से, धर्मगुरु को वंदन नमस्कार करने से।
4. माता-पिता एवं बड़ों के पैर छूकर जय जिनेन्द्र बोलने से।
5. साधु-सन्तों को भोजन (आहार) बहराने से या बहराने की भावना भाने से।
6. जीवों की दया पालने से।
7. जरूरतमंद की जरूरत पूर्ण करने से।

### पुण्य करने से लाभ–

1. पुण्य से हमें आज मनुष्य भव और जैनधर्म मिला है।
2. पुण्य से हमें पाँच इन्द्रियाँ और स्वस्थ शरीर मिला है।
3. पुण्य से ही हमारी सभी इच्छाएँ पूर्ण होती है और सुख-सुविधाएँ मिलती हैं।

## 3. पुण्य तत्त्व–

जिसका फल सुखरूप हो, जिसके एहसास से जीव को आनन्द की अनुभूति होती है, उसे पुण्य कहते हैं। पुण्य के कारण मनपसंद वस्तुएँ और धर्म मिलता है। जो शुभ (अच्छा) लगता है, वह पुण्य है। पुण्य का फल सदा मीठा होता है।

जिस प्रकार धन कमाने के लिए शुरू में बहुत मेहनत करनी पड़ती है, किन्तु बाद में लम्बे समय तक उससे सुख मिलता है। इसी प्रकार पुण्य कमाने के लिए पहले त्याग करना पड़ता है। फिर बहुत काल तक सुख की प्राप्ति होती है।

**अनन्त पुण्य से हमें यह मनुष्य भव मिला है, उसमें धर्म करके अधिक पुण्य उपार्जन करना चाहिए।**

## 4. पाप तत्त्व–

जिसका फल दु:ख रूप हो, जिसके एहसास से जीव को शोक की अनुभूति होती है, उसे पाप कहते हैं। पाप करना सरल है, परन्तु उसका फल भोगना बड़ा ही कठिन है। पाप के उदय के कारण बहुत तकलीफें आती हैं। हमने पूर्व में जो अशुभ कर्मों का बंध किया, जब वे उदय में आते हैं तो दु:ख आते हैं, अत: हमें पाप कार्य नहीं करने चाहिए।

जो पाप से डरता है, वही अशुभ कर्म के बंध से बच सकता है। जीव हँसते-हँसते पाप बाँध लेता है, परन्तु रो-रोकर पाप भुगतने पड़ते हैं। ज्ञानी फरमाते हैं कि जो पाप से डरता है, वही बुद्धिमान है।

### तो पाप का बंध किस कारण से होता है?

1. जीवों को तकलीफ देने से या मारने से।
2. झूठ बोलने और चोरी करने से।
3. क्रोध, अभिमान, ईर्ष्या और कपट करने से।
4. ज्यादा वस्तुएँ या धन मुझे प्राप्त हो, ऐसी सोच से भी पाप का बंध होता है।
5. कच्चा पानी, जमीकंद, हरी सब्जी का उपयोग करने से।
6. निंदा (चुगली) करने से।
7. धर्म का कार्य करने में अप्रसन्नता और पाप के कार्य करने में प्रसन्नता का अनुभव करने से।

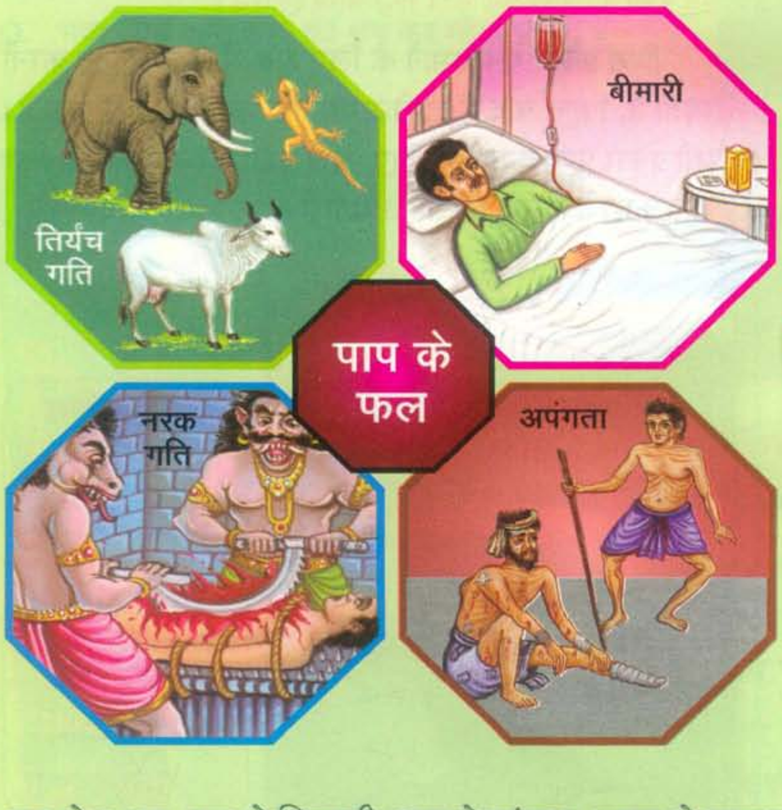


### हमें इन पापों का फल क्या मिलता है?

1. बीमार शरीर मिलता है।
2. बीमारियाँ आती हैं।
3. नरक गति में जाना और वहाँ दु:ख भोगना पड़ता है।
4. तिर्यंच गति में जाना और वहाँ दु:ख भोगना पड़ता है।
5. अपंगता, लाचारी और गरीबी भोगनी पड़ती है।

तन से रुग्ण, मन से विकारी, धन से कंजूस, वचन से कटुभाषी, बुद्धि से विकल, सदाचार से शून्य पाप के फल हैं।

*अत: हमें पाप नहीं करना चाहिए, वह आत्मा को भटका देता है।*

## 5. आश्रव तत्त्व–

नये कर्मों का आना (शुभ या अशुभ) आश्रव है। पुण्य के काम करने से जो कर्म आते हैं, वह शुभ हैं। पाप से जो कर्म आते हैं, वह अशुभ हैं।

## 6. संवर तत्त्व–

आश्रव (पाप कर्मों) को रोकने वाली क्रिया संवर है। संवर करने के लिए–

1. सामायिक-प्रतिक्रमण करना
2. तप करना
3. जीवदया पालना
4. सत्य बोलना
5. चोरी न करना
6. मन-वचन-काया की अशुभ प्रवृत्ति (Movements) को रोकना
7. अपनी चीज-वस्तु को यतना से लेना
8. पाँच इन्द्रियों को वश करना
9. चार कषाय से मुक्त रहना

## 7. निर्जरा तत्त्व–

पूर्व के किये हुए कर्मों को धर्म करके आत्मा से अलग करना निर्जरा है। 12 प्रकार के तप से निर्जरा होती है–

1. **अनशन**– उपवास, बेला, तेला, अट्ठाई आदि तप करना।
2. **उणोदरी**– भूख से कम खाना।
3. **भिक्षाचरी**– समभावपूर्वक निर्दोष गोचरी लाना।
4. **रसपरित्याग**– विगय (दूध, दही, घी, तेल, मीठा) का त्याग करना।
5. **काय क्लेश**– लोच करके, नंगे पैरों चलकर, तप आदि कर ज्ञानपूर्वक काया को कष्ट देना।
6. **प्रतिसंलीनता**– 5 इन्द्रियों का निग्रह करना।
7. **प्रायश्चित्त**– किये हुए पाप की आलोचना करना।
8. **विनय**– देव, गुरु आदि की विनय भक्ति करना।
9. **वैयावच्च**– गुरु, तपस्वी, रोगी आदि की सेवा करना।
10. **स्वाध्याय**– पढ़ना, नया ज्ञान सीखना, प्रश्न पूछना, पढ़ाना, कथा करना।
11. **ध्यान**– किसी भी एक विषय पर मन की एकाग्रता रखना।
12. **व्युत्सर्ग**– शरीर, संसार के ममत्व का त्याग करना।

*जीव तत्त्व व अजीव तत्त्व से ही यह सारा संसार बना है। कषायों से 8 कर्मों का बंध करके संसार बढ़ता है। परंतु भव्य जीव संसार के स्वरूप को समझकर 8 कर्मों का क्षय करके मोक्ष रूपी परम तत्त्व को प्राप्त कर लेता है।*

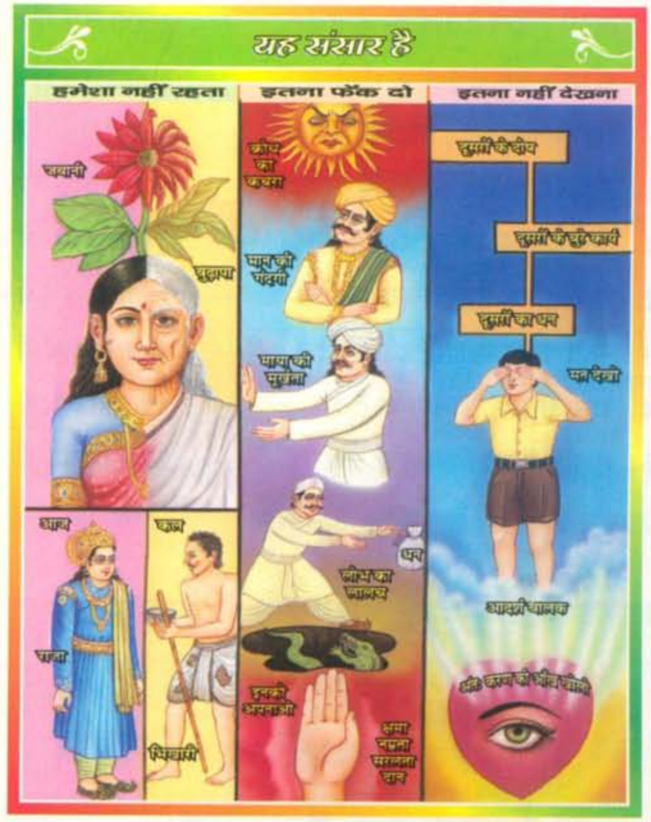


## 8. बंध तत्त्व–

आत्मा से कर्म का बन्धन होना बन्ध कहलाता है। जिस प्रकार दूध पानी में घुल-मिलकर एक हो जाता है, उसी तरह आत्मा में कर्म पुद्गल एकमेक हो जाते हैं। बंध तत्त्व के चार भेद हैं–**(1) प्रकृति**–कर्म का स्वभाव। **(2) स्थिति**–कर्म की स्थिति। **(3) अनुभाग**–कर्म का तीव्र या मंद रस परिणाम। **(4) प्रदेश**–कर्म पुद्गल का आकार या परिमाण।

## 9. मोक्ष तत्त्व–

आत्मा पर से सम्पूर्ण कर्म का हटना/अलग होना मोक्ष है।

# पुण्य खपाने का थोकड़ा

(सूत्र श्री भगवतीजी शतक १८, उद्देशक ७)

| | | |
|---|---|---|
| 1. वाणव्यंतर देव जितने पुण्य को | — | 100 वर्ष में खपावे, उतने पुण्य को |
| 2. नौ निकाय के देव | — | 200 वर्ष में खपावे, उतने पुण्य को |
| 3. असुरकुमार देव | — | 300 वर्ष में खपावे, उतने पुण्य को |
| 4. ग्रह-नक्षत्र-तारा-विमानवासी देव | — | 400 वर्ष में खपावे, उतने पुण्य को |
| 5. चन्द्र-सूर्य विमानवासी देव | — | 500 वर्ष में खपावे, उतने पुण्य को |
| 6. पहले-दूसरे देवलोक के देव | — | 1000 वर्ष में खपावे, उतने पुण्य को |
| 7. तीसरे-चौथे देवलोक के देव | — | 2000 वर्ष में खपावे, उतने पुण्य को |
| 8. पाँचवें-छट्ठे देवलोक के देव | — | 3000 वर्ष में खपावे, उतने पुण्य को |
| 9. सातवें-आठवें देवलोक के देव | — | 4000 वर्ष में खपावे, उतने पुण्य को |
| 10. नौवें से बारहवें देवलोक के देव | — | 5000 वर्ष में खपावे, उतने पुण्य को |
| 11. नौ ग्रैवेयक की 1 त्रिक के देव | — | 1 लाख वर्ष में खपावे, उतने पुण्य को |
| 12. नौ ग्रैवेयक की 2 त्रिक के देव | — | 2 लाख वर्ष में खपावे, उतने पुण्य को |
| 13. नौ ग्रैवेयक की 3 त्रिक के देव | — | 3 लाख वर्ष में खपावे, उतने पुण्य को |
| 14. चार अनुत्तर विमान के देव | — | 4 लाख वर्ष में खपावे, उतने पुण्य को |
| 15. सर्वार्थ सिद्ध विमान के देव | — | 5 लाख वर्ष में खपावे। |

**नोट**—जैसे अनेक मण भार वाले लकड़े जलती होली में 1 रात्रि में जलकर भस्म हो जाते हैं। उस लकड़े की अगरबत्ती बनाकर जलाया जाये, तो वर्षों लग जाते हैं। वैसे ही हास्य, कंदर्प इत्यादि में पुण्य शीघ्र खपते हैं। जबकि इन्द्रिय, कषाय, योग को वश करने वालों के पुण्य धीरे-धीरे क्षय होते हैं।

## सरगम

तर्ज : ए मेरे प्यारे वतन.....

साधना के रास्ते, आत्मा के वास्ते,
चल रे राही चल, चल, चल,
मुक्ति की मंजिल मिले, शांति के सुमन खिले,
चल रे राही चल, चल, चल ॥टेर॥

कौन है अपना यहाँ, किनको पराया हम कहे,
एक की आँखों में खुशियाँ, एक के आँसू बहे,
आत्म मंदिर में चले, ज्योति से ज्योति मिले... ॥1॥

ज्ञान नहीं अज्ञान था, सो भटकते थे हर जनम,
छल कपट माया में पड़कर, फिसलते थे हर कदम,
राह हो कल्याण की, भव हरण भगवान की... ॥2॥

चन्द्र जीओ जगत में, जल में कमल सी जिन्दगी,
सत्य शिव सौन्दर्य की, करते रहे हम बन्दगी,
शेष सब निःशेष हो, हृदय का अभिषेक हो... ॥3॥

# स्थूलिभद्र

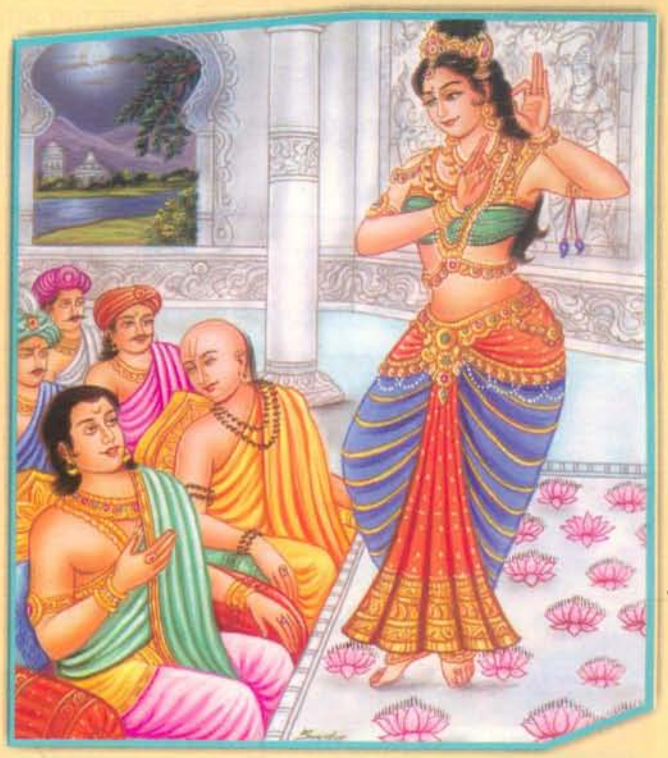

पाटलिपुत्र नरेश धननन्द के महामन्त्री शकडाल थे। शकडाल के दो पुत्र थे—बड़ा स्थूलिभद्र और छोटा श्रीयक। इनके अतिरिक्त उनके यक्षा आदि सात पुत्रियाँ भी थीं। महामात्य शकडाल कल्पकवंशीय थे।

स्थूलिभद्र बाल्यावस्था से ही उदासीन स्वभाव के थे। अलग कक्ष में बैठकर चिन्तन किया करते थे। संसार का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए महामात्य ने उन्हें कोशा वेश्या के यहाँ भेजा।

कोशा पाटलिपुत्र की राजनर्तकी और परम रूपसी थी। उसकी नृत्य-संगीत की कला बेजोड़ थी। उसको देखते ही लोग मंत्रमुग्ध रह जाया करते थे। बड़े-बड़े धनी, सामंत और राजकुमार उसके एक प्रेम-कटाक्ष के लिए लालायित रहते थे।

जैसे ही स्थूलिभद्र कोशा वेश्या के भवन में पहुँचे कि कोशा इनके प्रति समर्पित हो गई। उसके अनन्य और अतिगाढ़ प्रेम में ये भी ऐसे डूबे कि अपने घर का रास्ता भी भूल गये। बारह वर्ष तक घर की सुधि भी नहीं ली।

इसी बीच वररुचि के षड्यन्त्र से महामात्य शकडाल को प्राणोत्सर्ग करना पड़ा। उनके प्राणोत्सर्ग से धननन्द की आँखें खुल गईं। उसे महामात्य शकडाल और उसके परिवार की स्वामिभक्ति पर विश्वास जम गया। जब धननन्द ने स्थूलिभद्र को महामन्त्री पद पर अभिषिक्त करने के लिए बुलवाया तब उन्हें पिता की मृत्यु का पता लगा। जिन स्थितियों में पिता ने प्राणोत्सर्ग किया था, उस विकट राजनीति से उन्हें घृणा हो गई। उन्होंने संसार को ठोकर मारकर आचार्य संभूतिविजय से प्रव्रज्या ग्रहण कर ली और दुष्कर तप करने लगे। ग्यारह अंगों के पारगामी बन गये।

एक बार चातुर्मास करने के लिए इन्होंने गुरुदेव संभूतिविजय से आज्ञा माँगते हुए अपनी इच्छा प्रकट की—"गुरुदेव! मैं कोषा वेश्या की चित्रशाला में चातुर्मास करके अपनी दृढ़ता की परीक्षा करना चाहता हूँ। विशिष्ट ज्ञानी आचार्य संभूतिविजय ने क्षण भर के लिए उपयोग लगाया और उस कठोर साधना में उत्तीर्ण होने योग्य समझकर इन्हें अनुमति प्रदान कर दी।

कोशा की चित्रशाला में रहकर भी ये अडिग रहे। वहाँ के षट्रस व्यंजन और कामोद्दीपक वातावरण में भी इन्होंने सफल साधना की। कोशा ने भी इनसे प्रभावित होकर श्रावकधर्म स्वीकार कर लिया। वह श्राविका बन गई। जब चातुर्मास व्यतीत करके ये गुरुदेव के पास आये, तो उन्होंने इनका स्वागत किया और इनकी साधना को 'अति दुष्कर' बताकर इनकी प्रशंसा की।

द्वादशवर्षीय अकाल में जब अनेक श्रुतधर काल-कवलित हो गये, तब अकेले भद्रबाहु ही श्रुतकेवली रह गये थे। वे नेपाल में महाप्राणध्यान साधना कर रहे थे। एकादश अंगों का तो यथातथ्यरूपेण संकलन हो गया; लेकिन बारहवें अंग दृष्टिवाद का संकलन न हो सका। तब संघ ने पाँच सौ साधुओं के साथ स्थूलिभद्र को नेपाल श्रुतकेवली आचार्य भद्रबाहु के पास भेजा। वहाँ ये उनसे दृष्टिवाद की वाचना लेने लगे।

अभी ये बारहवें अंग के 14 पूर्वों में से 10 पूर्वों की ही वाचना ले पाये थे कि इनकी संसारपक्षीय यक्षा आदि बहनें, जो साध्वी बन चुकी थीं, इनके दर्शनों के लिए आयीं। विद्या के चमत्कार-प्रदर्शन के लिए इन्होंने सिंह का रूप बना लिया। जैसे ही भद्रबाहु स्वामी को यह बात ज्ञात हुई, उन्होंने आगे वाचना देना बन्द कर दिया। स्थूलिभद्र मुनि को अपनी भूल का ज्ञान हुआ। उन्हें स्वप्न में भी यह ध्यान नहीं था कि एक साधारण-सा प्रदर्शन मेरे लिए ऐसे भयंकर परिणाम की उत्पत्ति करेगा। मुनिवर ने बार-बार अपनी भूल के लिये क्षमायाचनाएँ की। काफी अनुनय-विनय के बाद उन्होंने शेष 4 पूर्वों की शाब्दिक वाचना दी।

इस प्रकार आचार्य स्थूलभद्र ग्यारह अंग और 10 पूर्वों के पाठी हुए। शेष चार पूर्वों का इन्हें शाब्दिक ज्ञान था।

# UPKARAN उपकरण

**जैन उपकरण भण्डार**

दुनिया में ऐसी बहुत सारी वस्तुएँ हैं, जिन्हें खरीदने से और खरीदने के बाद उन वस्तुओं को अपने जीवन में उपयोग करने से बहुत पाप लगता है। इससे धीरे-धीरे हमारे पुण्य का बैलेंस कम हो जाता है।

इस दुनिया में कुछ वस्तुएँ ऐसी भी हैं, जिन्हें खरीदकर अपने उपयोग में लाने से हमारे कई गुना पाप कम हो जाते हैं।

*सामायिक, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय आदि धर्मक्रिया करने के लिए प्रयोग होने वाली आवश्यक वस्तुओं को **उपकरण** कहते हैं।*

**आसन**—1. सफेद रंग के चौरस ऊनी वस्त्र को आसन कहते हैं। आसन बिछाने से जीव-जंतु शरीर पर न चढ़ते हुए किनारे से निकलकर चले जाते हैं।

2. जिसे खरीदकर स्वयं उपयोग में लें अथवा किसी दूसरे को दें तो मन में शुभ भाव आते हैं।

आसन, मिला महावीर का जिनशासन

**मुँहपत्ति**—1. 21×16 अंगुल का सफेद रंग का वस्त्र मुँहपत्ति कहलाता है। इसे पहनने से वायुकाय के जीवों की रक्षा होती है। त्रस जीव मुँह में आकर नहीं गिरते हैं।

2. यह जैनधर्म का चिन्ह है।

3. जिसे खरीदकर स्वयं उपयोग में लें अथवा अन्य किसी दूसरे को दें तो वायुकाय के जीवों की रक्षा होती है।

मुँहपत्ति, टले भव आपत्ति

**पूँजणी**—पूँजणी की फलियाँ ऊन की बनी होती हैं। उसे पकड़ने के लिए डंडी (भाई के गुच्छे में) या नाकी (बहन के गुच्छे में) होती है। चींटी, मकोड़े आदि छोटे-छोटे जीव-जंतु आसन पर या शरीर पर चढ़ जावें तो गुच्छे से यत्नापूर्वक दूर कर सकते हैं। इससे उन जीवों को कष्ट नहीं होता है।

पूंजणी, यतना की दिव्य मणी

**रजोहरण**—ऊन का बना होता है। लम्बी लकड़ी से उसे बाँधना होता है। रात्रि को अँधेरे में चलते समय इस रजोहरण से जमीन पर चल रहे जीव की रक्षा करने के लिए, दया पालने के लिए पूँजकर चलना चाहिए।

रजोहरण, दिलाए संयम का स्मरण

**पूँजणी एवं रजोहरण खरीदकर स्वयं उपयोग में लें अथवा अन्य किसी दूसरे को दें तो मच्छर, चींटी आदि जीवों की रक्षा होती है।**

**माला**—माला के 108 मणके (Beads) होते हैं। माला गिनने से मन को शांति मिलती है और कर्म निर्जरा होती है। जिसे खरीदकर स्वयं उपयोग में लें अथवा अन्य किसी दूसरे को दें, तो भगवान् का नाम लिया जाता है।

माला-खुले मोक्ष का ताला

**चोलपट्टा**—भाई सफेद चोलपट्टा और दुपट्टा पहनते हैं। बहनें भी सादे वस्त्र पहनती हैं।

**पुस्तक**—1. समभाव की वृद्धि हो, धार्मिक ज्ञान प्राप्त हो, ऐसी पुस्तक नित्य पढ़नी चाहिए। नोटबुक, पेंसिल, रबर, पेन आदि भी अपने साथ में रखने चाहिए ताकि प्रवचन की, धर्मचर्चा की अच्छी बातों को तुरन्त नोट किया जा सके, जो आगे भी आपकी आत्मा को जगाती रहेगी।

2. जिसे खरीदकर स्वयं उपयोग में लें अथवा किसी अन्य दूसरे को दें, तो ज्ञानावरणीय कर्म का क्षय होता है।

*पुस्तक-देती ज्ञान के द्वार पर दस्तक*

**ठवणी**—1. ठवणी पुस्तक रखने का योग्य साधन है। जिससे पुस्तक की देखभाल होती है। पढ़ने में अनुकूलता रहती है। यह प्राय: लकड़ी की बनी होती है।

2. जिसे खरीदकर स्वयं उपयोग में लें अथवा अन्य दूसरे को दें, तो उसके ऊपर पुस्तक रखकर ज्ञान की आशातना से बचा जा सकता है।

**यदि इन सभी वस्तुओं को हम स्वयं खरीदते हैं अथवा खरीदकर किसी दूसरे को देते हैं, तो हमारे कई कर्म नष्ट हो जाते हैं।**

## इन उपकरणों का उपयोग कर हमें रोज सामायिक करनी चाहिए।

## साधना की गहराई

### जीव को दस बोल मिलना दुर्लभ

हे आयुष्यमन! तूं चिंतन कर कि इन दुर्लभ बोलों में से तेरे लिए कितने बोल सुलभ हुए हैं। तूं कितना पुण्यशाली है, इसे देख व यह भी देख की मैं इस पुण्य का उपयोग किस रूप में कर रहा है। एक दुर्लभ बोल की प्राप्ति का होना 10 प्रतिशत पुण्य के बराबर है अब देखो तुम्हारा पुण्य कितने प्रतिशत है? कम है तो क्यों? इसे भी जानने का प्रयास करो।

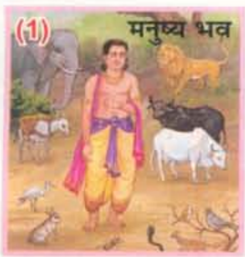

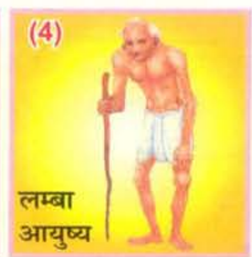

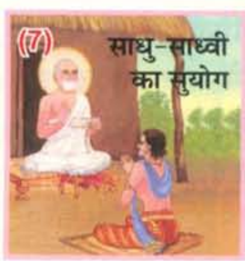

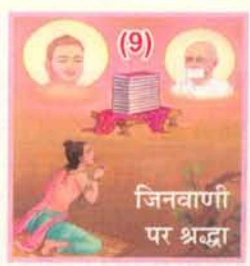


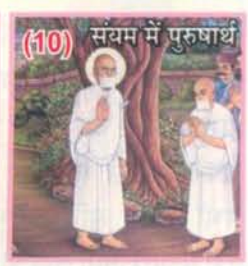


**कथा रूपी विजय पथ**

# देवभद्र-यशोभद्र (भृगु पुरोहित)

इषुकार नाम का एक नगर था। वहाँ के राजा का नाम **इषुकार** और रानी का नाम **कमलावती** था। उसी नगर में एक **भृगु नामक राजपुरोहित** रहता था, उसकी पत्नी का नाम **यशा** था। भृगु राजपुरोहित बहुत ही धनाढ्य था और नगर में उसका बहुत मान-सम्मान था। किन्तु उसके कोई सन्तान नहीं होने से दोनों पति-पत्नी चिन्तित रहते थे। एक बार दो देव साधु वेष बनाकर भृगु राजपुरोहित के घर आये, तो पति-पत्नी दोनों ने मुनि को वन्दना की और कहा कि "हे मुनिवर! हमारे कोई सन्तान नहीं है। अत: भविष्य में हमें कोई सन्तान की प्राप्ति होगी या नहीं?" मुनिवेश में आये हुए देव युगल ने कहा—**"तुम्हें दो पुत्र होंगे, किन्तु वे बचपन में ही जैन दीक्षा ग्रहण कर लेंगे।** वे मुनि बनकर जिन शासन की प्रभावना करेंगे। इतना कहकर श्रमणवेशी देव वहाँ से चले गये।

पुरोहित दम्पत्ति को पुत्र प्राप्ति की बात से प्रसन्नता हुई, किन्तु मन में यह भय था कि वे बाल्यावस्था में ही मुनि बन जायेंगे। यथा समय दोनों देवों की भविष्यवाणी के अनुसार भृगु पुरोहित के यहाँ दो पुत्रों का जन्म हुआ। **पुरोहित पत्नी यशा बच्चों के मन में साधुओं के प्रति घृणा और**

भय की भावना भरती रहती थी। वह कहती रहती थी कि जैन साधु अपने पास छुरी-कैंची रखते हैं। माँ की इस कुशिक्षा ने बालकों के मन में साधुओं के प्रति भय बिठा दिया था। इसलिए वे साधुओं के पास नहीं जाते थे।

जिनके पूर्व जन्म के संस्कार प्रबल होते हैं, उन्हें पुण्य योग से कोई न कोई निमित्त मिल ही जाता है। एक बार वे दोनों बालक नगर के बाहर खेल रहे थे, तभी सामने से साधुओं को आते देखकर घबरा गये और झटपट एक वृक्ष पर चढ़ गये। वहाँ से चुपचाप देखने लगे कि वे साधु क्या करते हैं? संयोग से साधु उस ओर ही आये तथा उसी वृक्ष के नीचे आकर रजोहरण से चींटियों को एक ओर सुरक्षित किया। चारों ओर जमीन की प्रतिलेखना प्रमार्जना करके झोली में से भिक्षा पात्र निकालकर यतनापूर्वक भोजन किया। साधुओं के दयामय व्यवहार को देखकर पेड़ पर चढ़े हुए दोनों पुरोहित पुत्रों का भय और भ्रम दूर हुआ। वे सोचने लगे कि ऐसे दयालु साधु तो हमने पहले कहीं देखे हैं।

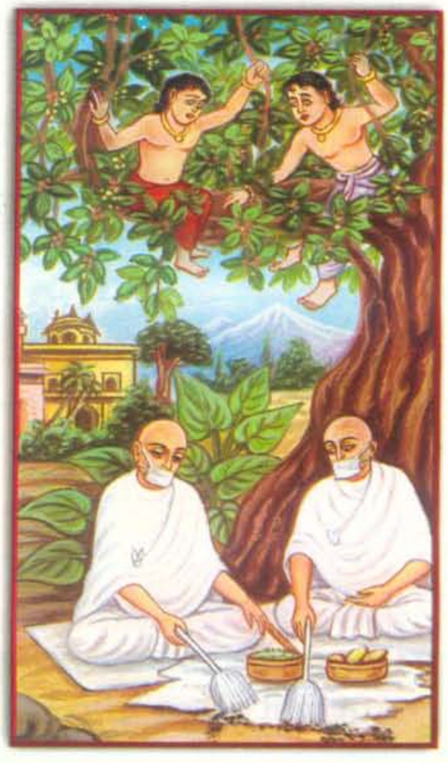

चिन्तन करते-करते उन बालकों को जातिस्मरण ज्ञान हो गया। जातिस्मरण ज्ञान हो जाने के कारण वे दोनों अपने पूर्वभवों को जानने लगे। इससे पूर्व के तीसरे भव में स्वयं के साधु होने का स्मरण हो आया। उन्हें मन ही मन बहुत प्रसन्नता हुई। दोनों बालक वृक्ष से नीचे उतरे और मुनियों के पास आये। मुनियों को वन्दन-नमस्कार किया। मुनियों ने उन्हें जिज्ञासु समझकर प्रतिबोध दिया। उन्हें समझाया कि यह संसार दु:ख से भरा हुआ है। सभी रिश्ते स्वार्थ के हैं। जब कोई दु:ख आए तो धर्म के अलावा इस संसार में कोई भी शरण नहीं देता है। पूर्व भव की याद एवं संतों के उपदेश के प्रभाव से दोनों को वैराग्य उत्पन्न हो गया। दोनों ने दीक्षा ग्रहण करने का निश्चय किया। मुनियों को वन्दन-नमस्कार करके अपने घर आए। घर आकर अपने माता-पिता से इस प्रकार कहने लगे- "पूज्य माताजी-पिताजी, यह मनुष्य जीवन अनित्य एवं क्षण भंगुर है। अब हमको संसार एवं परिवार में आनन्द प्राप्त नहीं होता। अत: हम दीक्षा ग्रहण करेंगे। इसके लिए हम आपकी आज्ञा चाहते हैं।" भृगु पुरोहित अपने पुत्रों से कहता है कि "हे पुत्रों! अपने घर में बहुत सारा धन-दौलत है, खाने-पीने आदि सभी साधन, सुविधाएँ भी प्रचुर मात्रा में है। तुम उनका उपभोग करो। योग्य वय में शादी करके वंश परंपरा आगे बढ़ाओ। अभी संयम (दीक्षा) लेने का विचार मत करो।"

दोनों कुमार अपने पिता से कहते हैं—"हे पिताश्री! ये सब तो हमें कई पूर्व भवों में भी प्राप्त हो चुका है मगर इनसे हमारा आत्म-कल्याण नहीं हो सका। हे पिताश्री! प्रतिक्षण आयुष्य घटता जा रहा है। इस प्रकार आप समझो, जो-2 रात्रि व्यतीत होती जा रही है, वह पुन: लौटकर नहीं आती अर्थात् बीता हुआ समय वापस नहीं आता। अधर्म करने वाले प्राणियों की वे सब रात्रियाँ निष्फल हो जाती हैं। किन्तु धर्म का सेवन करने वाले प्राणियों की वे सब रात्रियाँ सफल हो जाती हैं।"

देवभद्र और यशोभद्र दोनों पुत्रों के दीक्षा लेने की उत्कृष्ट इच्छा को देखकर अंत में पिता भृगु पुरोहित की भी दीक्षा लेने की भावना हो गई और वह अपनी पत्नी यशा से कहता है कि इस संसार में पंख बिना पक्षी तथा संग्राम में सेना रहित राजा और जहाज में धन, सामग्री से रहित व्यापारी शोभित नहीं होता, वैसे ही मैं गृहस्थ जीवन में पुत्रों से रहित जीवन जीकर शोभित नहीं हो सकता।

दोनों पुत्रों और पति की प्रबल इच्छा को देखकर पुरोहित पत्नी यशा भी संयम लेने को तैयार हो जाती है। अपना घरबार एवं सम्पत्ति छोड़कर वे चारों ही दीक्षा लेने के लिए घर से निकल गये। अब संसार में पुरोहित परिवार का कोई उत्तराधिकारी नहीं था। पूरे परिवार ने दीक्षा ग्रहण कर ली थी। इस कारण राजा इषुकार ने पुरोहित परिवार की धन-सम्पत्ति आदि को राज्य भण्डार में जमा कराने की घोषणा कर दी।

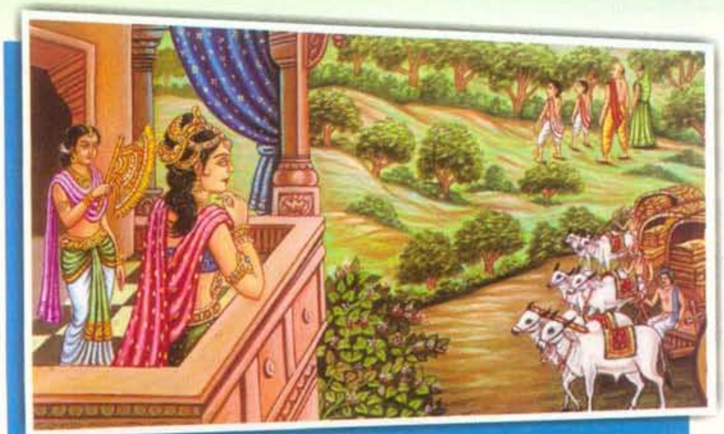

राजा इषुकार की पत्नी **कमलावती** धार्मिक विचारों की थी। उसने जब यह सारी घटना सुनी, तो उसके मन में भी वैराग्य की भावना पैदा हो गई। रानी कमलावती राजा को कहती है कि हे राजन्! ब्राह्मण द्वारा छोड़े हुए धन को आप ग्रहण करना चाहते हैं, परन्तु आपको यह मालूम होना चाहिए कि वमन अर्थात् उल्टी किये हुए पदार्थ को खाने वाले पुरुष की सभी जगह निन्दा ही होती है। कोई उसकी प्रशंसा नहीं करता। फिर आप क्यों पुरोहित परिवार द्वारा त्यागी हुई धन-सम्पत्ति प्राप्त करना चाहते हो।

हे राजन्! जब मृत्यु का समय आयेगा, तब आपको सारी धन-सम्पत्ति यहीं छोड़कर जाना होगा। अत: हे नरदेव! **इस संसार में धर्म की शरण लेने वाला ही वास्तविक सुख और शान्ति को प्राप्त करता है। अत: मैं भी संयम को अंगीकार करके अपनी आत्मा का कल्याण करूँगी। रानी के प्रतिबोध को सुनकर राजा के मन में भी दीक्षा अंगीकार करने की भावना उत्पन्न हो जाती है।** फिर राजा और रानी भी विशाल राज्य, धन-दौलत, सुख, साधनों आदि का त्याग करके दीक्षा अंगीकार कर लेते हैं। छहों आत्माओं ने उत्कृष्ट संयम का पालन कर मुक्ति के अनुपम सुखों को प्राप्त किया।

## इस कहानी से हमें क्या शिक्षा मिलती है?

### इस कहानी से हमें यह शिक्षा मिलती है कि

1. मनुष्य जन्म की सार्थकता धन में आसक्ति रखने से नहीं है। साधन, भौतिक सुविधाएँ, धन-दौलत, परिवार क्षणिक हैं। अत: हमें इनमें आसक्ति नहीं रखनी चाहिए।
2. सच्चा सुख और शान्ति देने वाला एकमात्र धर्म ही है। अत: हमें तप, त्याग, ज्ञान, ध्यान करते हुए जीवन को सफल बनाना चाहिए।
3. हमारी उम्र बीतती जा रही है, मृत्यु कभी भी हो सकती है। इसलिए धर्म करने में थोड़ा-सा भी आलस्य और प्रमाद नहीं करना चाहिए।
4. दीक्षा लेने वाले भाई-बहिनों के सहयोगी बनना चाहिए, बाधक नहीं।
5. हमें आपस में वैराग्य की भावना उत्पन्न कराने वाली कथाएँ, चर्चाएँ करनी चाहिए, जिससे धर्म की श्रद्धा एवं समर्पण में उत्तरोत्तर वृद्धि हो सके।

## सरगम

### माला एक जपना

(तर्ज–राधा बिन कृष्णा.....)

माला एक जपना, काम यह अपना,
भूल क्यों जाता रे बंदे, भूल क्यों जाता।
दुनियाँ है सपना, कोई नहीं अपना...
भूल क्यों जाता रे बंदे, भूल क्यों जाता ॥टेर॥

ब्रह्ममुहूर्त्त की इस बेला में, बहता अमृत झरना,
आलस को छोड़कर, खाली घट भरना।
नींद जो उड़ाता, मँहगें मोती पाता...
भूल क्यों जाता रे बंदे, भूल क्यों जाता ॥1॥

तिर कर सागर सारा, पाया है किनारा,
तट पर पहुँचकर, हिम्मत क्यों हारा,
हिम्मत की कीमत, आगम है गाता...
भूल क्यों जाता रे बंदे, भूल क्यों जाता ॥2॥

चौरासी के चक्कर में, तू कितनी बार आया,
कितनी मुश्किल से तूने, मानव भव पाया,
पाया उसे अब, व्यर्थ क्यों गँवाता...
भूल क्यों जाता रे बंदे, भूल क्यों जाता ॥3॥

करता क्यों गर्व पगले, धन परिजन का,
क्रोध मान माया लोभ, मैल इस मन का,
सुमिरण साबुन से, पाप धुल जाता...
भूल क्यों जाता रे बंदे, भूल क्यों जाता ॥4॥

# VYASAN व्यसन

**व्यसन यानि बुराई अथवा बुरी आदत**

जिन आदतों से जीवन की बगियाँ सूख जाती है, इंसान धर्म व सदाचार से दूर हो जाता है।

तन-मन-धन और जीवन का नुकसान करने वाली आदत ही **व्यसन** है।

जीवन में अगर एक बार बुरी आदत लग जाए, तो उसे छोड़ना बहुत मुश्किल होता है।

ये बुरी आदतें सात प्रकार की होती है, जो हमारी आत्मा को महाभंयकर नरक की ओर ले जाती है।

वे सात व्यसन निम्नलिखित हैं—

(1) जुआ खेलना, (2) माँस खाना,
(3) शराब पीना, (4) वेश्या गमन करना,
(5) शिकार खेलना (6) चोरी करना
(7) परस्त्री गमन करना

**(1) जुआ खेलना (Gambling)**
जुआ खेलने से धन का नाश।

**(2) माँस खाना**
**(Eating non-vegetarian food)**
माँस भक्षण से दया धर्म का नाश होता है।

**(3) शराब पीना (Drinking Wine)**
शराब सभी अनर्थों का मूल है और बीमारियों का निमंत्रण है।

**(4) वेश्या गमन करना (Prostitute)**
नरक का पासपोर्ट मिलता है, धन और धर्म का नाश होता है।

### (5) शिकार खेलना (Hunting)

क्षणिक मनोरंजन यानि क्षण का मजा भव-भव की सजा।

### (7) परस्त्री गमन करना (Extra Marital Affairs)

घर के महकते उपवन को उजाड़ने वाला यह व्यसन नरक के लिए Metro Train के समान है।

Bad Habits जैसे टी.वी., मोबाइल—स्वास्थ्य, समय, सम्पत्ति, संस्कार को बिगाड़ने वाले एवं सामुदानिक कर्म बंधन कराने वाले इन साधनों से पालक (माता-पिता) बचेंगे तो बालक सुधरेंगे।

*पाँव फिसल गया तो, संभलना मुश्किल है।*
*कलंक लग गया तो, धुलना मुश्किल है।*
*मनुष्य जन्म हार गया तो, मिलना मुश्किल है।*
*इन सात व्यसनों का हमको पूर्णतया त्याग करना चाहिए।*
*सच्चा जैन श्रावक इन सात बुरी आदतों से हमेशा दूर रहता है।*

### (6) चोरी करना (Stealing)

चोरी एक महापाप है, जो अन्य नये-नये पाप करवाता है।

## साधना की गहराई

## जैनधर्म की बारह शिक्षा

1. **अहिंसा**—सदा जीव की रक्षा करना।
2. **सत्य**—मुख से सच्ची बातें कहना।
3. **अचौर्य**—माँग-पूछकर वस्तु लेना।
4. **ब्रह्मचर्य**—सदाचार का पालन करना।
5. **अपरिग्रह**—अपनी इच्छा सदा घटाना।
6. **दिशा परिमाण व्रत**—व्यर्थ इधर-उधर नहीं आना-जाना।
7. **उपभोग परिभोग परिमाण व्रत**—सीधा-सादा जीवन जीना।
8. **अनर्थ दण्ड विरमण व्रत**—कोई अनर्थ का काम न करना।
9. **सामायिक व्रत**—नित उठकर सामायिक करना।
10. **देशावगासिक व्रत**—जीवन में मर्यादा रखना।
11. **प्रतिपूर्ण पौषध व्रत**—बने जहाँ तक पौषध करना।
12. **अतिथि संविभाग व्रत**—अपने हाथों से बहराना।

# सुदर्शन सेठ-अर्जुनमाली

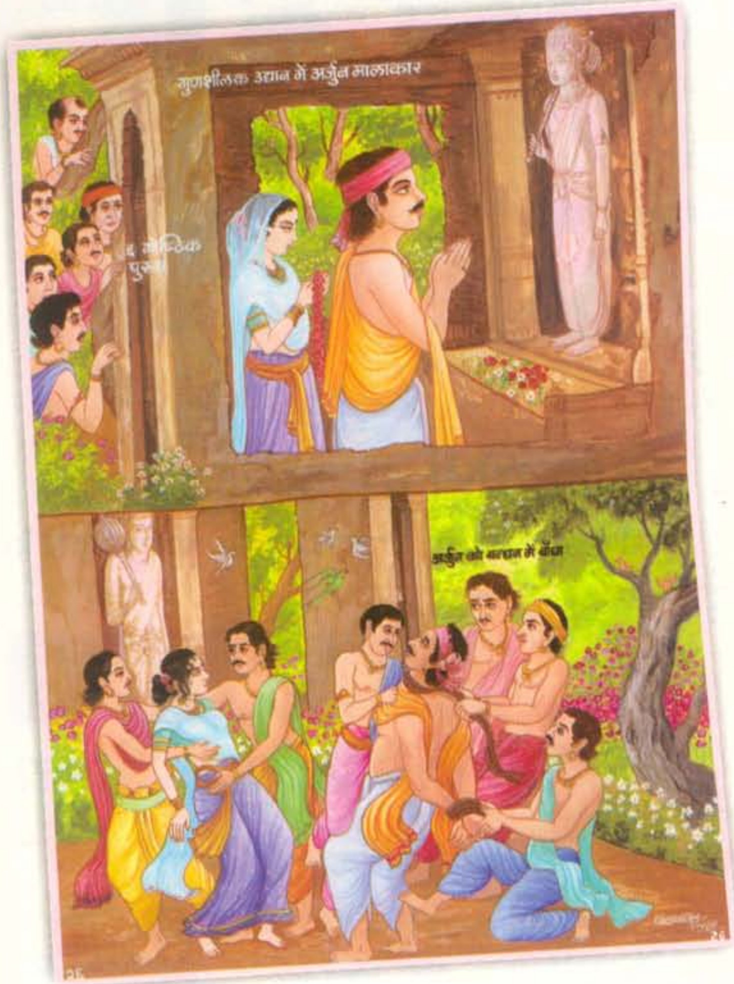


अंतगडदशासूत्र के छठे वर्ग के दूसरे अध्ययन में अर्जुनमाली और सुदर्शन सेठ का वर्णन है। राजगृह नगर में अर्जुन नाम का एक मालाकार (माली) रहता था। नगर के समीप उसका रंग-बिरंगे सुगंधित फूलों से भरा हुआ एक बहुत ही मनोरम उद्यान था। वह उद्यान के फूल को बेचकर अपनी आजीविका चलाता था।

उसका एक नियम था, वह प्रतिदिन सुबह सर्वप्रथम उद्यान में जाकर पुष्प तोड़ता और फिर पास में ही स्थित यक्षायतन में जाकर यक्ष की प्रतिमा को फूल अर्पित करता और यक्ष की अर्चना करता। यक्ष को फूल अर्पण करने के पश्चात् अर्जुन माली फूल लेकर बाजार में बेचने के लिये चला जाता।

उन्हीं दिनों राजगृह नगर में छह मित्रों की एक मण्डली रहती थी। वह गोष्ठिक मण्डली के नाम से प्रसिद्ध थी। इस मण्डली को राजा की ओर से अभयदान प्राप्त था। इस कारण यह मण्डली स्वच्छन्द बन गयी थी। संयोग से अगले दिन सुबह वह मण्डली इस उद्यान में आकर आनंद-प्रमोद कर रही थी। उनकी निगाह फूल चुनते अर्जुनमाली और उसकी पत्नी बंधुमति पर पड़ी। उन्होंने योजना बनाई और यक्षायतन के दरवाजे के पीछे छिप गये। फूल चुनकर अर्जुनमाली यक्ष को फूल चढ़ाने के लिए यक्षायतन में पहुँचा। जैसे ही अर्जुनमाली ने मुद्गरपाणि यक्ष को फूल चढ़ाये और साष्टांग प्रणाम किया, गोष्ठिक पुरुषों की मण्डली उस पर टूट पड़ी। उन्होंने अर्जुनमाली को बाँधकर एक तरफ फेंक दिया और उसकी पत्नी के साथ दुराचार करने लगे। विवश अर्जुनमाली यह देखकर छटपटा उठा। उसके मन में विचार आया कि जिस यक्ष की मैं बचपन से ही भक्तिपूर्वक पूजा करता आ रहा हूँ, वास्तव में यह कोई यक्ष या देव नहीं है। यदि होता तो इस विपत्ती की घड़ी में मेरी सहायता अवश्य करता। यह तो सिर्फ मिट्टी की मूर्ति है। अर्जुन के मन में यक्ष के प्रति अविश्वास भर गया। मूर्ति में स्थित मुद्गरपाणि यक्ष ने अर्जुनमाली का विचार जानकर उसके शरीर में प्रवेश किया और उसके बंधनों को तोड़ डाला। उसके बाद उसने एक हजार पल परिमाण वाले लोह मुद्गर को लेकर बंधुमती सहित उन छह गोष्ठिक पुरुषों को मार डाला। अब वह प्रतिदिन राजगृह नगर की बाहरी सीमा के पास चारों ओर घूमकर छह पुरुषों और एक स्त्री की हत्या करने लगा। लोगों में अर्जुनमाली का आतंक छा गया। कोई भी व्यक्ति नगर की सीमा से बाहर जाने का साहस नहीं कर पाता था।

नगर के राजा श्रेणिक ने अर्जुनमाली के आतंक के कारण नगर में घोषणा करवा दी कि "हे देवानुप्रियो! अर्जुनमाली प्रतिदिन एक स्त्री और छह पुरुष को मारता है। यदि आप नगरी से बाहर निकले, तो ऐसा न हो कि तुम्हारे शरीर का विनाश हो जाये।"

उसी नगर में सुदर्शन नामक बहुत ही धनाढ्य श्रमणोपासक सेठ रहते थे। एक दिन उसे पता चला कि भगवान् महावीर विहार करते हुए राजगृह नगर के बाहर गुणशील उद्यान में पधारे हैं। यह समाचार सुनकर सुदर्शन सेठ बहुत प्रसन्न हुए। उनके मन में विचार आया कि "वाह! आज मेरे प्रभु नगर के बाहर पधारे हैं। मैं उनको वंदन-नमस्कार करने जाऊँगा।"

वे अपने माता-पिता के पास पहुँचे और प्रभु के दर्शन के लिये जाने की आज्ञा माँगी। नगर से बाहर जाने की बात सुनकर ही उसके माता-पिता भयभीत हो गये और बोले—"पुत्र! प्रभु को तुम यहीं से वंदन-नमन कर लो। वहाँ मत जाओ। अर्जुनमाली लोगों की हत्या करता हुआ नगर के बाहर घूम रहा है।" माता-पिता ने उन्हें खूब समझाया। परन्तु श्रमणोपासक सुदर्शन नहीं माने।

सुदर्शन सेठ ने कहा—"माताश्री! जब प्रभु स्वयं यहाँ पधारे हैं, धर्मसभा लगी है और मैं यहीं से उनको वन्दन नमस्कार करूँ यह कैसे हो सकता है? कृपया मुझे वहाँ जाने की आज्ञा दीजिये।" माता-पिता निरुत्तर हो गये। उन्होंने समझ लिया कि यह भगवान् का अनन्य उपासक है और शूरवीर भी है। जाये बिना नहीं रहेगा। तब उन्होंने जाने की आज्ञा दे दी।

माता-पिता से आज्ञा लेकर प्रभु महावीर के दर्शन के लिये गुणशील उद्यान की ओर चल दिये। सुदर्शन सेठ निश्चिंत होकर प्रभु स्मरण करते हुये जा रहे थे। जैसे ही वे यक्षायतन के निकट पहुँचे तो अर्जुनमालीके शरीर में प्रविष्ट यक्ष क्रोधित होकर उन्हें मारने के लिये दौड़ा। श्रमणोपासक सुदर्शन ने देखा कि मुद्गरपाणि यक्ष उसे मारने के लिए आ रहा है, तो वे बिना विचलित हुये वहीं पर रूक गये। उन्होंने सोचा—'यह मुद्गरपाणि यक्ष है। अब यह मुझे मार देगा, इसलिये मुझे अपनी अन्तिम उपासना कर लेनी चाहिये। यह सोचकर उन्होंने अपने उत्तरासन से भूमि को परिमार्जित किया और पूर्व दिशा की ओर मुख करके बैठ गये। अपना बायाँ घुटना ऊपर किया तथा दोनों हाथ जोड़े। सिर झुकाकर बोले—"नमस्कार हो अरिहंत सिद्ध भगवान् को। हे प्रभु! मेरे श्रावक के व्रतों में कोई अतिचार लगा हो, तो आलोचना करता हूँ। अठारह पापों का त्याग करते हुये संथारा ग्रहण करता हूँ। यदि मैं इस उपसर्ग से बच जाऊँ, तो संथारा पार लूँगा। यदि नहीं बच सकूँ, तो जीवन का अन्त होने तक सब त्याग है। वे ध्यान और प्रभु स्मरण में तल्लीन हो गये। मुद्गरपाणि यक्ष ने निकट आकर मुद्गर घुमाकर उन्हें मारने का प्रयत्न किया परन्तु उनका मुद्गर नहीं घूमा।

तब मुद्गरपाणि यक्ष सुदर्शन सेठ के चारों ओर घूमने लगा। वह उन पर मुद्गर का प्रहार नहीं कर पा रहा था। यक्ष ने बहुत प्रत्यन किया। परन्तु वह सुदर्शन सेठ पर प्रहार नहीं कर सका। यक्ष अर्जुनमालीके शरीर से निकल कर यक्षायतन की ओर चला गया। यक्ष के निकलते ही तेज आवाज के साथ अर्जुनमाली का शरीर धरती पर गिर पड़ा।

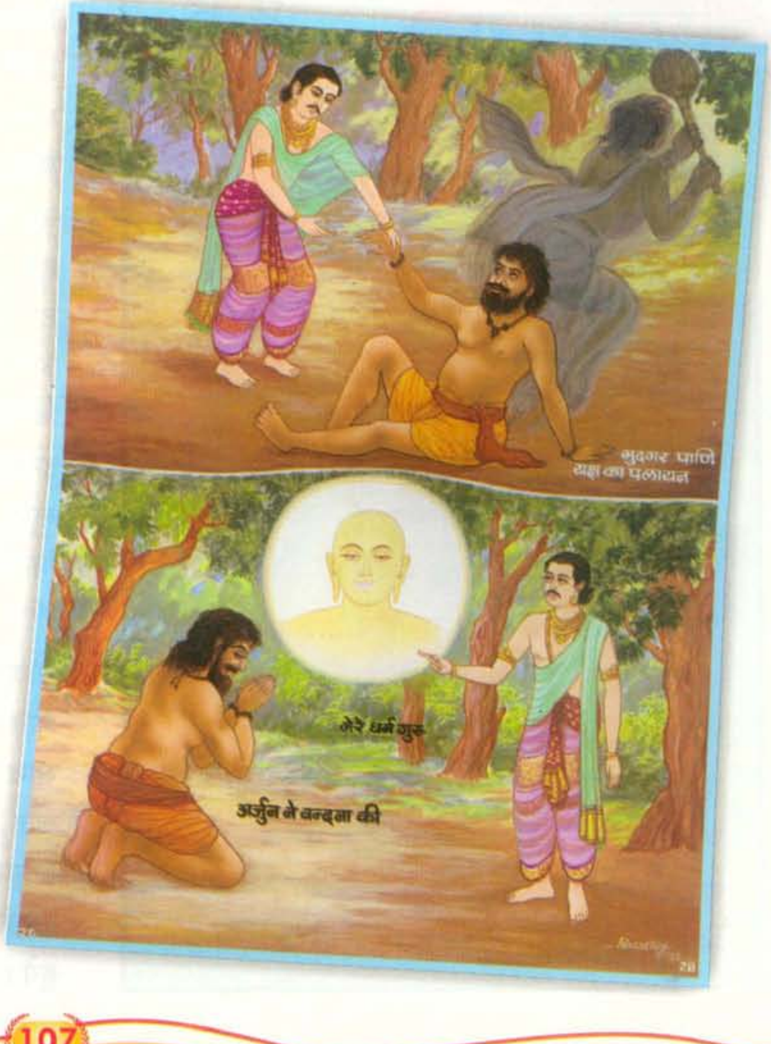


गिरने की आवाज सुनकर सुदर्शन श्रमणोपासक ने आखें खोली तो सामने अर्जुनमाली को गिरा हुआ देखा। सुदर्शन सेठ ने संथारा पारा। वे उठे और फिर अर्जुन के सिर पर हाथ फेरा। कुछ ही क्षणों में अर्जुनमाली होश में आया। सुदर्शन सेठ को सामने देख उसने आश्चर्य से पूछा—"हे देवानुप्रिय! आप कौन हैं?"

सुदर्शन सेठ ने उसे बताया—"अर्जुन ! मैं भगवान् महावीर स्वामी का उपासक हूँ। यह सब मेरे धर्मगुरु भगवान् महावीर स्वामी का ही प्रताप है। उन्हीं के नाम स्मरण का चमत्कार है कि वह यक्ष तुम्हारा शरीर छोड़कर भाग गया।"

अर्जुन ने भगवान् के बारे में सुना तो बोला—"मैं भी ऐसे महापुरुष की वन्दना करके अपने पापों का प्रायश्चित करना चाहता हूँ।" "हाँ-हाँ, मेरे साथ चलो। मैं भी उन्हीं के दर्शनार्थ जा रहा हूँ।"

सुदर्शन अर्जुन को लेकर भगवान् महावीर स्वामी के समवशरण में पहुँचा और वन्दन करके एक तरफ बैठ गया। अर्जुन ने भी भगवान् को वन्दन किया और सुदर्शन सेठ के पास बैठ गया। भगवान् ने विशाल सभा के साथ अर्जुन और

सुदर्शन सेठ को धर्मकथा सुनाई। सुदर्शन धर्मकथा सुनकर अपने घर लौट गये। किन्तु अर्जुनमाली ने भगवान् से कहा—"हे भगवन्! आप द्वारा कही हुई धर्मकथा सुनकर मुझे निर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा हुई है। मैं आपसे दीक्षा अंगीकार करना चाहता हूँ।" प्रभु की स्वीकृति पाकर अर्जुनमाली ईशानकोण में गये, पंचमुष्ठि लोच किया और प्रभु के पास आकर अणगार बन गये।

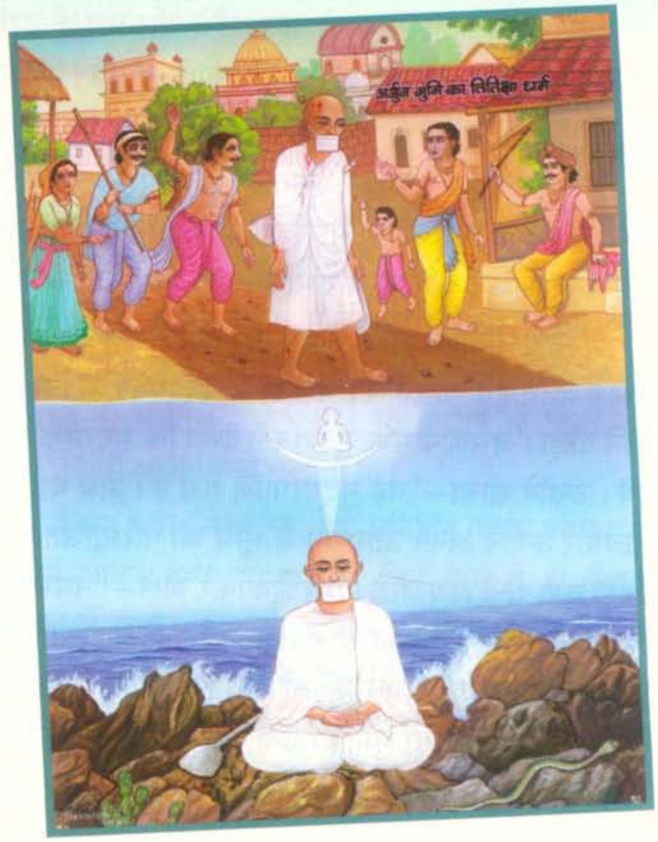

भगवान् ने उन्हें उपदेश दिया कि "हे अर्जुन! तुम अपने जीवन में सदैव इस बात का ध्यान रखना कि यदि कोई व्यक्ति भिक्षु पर क्रोध करें, गाली दे तो भिक्षु को समता भाव धारण करते हुये क्षमा को ही परम धर्म मानना चाहिये और उन अज्ञानियों के प्रति मन में कोई दुर्भाव नहीं लाना चाहिये। अर्जुन मुनि ने प्रभु महावीर के उपदेशों को हृदय में धारण कर लिया था। संयम ग्रहण करते ही अर्जुन मुनि ने एक कठोर संकल्प लिया कि आज से मैं निरन्तर छट्ठ उपवास (बेले-बेले की तपस्या) से जीवन पर्यन्त अपनी आत्मा को भावित करता हुआ विचरूँगा। दीक्षा लेते ही अर्जुन मुनि ने दो दिन का उपवास किया, फिर पारणे के दिन प्रथम प्रहर में स्वाध्याय और दूसरे प्रहर में ध्यान करके तीसरे प्रहर में राजगृह नगर में भिक्षा के लिये निकले। वे राजगृह नगर में भिक्षा के लिये घूम रहे थे। तभी किसी ने उन्हें पहचान लिया-अरे देखो, यह वही अर्जुनमाली है। इसने मेरे पिता को मारा है। इसने मेरे भाई की हत्या की है। अरे मारो इसे। अरे ! इसने तो मेरी पत्नी-बच्चों को मार दिया था। लोग अर्जुन मुनि को पत्थर फैंककर-लाठियों से थप्पड़-घुँसों से मारने लगे। शायद यह मेरे कर्मों का फल है। क्षमा ही परम धर्म है। अर्जुन मुनि शान्त भाव से सब सहते हुये बिना गोचरी लिये ही वापस आ गये। दूसरे दिन फिर बेले का उपवास प्रारम्भ हुआ। दो दिन बाद फिर पारणे का समय आया। फिर अर्जुन मुनि गोचरी के लिये राजगृह गये। लोगों ने फिर उनका अपमान किया, मारा पीटा पर वे शान्त भाव से लौट आये। उन्होंने सोचा—'मैंने इन लोगों के पारिवारिकजनों को जान से मारा है इसकी तुलना में तो यह कुछ भी नहीं कर रहे। मैंने कितने भयंकर पाप कर्मों का उपार्जन किया। शायद इनके व्यवहार से ही मेरे पाप कर्म कुछ हल्के हो जायें।'

इस तरह परीषह युक्त भिक्षाचरी करते अर्जुन मुनि समाधि भावपूर्वक विचरण करते रहे। उन्हें जो भी अल्प मात्रा में प्रासुक भोजन-पानी मिलता उसे मन में दीन-हीन भाव लाये बिना निर्मलता के साथ ग्रहण करते, आकर प्रभु से कहते—हे प्रभु! आज केवल प्रासुक जल ही प्राप्त हुआ। अर्जुन मुनि ने महान भिक्षाचरी तप से अपनी आत्मा को भावित किया और छह माह तक मुनि धर्म का पालन किया। इसके बाद पन्द्रह दिन की संलेखना करके अन्त में सिद्ध पद को प्राप्त हुये।

## सरगम

### *क्या ढूँढता है बुराई*

*(तर्ज—मुझे प्यार की जिन्दगी.......)*

क्या ढूँढता, है बुराई, किसी में,
तुझ-सी बुराई ना, मिलेगी किसी में॥ टेर॥
तूँ दूसरों में, कमी देखता है,
अपनी कमी पर, नहीं देखता है।
तुझसी कमी ना, मिलेगी किसी में..... ॥ 1 ॥
भले आदमी में, भी होती बुराई,
बुरे आदमी में, भी होती भलाई।
भलाई बुराई तो, रहती सभी में..... ॥ 2 ॥
माना किसी में, कमजोरियाँ हो,
मुमकिन है वो, उसकी मजबूरियाँ हो।
दर्द छुपा होता है, किसी की हँसी में.... ॥ 3 ॥
कहीं फूलों के हैं, गुलिस्ता जमीं पर,
काँटों के जंगल भी, हैं इस जमीं पर।
अच्छे-बुरे मिलते हैं, यहाँ जिन्दगी में.... ॥ 4 ॥

## Watch *अर्थात् निरीक्षण करना*

**घड़ी**—घड़ी समय का सदुपयोग करने के लिये होती है। घड़ी दो तरह की होती हैं। अर्वाचीन और प्राचीन। प्राचीन घड़ी काँच की होती थी। उसमें रेत डाली जाती थी। वह 48 मिनिट में धीरे-धीरे एक कूपे में से दूसरे कूपे में उतरती थी। तब एक सामायिक पूर्ण होती थी। वह घड़ी हमें यह शिक्षा प्रदान करती है कि जैसे कण-कण उतरने से कूपा खाली हो जाता है, वैसे ही आयु भी छिन-छिन करके समाप्त हो जाती है। अत: समय मात्र का प्रमाद न करके जीवन को सार्थक करो। दूसरी घड़ी अर्वाचीन्, जिसे वॉच कहते हैं। वॉच में 5 अक्षर हैं—Watch।

Watch कहती है—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| W | = | Words | - | अपने 'शब्द' बोलने से पहले निरीक्षण करो। |
| A | = | Action | - | अपना 'कार्य' करने से पहले निरीक्षण करो। |
| T | = | Thought | - | अपने 'विचारों' को सोचते समय निरीक्षण करो। |
| C | = | Character | - | अपना 'चारित्र' कैसा है? इसका निरीक्षण करो। |
| H | = | Heart | - | अपने 'दिल' की भावना कैसी है? इसका निरीक्षण करो। |

### *निरीक्षण करने से*

1. हमें हमारी गल्तियाँ तुरन्त नजर आती हैं।
2. हम भविष्य का जीवन सुन्दर बना सकते हैं।
3. गल्तियाँ सुधारने का मौका मिलता है।
4. अपने समय का सदुपयोग कर सकते हैं।
5. हम कहीं पर से भी वापस लौट सकते हैं।

**3 things you cannot recover in life.**

The WORD after its said,
the MOMENT after its missed,
and the TIME after its gone.

**समय पर उठने वाले, समय पर काम करने वाले, समय को पहचानने वाले ही पंडित हैं।** —आचारांग सूत्र

इसलिए आप अपनी दिनचर्या में नियमित बनो। दुर्लभ मनुष्यभव का प्रत्येक क्षण रत्नों से भी अधिक कीमती है। एक बार जाने के बाद दुबारा वापस लौट नहीं सकता। **यह हमेशा याद रखो।**

**संसार के सभी प्राणियों के लिए समय एक समान हैं—24 घंटे।** पर कुछ समझदार व्यक्ति समय का सुव्यवस्थित उपयोग करके सारे कार्य करने के पश्चात् भी Free नजर आते हैं परन्तु कुछ व्यक्ति ऐसे भी होते हैं, जिनकी शिकायत होती है कि "समय नहीं मिला"।

जागता रह कल न जाने,
स्वप्न तेरा हो न हो,
नीड़ से पंछी उड़ा है,
फिर बसेरा हो न हो।
हम मनुज लाचार हैं,
उड़ते समय के सामने,
रात बीती कौन जाने,
फिर सवेरा हो न हो॥

वस्तुत: समय भरपूर है। आवश्यकता है समय की कीमत समझकर समय पर कार्य करने की। प्रभु महावीर ने फरमाया है—

**'समयं गोयम! मा पमायए।'**

हे गौतम! क्षणभर का भी प्रमाद मत कर।

अत: हम भी समय की कीमत समझें और अमूल्य मनुष्य भव का लाभ लेवें।

## समय किसी का इंतजार नहीं करता

1. एक वर्ष की कीमत जानने के लिए उस छात्र से पूछिये जो परिक्षा में फेल हो गया।
2. एक महीने की कीमत जानने के लिए उस माँ से पूछिये जिसने समय से एक महिने पूर्व एक बेबी को जन्म दिया।
3. एक सप्ताह की कीमत जानने के लिए एक साप्ताहिक एडिटर से पूछिये।
4. एक दिन की कीमत जानने के लिए एक दैनिक मजदूर से पूछिये जिसे आज काम नहीं मिला है।
5. एक घण्टे की कीमत जानने के लिए इन्तजार करने वाली मां से पूछिये जिसका बेटा 12 साल बाद विदेश से आ रहा है।
6. एक मिनट की कीमत जानने के लिए उस आदमी से पूछिये जिसकी ट्रेन एक मिनट पहले छूट गई हो।
7. एक सैकेण्ड की कीमत जानने के लिए उस ओलम्पिक खिलाड़ी से पूछिये जिसने एक सैकेण्ड के कारण स्वर्णपदक खो दिया।

## W FOR ➡ WATER SAFETY जल सुरक्षा

पूरी दुनियाँ में जितना पानी है, उसका 1% पानी ही पीने योग्य है। बाकी का पानी समुद्र में या जमीन के नीचे या आकाश में भाप के रूप में है। उस 1% का सदुपयोग नहीं करेंगे, निरर्थक व्यय करेंगे, तो आने वाले समय में पीने के पानी का संकट पैदा हो जायेगा। पानी स्वयं जीवों का पिंड है, उसकी एक बूँद में 36,450 त्रसजीव माइक्रोस्कोप में देखे जाते हैं। अत: पानी की सुरक्षा के लिए निम्न बातों का अवश्य ध्यान रखें—

पानी हमारा प्राण है। आप पानी की बचत करेंगे तो आने वाली पीढ़ियों को पानी सुलभ होगा। वैसे भी पानी की एक बूँद में असंख्य जीव हैं। जीवों की दया कर पानी का दुरुपयोग न करें।

1. नल खुला न छोड़ें।
2. पानी झूठा न डालें।
3. स्नान, वस्त्र सफाई आदि में कम से कम पानी का उपयोग करें।
4. अनछाना पानी काम में न लेवें।
5. ब्रश आदि नल खोलकर नहीं, ग्लास में पानी लेकर करें।
6. बार-बार नहाने या मुँह धोने की आदत न डालें।
7. घर में जगह-जगह ज्यादा नल न लगायें।
8. कूलर, ए.सी. में पानी के जीवों की विशेष विराधना होती है, अत: कम से कम उपयोग करें।

## धोवन पानी जीवदया का अद्भुत खजाना

**पानी की रक्षा करो–पानी तुम्हारी रक्षा करेगा।**

माइक्रोस्कोप से जाँच करने पर पानी की एक बूँद में 36,450 जीव पाये जाते हैं, जो त्रस जीव हैं। लेकिन पानी अपने आप में एक जीव है। एक बूंद पानी में असंख्यात जीव होते हैं। यह तथ्य पदार्थ विज्ञान नामक ग्रन्थ में (इलाहाबाद गवर्नमेन्ट प्रेस) छपा हुआ है–केप्टन स्कोर्सबी ने दूरबीन के द्वारा एक जल बूंद में 36,450 चलते फिरते जीव देखे। इसलिए बिना छाने और जरूरत से ज्यादा पानी काम में न लेवें।

वैज्ञानिक प्रमाण के साथ।
धोवन पानी पीओ, स्वस्थ रहो॥
छोड़ो कच्चा पानी, पीओ धोवन पानी।
बनो आराधक प्राणी, यह कहे जिनवाणी॥
जीवदया है जैनों का मूल संस्कार।
अपनाएँ धोवन पानी होवे परित्त संसार॥
धोवन पानी हाथ में, आरोग्य आपके साथ में।

## सरगम

### सुख-दुःख आते हैं

सुख आते हैं, दुःख आते हैं,
इस आते-जाते सुख-दुःख में
हम मस्त रहते हैं॥टेर॥
कोई फूल खिला, कोई मुरझाता,
कोई जन्म लिया, कोई मर जाता,
इस जन्म मरण के खेल में,
हम मस्त रहते हैं॥1॥
अभिमान किया, जी भर-भर के,
अपमान हुआ, जी भर-भर के।
इस मान-अपमान के खेल में,
हम मस्त रहते हैं॥2॥
यही तो जीना भाई जीना है,
विष छोड़ के अमृत, पीना है।
हम अमृत पीते रहते हैं,
और मस्त रहते हैं॥3॥

# नंदन मणियार

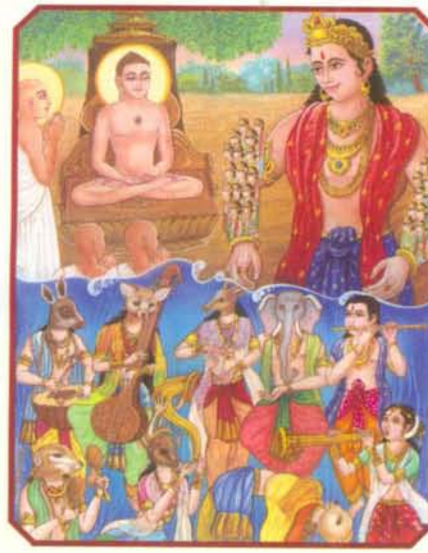

श्रमण भगवान् महावीर स्वामी राजगृही के गुणशीलक उद्यान में विराजमान थे। यह सारा वृत्तान्त प्रथम स्वर्ग के दर्दुर नामक देव ने अपने अवधिज्ञान से देखा। सोल्लास पूर्वक वह प्रभु के दर्शनार्थ आया। अपनी दिव्य ऋद्धि का प्रदर्शन करने के लिए एक दिव्य नाटक समवसरण में दिखाया। नाटक के समाप्त होने पर देव ने प्रभु को वन्दना की और अपने स्थान पर चला गया।

सभी दर्शकों के मन में कौतूहल और विस्मय जगा, तब भगवान् के प्रथम गणधर गौतम स्वामी ने पूछा—"प्रभु! यह देव कौन था?"

प्रभु ने अपने प्रिय शिष्यों के सामने सारी बात यों कही—

गौतम—यह इसी राजगृही में रहने वाला नन्दन मणियार था। नगर में वह प्रतिष्ठित तथा अच्छा ऋद्धिसम्पन्न था। मैं विहार करता हुआ एक बार राजगृही में आया। तब उसने मेरे पास श्रावक धर्म स्वीकार किया और बारह व्रतों की साधना करने लगा। मैं वहाँ से अन्यत्र विहार करके चला गया। नन्दन सत्संग के अभाव में शनैः-शनैः धर्मविमुख होने लगा। आत्मभाव को भूलकर विभाव में फँसने लगा। सम्यक्त्व से दूर होकर मिथ्यात्व दशा के निकट पहुँच गया। संयोग की बात थी, एक बार उसने ग्रीष्म ऋतु में तीन दिन के उपवास सहित पौषध किया। गर्मी की अधिकता से रात को उसे तीव्र प्यास लगी। प्यास के कारण नींद भी उचट गई। करवटें बदलता रहा। नींद और प्यास से बेहाल बना 'नन्दन मणियार' सोचने लगा—'धन्य है उन्हें, जो राजगृही में कुएँ, बावड़ी, तालाब आदि जलाशय बनवाते हैं, जिसके जल का उपयोग अनेक व्यक्ति करते हैं। कोई स्नान करता है, तो कोई जल पीता है। यों अनेकानेक व्यक्तियों को जीवन (जल) देकर लोगों के जीवनदाता बनते हैं। मैं भी पौषध पूर्ण करके यहाँ राजा श्रेणिक की आज्ञा लेकर एक सुन्दर बावड़ी बनवाऊँगा, जिसमें सब तरह की सुख-सुविधा लोगों को उपलब्ध हो सके, ऐसी व्यवस्था वहाँ करूँगा।

दूसरे दिन पौषध पार करके वह अपनी दैनिक चर्या से निवृत्त हुआ। सुन्दर वस्त्रों और आभूषणों से सुसज्जित होकर नन्दन मणियार महाराज श्रेणिक के दरबार में उपस्थित हुआ। अच्छा-सा उपहार राजा के सामने रखकर अपनी मनोभावना व्यक्त की और बावड़ी बनवाने के लिए आज्ञा माँगी। राजा का आदेश प्राप्त करके नगर के बाहर एक बहुत सुन्दर बावड़ी बनवा दी, जिसे देखकर सभी लोग नन्दन को साधुवाद देने लगे। बावड़ी के चारों कोनों में भोजनशाला, चित्रशाला, चिकित्सालय तथा अलंकारशाला की भी साथ-साथ व्यवस्था की, जिससे सारी सुविधाएँ और सभी आमोद-प्रमोद के साधन एक ही स्थान पर उपलब्ध हो गए। जन-जन के मुख से अपनी प्रशंसा सुनकर नन्दन का मन बाँसों उछलने लग जाता।

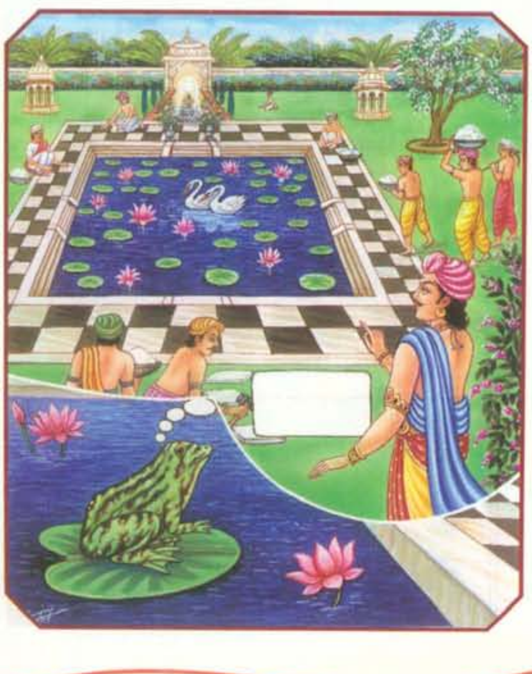

भाग्य दशा ने करवट ली। नन्दन के शरीर में सोलह महारोग उत्पन्न हो गये। अनेक उपचार कराये गये, पर सारे बेकार सिद्ध हुए। अन्त में उन रोगों से बुरी तरह पीड़ित होकर मृत्यु को प्राप्त हुआ। मरकर वह नन्दन उसी नन्दा पुष्करिणी में आसक्त बना हुआ मेंढक के रूप में पैदा हुआ। जब वह मेंढक कुछ बड़ा हुआ तब वहाँ स्नान करते-पानी पीते लोगों के मुँह से 'नन्दन मणियार' के गुणगान करते हुए सुनकर मन में कुछ विचार आया। पूर्व परिचित-से शब्द लगे। चिन्तन करते-करते मेंढक को जाति-स्मरणज्ञान हुआ और उसने अपने पूर्वजन्म को

देखा। भगवान् महावीर के द्वारा प्रदत्त बोध तथा उनसे स्वीकृत व्रत याद आये। सम्यक्त्व छोड़कर मिथ्यात्व में फँस जाने पर अनुताप करने लगा। उसी समय मेंढक ने अभिग्रह कर लिया कि मैं दो-दिन के व्रत (बेला) करूँगा तथा पारणे के दिन भी बावड़ी का, लोगों के स्नान आदि के द्वारा अचित बना हुआ जल ही ग्रहण करूँगा। यों कठिनतम अभिग्रह करके जीवनयापन करने लगा।

प्रभु ने आगे फरमाया—मैं एक बार इसी राजगृही में आया। लोगों के मुख से मेरे आने का संवाद सुनकर वह मेंढक मेरे दर्शनार्थ वहाँ से चल पड़ा। उधर से राजा श्रेणिक अपनी विशाल सेना के साथ दर्शनार्थ आ रहे थे। महाराज के घोड़े के पैर से वह मेंढक दब गया। मरणासन्न मेंढक ने एक ओर जाकर अरिहन्त, सिद्ध, धर्माचार्य का स्मरण करते हुए अनशन स्वीकार कर लिया। अनशनपूर्वक समाधिमरण प्राप्त कर वह मेंढक प्रथम स्वर्ग में दर्दुर नामक देव हुआ। यह वही देव है, जो वहाँ से दर्शनार्थ यहाँ आया तथा अपनी ऋद्धि दिखाकर अपने स्थान की ओर चला गया। यह दर्दुर नामक देव वहाँ से महाविदेह में मनुष्य रूप में उत्पन्न होकर मोक्ष प्राप्त करेगा।

## साधना की गहराई

### अवसर्पिणी काल के दस आश्चर्य

1. **गर्भहरण**—भगवान् महावीर का गर्भहरण हुआ।
2. **अभाविता परिषदा**—भगवान् महावीर की प्रथम देशना खाली गई। यह परिषदा अभावित रही क्योंकि व्रत प्रत्याख्यान नहीं हुए।
3. **उपसर्ग**—तीर्थंकर बनने के पश्चात् भगवान् महावीर को गौशालक द्वारा उपसर्ग देने से शरीर में असाता का उदय हुआ।
4. **चन्द्र-सूर्य का उतरना**—भगवान् महावीर के समवशरण में चन्द्र-सूर्य विमान सहित मूल रूप में आये।
5. **चमरेन्द्र का देवलोक गमन**—भगवान् महावीर की शरण लेकर चमरेन्द्र देव पहले देवलोक में गया।
6. **उत्कृष्ट अवगाहना से 108 सिद्ध**—भगवान् ऋषभदेव के साथ उत्कृष्ट अवगाहना (500 धनुष) वाले 108 जीव एक ही समय में सिद्ध हुए।
7. **असंयति पूजा**—भगवान् सुविधिनाथ से भगवान शांतिनाथ तक असंयति पूजा होती रही और तीर्थ का विच्छेद भी हुआ।
8. **स्त्री तीर्थंकर**—भगवान् मल्लीनाथ स्त्री पर्याय में तीर्थंकर हुए।
9. **वासुदेव का मिलन**—कृष्ण वासुदेव का धातकी खंड के कपिल वासुदेव से शंख द्वारा मिलन हुआ।
10. **युगलिक का नरक में जाना**—युगलिक नरक में नहीं जाते, परन्तु हरिवंश का एक युगलिया नरक में गया।

## X FOR ➡ X-RAY एक्स-रे

### X-RAY अर्थात् X-किरण

यह एक ऐसी किरण है, जो हमारे शरीर को भेदती हुई हमारी हड्डियों का संशोधन करती है। हड्डियों से सम्बन्धित कमियाँ दर्शाती है, जैसे—Crack, Fracture आदि। वैसे ही प्रभु की किरणों के द्वारा हम अपनी आत्मा का संशोधन कर सकते हैं।

X-RAY की तरह हम ध्यान के द्वारा अपनी आत्मा का निरीक्षण कर सकते हैं। 24 घंटे में एक बार हमें एकान्त में बैठकर चिंतन करना चाहिए कि आज दिन भर में मेरे मन में कितनी बार बुरे भाव आये? मैंने वचन से कठोर शब्दों का प्रयोग कहाँ-कहाँ किया? मैंने काया के द्वारा कोई गलत आचरण तो नहीं किया? क्योंकि मन से कोई बात छिपी नहीं होती और कर्मों का बंधन मन-वचन-काया तीनों के द्वारा होता है। अतः हमें प्रतिपल सजग रहते हुए आत्मा का निरीक्षण करना चाहिए।

## Y FOR ➡ YATANA यतना

**यतना जैनधर्म का प्राण है। यतना जैनों का श्वॉस है।**

दशवैकालिक सूत्र के चौथे अध्ययन में भगवान ने यतना के लिए अत्यंत प्रेरक गाथा बताई है—

**जयं चरे, जयं चिट्ठे, जयमासे जयं सए।**
**जयं भुजंतो भासंतो, पाव कम्मं न बन्धइ।**

*अर्थात् यतना से चलना, बैठना, खड़े रहना, सोना, खाना, बोलना। इससे पापकर्म का बंध नहीं होता है।*

जगत् के सभी जीव हमारे मित्र बन जायेंगे.....

अयतना से जीव विराधना एवं आत्मविराधना होती है, जिन शासन की हीलना होती है एवं पापकर्मों का बंध होता है, जिसका दु:खद परिणाम जीव को भोगना पड़ता है।

यतना पूर्वक जीने से—**(1) जीवों की हिंसा नहीं होगी।** (2) बीमारियाँ नहीं आयेंगी। (3) शांति और प्रसन्नता मिलेगी। (4) आर्थिक नुकसान नहीं होगा। (5) भगवान की आज्ञा का पालन होगा। (6) शिष्टता और सभ्यता दिखेगी।

बैठो! तो वज्रमुनि जैसे / सोओ! तो अरणकमुनि जैसे / खाओ! तो धन्नामुनि जैसे

चलो! तो बाहुबली जैसे / खड़े रहो! तो गजसुकुमाल जैसे / बोलो! तो एवंताकुमार जैसे

## चलते समय–

**(1) नीचे देखकर चलें।**

(2) मोबाइल पर बात करते-करते गाड़ी न चलाएँ।

(3) चींटी, मकोड़े, फूल-पत्ते बिखरे हो, तो उन पर पैर रखकर नहीं चलना।

(4) चलते समय ज्यादा बातचीत न करें।

सड़क पर हमेशा नीचे देखकर चलो।

## बैठते समय–

(1) जीव-जंतु हो तो उन्हें बचाकर बैठना।

(2) बगीचे आदि में हरी घास पर नहीं बैठना।

**(3) किसी के घर जाने पर वहाँ पड़े Hand watch, Remote, Mobile, आभूषण आदि के पास नहीं बैठना।**

(4) "शकेन्द्र महाराज की आज्ञा" ऐसा बोलकर बैठना

## खड़े रहते समय–

(1) कोई दो व्यक्ति बात कर रहे हों, तो उनके पास जाकर खड़े नहीं होना।

(2) मम्मी-पापा के साथ बाजार गये तो दुकान में किसी भी चीज को हाथ लगाए बिना शांति के साथ खड़े रहना।

(3) नीचे चींटी-मकोड़े, लीलन-फूलन, बीज आदि हो, तो वहाँ पर खड़े नहीं रहना।

## सोते समय–

(1) नवकार, लोगस्स एवं खामेमि सव्वे जीवा का पाठ बोलकर शांति के साथ सोना।

(2) टी.वी. देखते-देखते नहीं सोना।

(3) मोबाइल में गेम खेलते-खेलते नहीं सोना।

(4) हँसते-हँसते प्रसन्नता के साथ सोना। किसी से लड़ाई भी हो गई हो, तो उससे क्षमा याचना करके सोना।

## खाते समय–

(1) घर पर बनी चीजों का उपयोग करें।

(2) बाजार की चीजों पर ग्रीन मार्क देखकर खरीदें।

(3) नॉन-वेज या इसका पाउडर आदि जिसमें पड़ते हों, ऐसी चीजें नहीं खाना।

(4) जिस होटल में वेज और नॉन-वेज दोनों साथ हो, वहाँ नहीं खाना। नॉन-वेज धोया हुआ पानी पीजा आदि में डाला जाता है जिससे वो ज्यादा स्वादिष्ट बनता है। इसलिए बाजार के पीजा आदि नहीं खाना।

## बोलते समय–

(1) किसी के दिल को चुभे, ऐसा नहीं बोलना।

(2) अनंतकाल बाद हमें बोलने की शक्ति मिली। यदि यहाँ इसका गलत उपयोग करेंगे तो आगे कई जन्मों तक हमें बोलने की शक्ति नहीं मिलेगी। यानि जीभ ही नहीं मिलेगी।

(3) कभी अपने मुँह से किसी को गाली नहीं देनी चाहिए।

(4) अंधे को अंधा नहीं, काणे को काणा नहीं, लंगड़े को लंगड़ा नहीं कहना। इससे उस आत्मा को दु:ख होता है।

**FILTER YOUR WORDS**

**आपके शब्दों को छानकर बोलिये**

*"जीभ सम्भली तो जीवन सम्भला, जीभ बिगड़ी तो जीवन बिगड़ा।"* यह याद रखना।

# तीर्थंकर भगवंतों का विवरण

| क्रम | तीर्थंकर नाम | नगर | पिता | माता | गणधर | समय | शासनकाल |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1. | श्री ऋषभदेवजी | इक्ष्वाकु भूमि | नाभि कुलकर | मरुदेवी | 84 | श्री भरतजी चक्रवर्ती | |
| 2. | श्री अजितनाथजी | अयोध्या | जितशत्रु राजा | विजया रानी | 90 | श्री सगरजी चक्रवर्ती | |
| 3. | श्री संभवनाथजी | श्रावस्ती | जितारी राजा | सेना रानी | 102 | – | |
| 4. | श्री अभिनंदनजी | अयोध्या | संवर राजा | सिद्धार्था रानी | 116 | – | |
| 5. | श्री सुमतिनाथजी | अयोध्या | मेघ राजा | मंगला रानी | 100 | – | |
| 6. | श्री पद्मप्रभजी | कौशाम्बी | धर राजा | सुसीमा रानी | 107 | – | |
| 7. | श्री सुपार्श्वनाथजी | वाराणसी | प्रतिष्ठ राजा | पृथ्वी रानी | 95 | – | |
| 8. | श्री चन्द्रप्रभजी | चन्द्रपुरी | महासेन राजा | लक्ष्मणा रानी | 93 | – | |
| 9. | श्री सुविधिनाथजी | काकन्दी | सुग्रीव राजा | रामा रानी | 86 | – | |
| 10. | श्री शीतलनाथजी | भद्दिलपुर | दृढ़रथ राजा | नन्दा रानी | 81 | – | |
| 11. | श्री श्रेयांसनाथजी | सिंहपुर | विष्णु राजा | विष्णु रानी | 66 | श्री त्रिपृष्ठजी वासुदेव | |
| 12. | श्री वासुपूज्यजी | चम्पा | वसु राजा | जया रानी | 62 | श्री द्विपृष्ठजी वासुदेव | |
| 13. | श्री विमलनाथजी | कंपिलपुर | कृतवर्मा राजा | श्यामा रानी | 56 | श्री स्वयंभूजी वासुदेव | |
| 14. | श्री अनंतनाथजी | अयोध्या | सिंहसेन राजा | सुयशा रानी | 50 | श्री पुरुषोत्तमजी वासुदेव | |
| 15. | श्री धर्मनाथजी | रत्नपुर | भानु राजा | सुव्रता रानी | 43 | श्री पुरूसिंहजी वासुदेव | श्री मघवाजी चक्रवर्ती<br>श्री सनत्कुमारजी चक्रवर्ती |
| 16. | श्री शांतिनाथजी | गजपुर | विश्वसेन राजा | अचिरा रानी | 90 | श्री शांतिनाथजी चक्रवर्ती | |
| 17. | श्री कुंथुनाथजी | गजपुर | शूर राजा | श्री रानी | 35 | श्री कुन्थुनाथजी चक्रवर्ती | |
| 18. | श्री अरनाथजी | गजपुर | सुदर्शन राजा | देवी रानी | 33 | श्री अरनाथजी चक्रवर्ती | श्री पुरूषपुंडरिकजी वासुदेव<br>श्री सुभूमजी चक्रवर्ती<br>श्री श्री दत्त जी वासुदेव |
| 19. | श्री मल्लिनाथजी | मिथिला | कुंभ राजा | प्रभावती रानी | 28 | – | |
| 20. | श्री मुनिसुव्रतजी | राजगृही | सुमित्र राजा | पद्मावती रानी | 18 | श्री महापद्मजी चक्रवर्ती | श्री लक्ष्मणजी वासुदेव |
| 21. | श्री नमिनाथजी | मिथिला | विजयसेन राजा | वप्रा रानी | 17 | श्री हरिषेणजी चक्रवर्ती | श्री जयसेनजी चक्रवर्ती |
| 22. | श्री अरिष्टनेमिजी | सोरियपुर | समुद्रविजय राजा | शिवा रानी | 18 | श्री कृष्णजी वासुदेव | श्री ब्रह्मदत्तजी चक्रवर्ती |
| 23. | श्री पार्श्वनाथजी | वाराणसी | अश्वसेन राजा | वामा रानी | 8 | | |
| 24. | श्री महावीर स्वामी | कुंडलपुर | सिद्धार्थ राजा | त्रिशला रानी | 11 | | |

# युवा योगी जम्बू कुमार

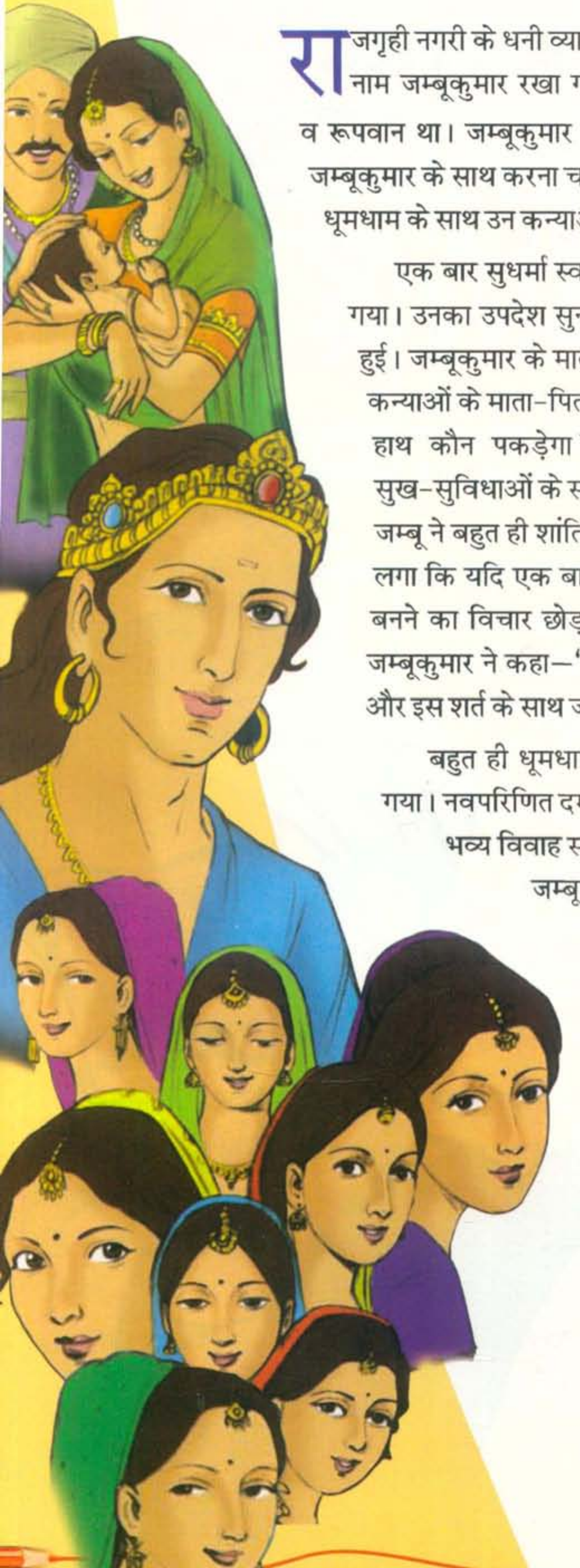

राजगृही नगरी के धनी व्यापारी सेठ ऋषभदत्त की पत्नी धारिणी ने एक सुन्दर पुत्र को जन्म दिया, जिसका नाम जम्बूकुमार रखा गया। समय के साथ-साथ जम्बूकुमार बड़ा होने लगा। वह अत्यंत गुणवान व रूपवान था। जम्बूकुमार जब युवा हुआ, तो नगर के बहुत-से माता-पिता अपनी पुत्रियों का विवाह जम्बूकुमार के साथ करना चाहते थे। जम्बूकुमार के माता-पिता ने उसके लिए आठ कन्याएँ पसन्द कीं और धूमधाम के साथ उन कन्याओं के साथ जम्बूकुमार की सगाई कर दी।

एक बार सुधर्मा स्वामी राजगृही में देशना देने के लिए पधारे। जम्बूकुमार भी उनकी देशना सुनने गया। उनका उपदेश सुनकर जम्बूकुमार को सांसारिक जीवन और परिवार का त्याग करने की इच्छा हुई। जम्बूकुमार के माता-पिता अपने युवा बेटे की संसार त्याग की भावना से सहमत नहीं हुए। आठ कन्याओं के माता-पिता भी जम्बूकुमार की बात सुनकर चिंता में पड़ गये कि अब हमारी कन्याओं का हाथ कौन पकड़ेगा? सभी ने जम्बूकुमार को साधु नहीं बनने के लिए बहुत समझाया। सुख-सुविधाओं के साथ जीने की सलाह दी, माता-पिता और पत्नियों के प्रति फर्ज की याद दिलाई। जम्बू ने बहुत ही शांति से सभी की बातें सुनीं लेकिन वे अपने निर्णय पर अडिग रहे। माता-पिता को लगा कि यदि एक बार जम्बूकुमार की शादी करा देंगे, तो वह मौज-मजे में पड़ जाएगा और साधु बनने का विचार छोड़ देगा। ऐसा सोचकर उन्होंने जम्बूकुमार को शादी करने का आदेश दिया। जम्बूकुमार ने कहा—"मैं शादी करूँगा लेकिन उसके दूसरे ही दिन इस संसार का त्याग कर दूँगा।" और इस शर्त के साथ जम्बूकुमार ने शादी करने के लिए 'हाँ' कर दी।

बहुत ही धूमधाम से शादी हुई। शहर के जाने-माने और मशहूर मेहमानों को निमंत्रण दिया गया। नवपरिणित दम्पत्ति को बहुत ही कीमती भेंट सौगातें दी गईं। राजगृही नगरी ने कभी भी इतना भव्य विवाह समारोह नहीं देखा था। इतनी सुन्दर कन्याओं के साथ शादी करने के लिए सभी जम्बूकुमार को बधाईयाँ दे रहे थे। लेकिन जम्बूकुमार पर इस वैभव का कुछ असर नहीं पड़ा। दूसरे दिन संसार छोड़कर साधु बनने के अपने निर्णय पर अटल थे। उन्हें अपनी पत्नियों को साधु जीवन जीने के लिए तैयार करना था।

शादी की रात को वे अपनी पत्नियों से धर्म से सम्बन्धित बातें कर रहे थे तभी प्रभव नामक महाचोर ने चोरी के इरादे से अपने 500 साथियों के साथ जम्बूकुमार के महल में प्रवेश किया। वह राजगृही के पास के विंध्य राज्य का राजकुमार था। पिता के साथ मतभेद होने के कारण उसने राज्य छोड़ दिया और चोर बन गया। वह बलवान और कुशल चोर था। किसी को भी बेहोश करके किसी भी तरह का ताला तोड़ सकता था। जम्बूकुमार के महल में आकर उसे शादी में मिली हुई अपार सम्पत्ति की चोरी करनी थी। जब वह महल में पहुँचा, तब उसने जम्बू को अपनी पत्नियों के साथ त्याग की चर्चा करते हुए सुना। वह भी दरवाजे के नजदीक आकर जम्बूकुमार की बात सुनने लगा। जम्बूकुमार के शब्द इतने प्रभावशाली थे कि वह वहाँ से हिल भी न सका और वहीं खड़ा रह गया। प्रभव को लगा कि 'मैं सम्पत्ति की

चोरी करने के लिए कठिन मेहनत कर रहा हूँ, जबकि ये तो मिली हुई सम्पत्ति का त्याग करने की बातें कर रहे हैं।'

इतने में प्रभव के साथी महल में से धन की चोरी करके प्रभव के पास आए, लेकिन जम्बूकुमार की बातें सुनकर प्रभव की लालसा छूट गई। वह चोरी का जीवन छोड़ने के लिए तैयार हो गया। उसने मित्रों को अपने विचार बताए और मित्रों को जो ठीक लगे वैसा करने की छूट दी, उसके मित्र उसे छोड़कर जाने के लिए तैयार नहीं हुए। इस तरह जम्बूकुमार ने अपनी पत्नियों के साथ धार्मिक चर्चा पूरी की। पत्नियाँ भी संसार छोड़कर साध्वी बनने के लिए तैयार हो गईं। उसी समय प्रभव ने कमरे में आकर अपनी हकीकत बताते हुए कहा कि उसे साधु जीवन अपनाना है। इस तरह प्रभव और उसके 500 मित्र भी जम्बूकुमार के साथ दीक्षा के लिए तैयार हो गए।

## सरगम

### दुनिया में देव अनेकों...

दुनिया का सहारा क्या लेना, तेरा एक सहारा काफी है।
कुछ कहने की क्या जरूरत है, तेरा एक इशारा काफी है॥ 1॥
धन दौलत का क्या करना है, इन महलों में क्या रहना है।
जिन्दगानी चार दिनों की है, चरणों में गुजारा काफी है॥ 2॥
यह दुनिया रंग-रंगीली है, हर चीज यहाँ अलबेली है।
देखूँ तो क्या देखूँ भगवन्, तेरा एक नजारा काफी है॥ 3॥

राजगृही के लोग जब सुबह जागे तब उन्हें चौंकाने वाले समाचार मिले कि जम्बू और उसकी आठ पत्नियाँ, प्रसिद्ध चोर प्रभव और उसके 500 साथी उसी दिन संसार छोड़कर साधु बनने वाले हैं। जम्बूकुमार के माता-पिता को अपना इरादा पूरा नहीं होने पर बहुत ही निराशा हुई। अंत में वे और आठ पत्नियों के माता-पिता जम्बूकुमार के संदेश का महत्त्व समझे और जम्बूकुमार के साथ दीक्षित होने का संकल्प कर लिया। इस प्रकार 527 आत्माओं ने एक साथ सुधर्मा स्वामी के पास संयम अंगीकार किया।

जम्बूस्वामी ने बाद में भ. महावीर के सभी उपदेशों का अध्ययन किया। उन्होंने जैनधर्म के शास्त्रों की रचना की, जिनका अधिकांश भाग सुधर्मा स्वामी और जम्बू स्वामी के बीच के संवाद हैं। सुधर्मा स्वामी का निर्वाण हुआ तब जम्बूस्वामी को केवलज्ञान प्राप्त हुआ। वे वर्तमान पंचम आरे के अंतिम केवली थे। 80 साल की उम्र में उनका निर्वाण हुआ।

**विशेष ज्ञातव्य : कथानकों में कहीं कहीं पर चोरों के पैर चिपकने की भी बात आती है। तत्त्व केवली गम्य हैं।**

*जिन्दगी तब बेहतर होती है जब हम खुश होते हैं।*
*लेकिन बेहतरीन तब होती है जब लोग हमसे खुश होते हैं।*

**यह जिन्दगी Ice Cream के समान है, इसे Taste करें तो भी पिघलती है, Waste करें तो भी पिघलती है।**

भक्त से भगवान बनने के लिए, नर से नारायण बनने के लिए, आत्मा से परमात्मा बनने के लिए इस मनुष्य की जिन्दगी से श्रेष्ठ अवसर दूसरा नहीं हो सकता। क्योंकि यह जिन्दगी कई भवों के बाद हमें प्राप्त हुई है। एक सर्वे के अनुसार–

1) 1 अरब जीव एक साथ संसार में उत्पन्न हों, तो उसमें से 99 करोड़ जीव तिर्यंच गति यानि पृथ्वी, पानी, हवा, अग्नि, वनस्पति, खटमल, जूँ, मक्खी, गाय, कुत्ता आदि योनियों में जन्म लेते हैं।
2) शेष 1 करोड़ जीवों में से 99 लाख जीव नरक गति में जन्म लेते हैं।
3) शेष 1 लाख जीवों में से 99 हजार जीव देवगति में जन्म लेते हैं।
4) शेष 1 हजार जीवों में से 900 जीव असन्नी मनुष्य के रूप में जन्म लेते हैं।
5) शेष 100 जीवों में से 90 जीव अकर्मभूमि (युगलिक मनुष्य) में जन्म लेते हैं।
6) शेष 10 जीवों में से 9 जीव अनार्य क्षेत्र के मनुष्यों के रूप में जन्म लेते हैं।
7) मात्र 1 जीव आर्यक्षेत्र के उत्तम कुल में सन्नी मनुष्य के रूप में जन्म लेता है।
8) मनुष्य भव की महत्ता जाननी हो, तो देवता से पूछो जो मनुष्य बनने की मिन्नत माँग रहा है।

*इस अमूल्य जिन्दगी को इन्सान व्यर्थ में गवाँ रहा है। ऐसे कार्य कर रहा है कि पशु भी शर्मा जाए!*

## 6 बातें आपकी जिंदगी में खुशियाँ बरसायेंगी

1. **मैं मानता हूँ गलती मेरी है**—अपनी गलती स्वीकार करें।
2. **आपने बहुत अच्छा काम किया**—काम करने वालों का उत्साह बढ़ाएँ।
3. **आपकी क्या राय है**—चार व्यक्तियों की राय लेकर काम करें।
4. **हम है ना!**—जिंदगी से हताश, निराश व्यक्ति को संबल दें।
5. **हमने किया**—अच्छे कार्य का श्रेय केवल अपने पर न लें।
6. **मुस्कुराना**—कोई भी व्यक्ति सामने आये, आप उसका मुस्कुराहट से स्वागत करें।

## प्रेरक प्रसंग

सिंह ने कुछ पशुओं से पूछा—"तुम शहर से एक घण्टे में ही कैसे लौट आए?" "मनुष्य की चेष्टाएँ देख हम शरमाकर आ गए।" "ऐसा क्या देखा?" सिंह के पूछने पर गिरगिट ने कहा—"मुझसे भी तीव्र गति से मनुष्य को रंग बदलते देखा।" (मानव मायावी है।)

भैंस ने कहा—"मैं तालाब के कीचड़ में बैठती हूँ, मानव को वासना के कीचड़ में लोट लगाते हुए देखा।" (मानव कामी है।) सर्प ने कहा—"मैं तो सीधा किसी को डंसता हूँ, मगर मनुष्य को पीछे से फूंक मारकर दंश लगाते देखा।" (मानव विश्वासघाती है।) गाय ने कहा—"मैं तो घास खाकर दूध देती हूँ, उसे माँस खाते देखा।" बंदर ने कहा—"मैं तो पानी पीता हूँ, मानव को शराब पीते देखा।"

# गजसुकुमाल मुनि

**द्वा**रिका नगरी के राजा श्रीकृष्ण वासुदेव थे। उनकी **माता का नाम देवकी** और **पिता का नाम वसुदेव** था। उनके सबसे छोटे और लाड़ले भाई का नाम था **गजसुकुमाल। उनका शरीर हाथी के (तलुए) तालु जैसा सुकोमल** था, इसलिए उनका नाम **गजसुकुमाल** रखा गया। माता के लालन-पालन में रहकर गजसुकुमाल ने धीरे-धीरे यौवन अवस्था को प्राप्त किया।

एक बार, भगवान नेमिनाथ (बावीसवें तीर्थंकर अरिष्टनेमि) विचरण करते-करते द्वारिका नगरी के बाहर उद्यान में पधारे। श्रीकृष्ण वासुदेव उनके दर्शन करने नगर से बाहर निकल रहे थे, तब उन्होंने द्वारिका नगरी के मार्ग पर एक सुन्दर कन्या '**सोमा**' को देखा।

**सोमा** का रूप और लावण्य इतना सुन्दर था कि **श्रीकृष्ण** को वह गजसुकुमाल के साथ विवाह करने योग्य लगी। इसलिए श्रीकृष्ण ने सोमा के पिता सोमिल ब्राह्मण की आज्ञा लेकर सोमा को रानियों के महल में अंगरक्षकों के साथ भेज दिया और स्वयं भगवान अरिष्टनेमि के प्रवचन सुनने चले गये। श्रीकृष्ण महाराजा के साथ उनकी रानियाँ, गजसुकुमाल और दूसरे अनेक नगरजन नेमिनाथ भगवान के दर्शन करने और उनकी वाणी सुनने के लिए आये थे। भगवान् ने धर्म देशना दी।

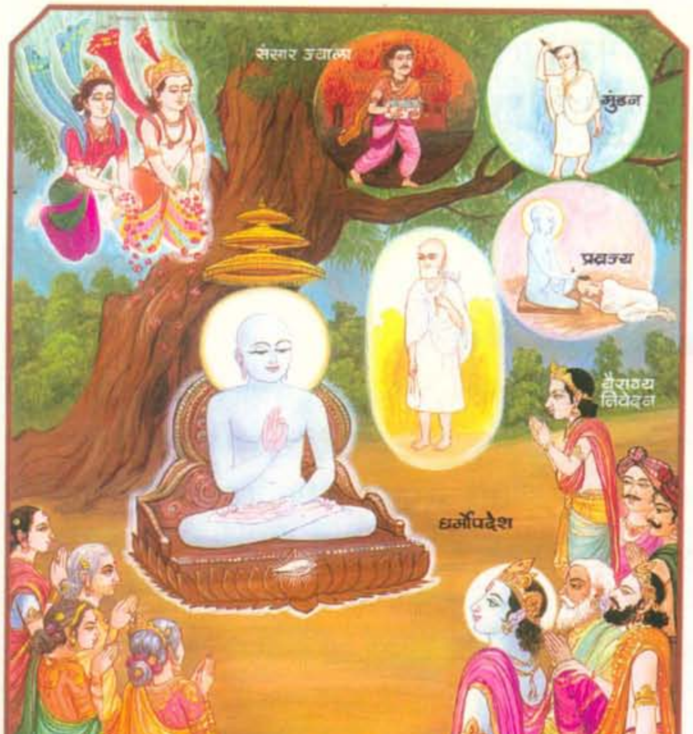


भगवान का उपदेश सुनकर गजसुकुमाल को वैराग्य उत्पन्न हो गया और उन्होंने भगवान से कहा-"मैं मेरे माता-पिता की आज्ञा लेकर दीक्षा ग्रहण करना चाहता हूँ।" भगवान ने फरमाया-"अहासुहं देवाणुपिया-मा पडिबंध करेह"। गजसुकुमाल ने वापस महल में आकर अपने माता-पिता से दीक्षा की आज्ञा माँगी। तब उनके माता-पिता तथा ज्येष्ठ भ्राता श्रीकृष्ण ने उन्हें बहुत तरीकों से संसार में रहने के लिए समझाया, परन्तु उनका वैराग्य भाव पक्का था। उनको इस दु:खमय संसार में अब रूकना नहीं था। बड़े लोगों के अत्यन्त आग्रह के कारण दूसरे दिन सुबह उनका राज्याभिषेक किया गया। उनके राजा बनने पर उन्हें पूछा गया कि "राजन्! आप क्या चाहते हो?" तब उन्होंने उत्तर दिया-"मुझे दीक्षा लेनी है।" यह कहते हुए गजसुकुमाल ने राजसी वेशभूषा उतार दी। फिर माता-पिता की अनुमति लेकर उसी दिन दोपहर में सिर का मुंडन करके **भगवान नेमिनाथ के पास दीक्षा अंगीकार कर ली**। उसी दिन शाम को, उन्होंने भगवान को सविनय वंदन नमस्कार करके कहा-"भगवन्! आपकी आज्ञा हो, तो मेरी इच्छा है कि महाकाल श्मशान में जाकर मैं एक रात्रि की भिक्षु प्रतिमा स्वीकार करूँ अर्थात् **संपूर्ण रात्रि ध्यान करके खड़ा रहूँ**।" भगवान ने उनको प्रेमपूर्वक कहा-"आत्मध्यान में

लीन रहने के लिए मैं आपको आज्ञा देता हूँ, लेकिन वहाँ आपको कितना भी दु:ख, कष्ट आए, फिर भी आप पर्वत की तरह अडिग और स्थिर खड़े रहना।"

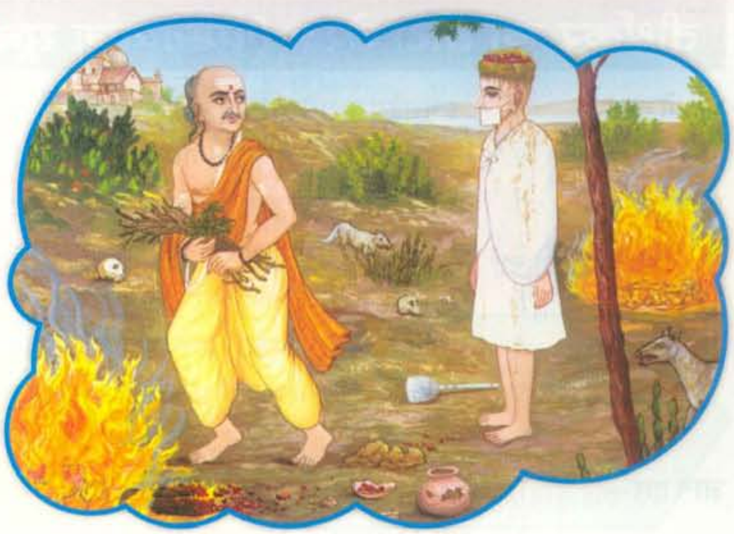

भगवान की आज्ञा लेकर गजसुकुमाल महाकाल श्मशान में आये। वहाँ निर्दोष भूमि देखकर वे एक पुद्‌गल पर दृष्टि स्थिर करके एक रात्रि की भिक्षु प्रतिमा स्वीकार करके ध्यान में स्थिर हो गये। उस दिन सोमिल ब्राह्मण हवन के लिए लकड़ी, घास आदि सामान लेने द्वारिका नगरी के बाहर गया था। वह अपना जरूरी सामान लेकर शाम को घर वापस लौट रहा था। तब उसने महाकाल श्मशान में काउसग्ग करके ध्यान में खड़े गजसुकुमाल मुनि को देखा। उन्हें देखते ही उसके हृदय में पूर्वभव का वैर जागृत हुआ, वह खुद से ही बोला—"अरे! यह तो वही निर्लज्ज है, मृत्यु की इच्छा करने वाला पुण्यहीन और कुलक्षणी गजसुकुमाल है। मेरी निर्दोष बेटी सोमा, जो जवान है, उसे बिना कारण ही छोड़कर यह साधु बन गया है।"

सोमिल ब्राह्मण ने सोचा कि **"मैं वैर का बदला लूँ।"** फिर सोमिल ने चारों दिशा में देखा कि कोई आता-जाता तो नजर नहीं आ रहा है? (क्योंकि पाप के कार्य प्राय: एकांत में या अंधेरे में ही किये जाते हैं) अंधेरा हो जाने से लोगों का आवागमन नहीं था। तब नजदीक के तालाब में से उसने गीली मिट्टी ली और गजसुकुमाल के सिर पर पाल बाँध दी। फिर श्मशान में जल रही चिता में से जलती हुई लकड़ी के अंगारे लेकर उन्हें एक टूटे हुए बर्तन में भरे और वे जलते हुए अंगारे उसने गजसुकुमाल मुनि के सिर पर रख दिये। बाद में उसे कोई देख न ले इस भय से वहाँ से भाग गया।

इससे गजसुकुमाल मुनि के **शरीर में असह्य महावेदना** उत्पन्न हुई। वह वेदना अत्यंत दु:खमय, भयंकर और असह्य थी। एक तो सुकुमार शरीर और ताजा लोच किया हुआ बिना बालों का सिर, अग्नि से सिर की चमड़ी व नसें तड़तड़ टूटी और खोपड़ी फटी, वेदना का पार नहीं था। फिर भी गजसुकुमाल मुनि सोमिल ब्राह्मण पर लेशमात्र भी द्वेष न करते हुए समभावपूर्वक वेदना सहन करने लगे। "आत्मा नित्य है और शरीर अनित्य है, क्षमा ही आत्मा का गुण है और क्रोध करना विभाव है। मेरे अशुभ कर्मों के फल मैं भोग रहा हूँ।" गजसुकुमाल ऐसा चिंतन करते रहे। उनके शुभ परिणाम तथा शुभ अध्यवसायों से आत्मा के गुणों की घात करने वाले कर्मों का नाश हुआ। उन्हें केवलज्ञान और केवलदर्शन की प्राप्ति हुई। बाद में सभी कर्मक्षय होने से उन्होंने मोक्ष गति को प्राप्त किया।

## सरगम

## जिन्दगी में हजारों से

*(तर्ज : तुम अगर साथ.....)*

जिन्दगी में हजारों से मेला जुड़ा, हंस जब-जब उड़ा वो अकेला उड़ा।
संगी साथी न कोई साथ चला, हंस जब-जब उड़ा वो अकेला उड़ा॥ टेर॥
राज-राजे रहे न वो रानी रही, न बुढ़ापा रहा न जवानी रही,
वस्तु हर इक यहाँ आनी-जानी रही, बस कहने को केवल कहानी रही।
चार दिन के लिए बस झमेला जुड़ा, हंस जब-जब उड़ा..... ॥1॥
ठाठ सारे पड़े के पड़े रह गए, कोठी बंगले खड़े के खड़े रह गए,
धन खजाने गड़े के गड़े रह गए, हीरे मोती जड़े के जड़े रह गए।
अंत में लखपति को न ढ़ेला जुड़ा, हंस जब-जब उड़ा..... ॥2॥
तेरा ये तन नहीं है किसी काम का, देख सारा जमाना है शुभ काम का,
सोच ले रे तू अपने अन्जाम का, नाम रट ले मधुर मन घनश्याम का।
देख लो वीर का नाम सबसे बड़ा, हंस जब-जब उड़ा..... ॥3॥
बेबसों को सताने से क्या फायदा, दिल किसी का दु:खाने से क्या फायदा,
नेकी कर बद कमाने से क्या फायदा, घोर अपयश कमाने से क्या फायदा,
सब इन्सां बराबर न छोटा-बड़ा, हंस जब-जब उड़ा..... ॥4॥

## तीर्थंकर का छोटा लेखा (समवायांग सूत्र)

**पदवी द्वार—**
1. ऋषभदेव तथा पार्श्वनाथ तीर्थंकर ने पूर्व के तीसरे भव में चक्रवर्ती की पदवी पाई।
2. शेष 22 तीर्थंकरों ने पूर्व के तीसरे भव में मांडलिक राजा की पदवी पाई।

**भव द्वार—**
1. समकित प्राप्ति के बाद ऋषभदेव तीर्थंकर ने 13 मोटे भव किए।
2. समकित प्राप्ति के बाद शांतिनाथ तीर्थंकर ने 12 मोटे भव किए।
3. समकित प्राप्ति के बाद अरिष्टनेमि तीर्थंकर ने 9 मोटे भव किए।
4. समकित प्राप्ति के बाद पार्श्वनाथ तीर्थंकर ने 10 मोटे भव किए।
5. समकित प्राप्ति के बाद तीर्थंकर महावीर ने 27 मोटे भव किए।
6. शेष सभी 19 तीर्थंकरों ने 3–3 मोटे भव किए।

**ज्ञान द्वार—**
1. तीर्थंकर ऋषभदेव ने पूर्व के तीसरे भव में 14 पूर्व का ज्ञान किया।
2. शेष 23 तीर्थंकरों ने पूर्व के तीसरे भव में 11 अंगों का ज्ञान किया।

**च्यवन द्वार—**
1. 24 तीर्थंकर अर्द्धरात्रि में देवलोक से च्यवे।
2. 24 तीर्थंकर अर्द्धरात्रि में माता के गर्भ में आये।
3. 24 तीर्थंकरों की माता ने अर्द्धरात्रि में 14 स्वप्न देखे।
4. 24 तीर्थंकरों का अर्द्धरात्रि में जन्म हुआ।
5. 24 तीर्थंकरों का अर्द्धरात्रि में 64 इन्द्रों ने जन्म महोत्सव मनाया।

**दीक्षा तप द्वार—**
1. 5वें तीर्थंकर ने आहार करके दीक्षा ली।
2. 12वें तीर्थंकर ने एक उपवास करके दीक्षा ली।
3. 19वें तीर्थंकर तथा 23वें तीर्थंकर ने तेला करके दीक्षा ली।
4. शेष 20 तीर्थंकरों ने बेला करके दीक्षा ली।

**पारणा द्वार—**
1. ऋषभनाथ तीर्थंकर ने 410 दिन बाद इक्षुरस से पारणा किया।
2. शेष 23 तीर्थंकरों ने अपनी-अपनी दीक्षा के दूसरे दिन खीर-खांड से पारणा किया।

**संथारा द्वार—**
1. ऋषभनाथ तीर्थंकर को 6 दिवस का संथारा आया।
2. महावीर तीर्थंकर को 2 दिवस का संथारा आया।
3. शेष 22 तीर्थंकरों को 1–1 मास का संथारा आया।

**समोशरण द्वार—**
1. ऋषभनाथ तीर्थंकर के 12 समोशरण हुए।
2. 24वें तीर्थंकर के 8 समोशरण हुए।
3. शेष 22 तीर्थंकरों के 2–2 समोशरण हुए = 44। कुल 64 समोशरण।

### कितने के साथ दीक्षा, केवलज्ञान एवं मोक्ष द्वार—

| तीर्थंकर | सहदीक्षार्थी | केवलज्ञानी | मोक्षगामी | तीर्थंकर | सहदीक्षार्थी | केवलज्ञानी | मोक्षगामी |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| पहले तीर्थंकर के | 4000 | 10000 | 10000 | सोलहवें तीर्थंकर के | | 900 | 900 |
| छठे तीर्थंकर के | | 333 | 73* | उन्नीसवें तीर्थंकर के | 300 श्रावक | | 500 साधु |
| सातवें तीर्थंकर के | | 500 | 500 | | 300 श्राविका | | 500 साध्वी |
| बारहवें तीर्थंकर के | 600 | 600 | 600 | बाईसवें तीर्थंकर के | | 536 | 536 |
| तेरहवें तीर्थंकर के | | 700 | 600 | तेईसवें तीर्थंकर के | 300 | 54 | 33 |
| चौदहवें तीर्थंकर के | | 700 | 700 | चौबीसवें तीर्थंकर के | अकेले | अकेले | अकेले |
| पन्द्रहवें तीर्थंकर के | | 800 | 800 | शेष तीर्थंकरों के | 1000 | 1000 | 1000 |

* कहीं-कहीं 308 का भी उल्लेख है।

### निर्वाण द्वार (निर्वाण स्थल)—
(1) पहले तीर्थंकर अष्टापदपर्वत पर निर्वाण पधारे।
(2) बारहवें तीर्थंकर चंपापुरी में निर्वाण पधारे।
(3) बाईसवें तीर्थंकर गिरनार पर्वत पर निर्वाण पधारे।
(4) चौबीसवें तीर्थंकर पावापुरी में निर्वाण पधारे।
(5) शेष 20 तीर्थंकर सम्मेतशिखर पर्वत पर निर्वाण पधारे।

### प्रतिक्रमण द्वार—
(1) प्रथम व अन्तिम तीर्थंकर के साधु-साध्वी कालोकाल प्रतिक्रमण करते हैं।
(2) शेष मध्य के 22 तीर्थंकर के साधु-साध्वी से जब गलती होती है तभी प्रतिक्रमण करते हैं।

### वस्त्र द्वार—
(1) प्रथम व अन्तिम तीर्थंकर के साधु-साध्वी सफेद रंग के वस्त्र पहनते हैं।
(2) शेष 22 तीर्थंकरों के साधु-साध्वी पाँच रंग के वस्त्र पहनते हैं।

### कब निर्वाण प्राप्त किया द्वार (निर्वाण समय द्वार)—
प्रथम प्रहर में—1, 2, 4, 5, 7, 8, 10, 11,
दूसरे प्रहर में—3, 6, 9, 12,
तीसरे प्रहर में—15, 18, 21, 24,
चौथे प्रहर में—13, 14, 16, 17, 19, 20, 22, 23।

### साधक प्रकृति द्वार—
(1) प्रथम तीर्थंकर के साधु-साध्वी ऋजु जड़ होते हैं।
(2) अंतिम तीर्थंकर के साधु-साध्वी वक्र जड़ होते हैं।
(3) शेष 22 तीर्थंकरों के साधु-साध्वी ऋजु व प्राज्ञ होते हैं।

### वर्ण द्वार—
(1) छठे व बारहवें तीर्थंकर का वर्ण लाल।
(2) आठवें व नौवें तीर्थंकर का वर्ण श्वेत।
(3) उन्नीसवें व तेईसवें तीर्थंकर का वर्ण नीला।
(4) बीसवें व बाईसवें तीर्थंकर का वर्ण श्याम।
(5) शेष 16 तीर्थंकरों का वर्ण सोने के समान पीला।

### अवगाहना द्वार—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| 1. 500 धनुष्य, | 2. 450 धनुष्य, | 3. 400 धनुष्य, | 4. 350 धनुष्य, | 5. 300 धनुष्य, | 6. 250 धनुष्य, |
| 7. 200 धनुष्य, | 8. 150 धनुष्य, | 9. 100 धनुष्य, | 10. 90 धनुष्य, | 11. 80 धनुष्य, | 12. 70 धनुष्य, |
| 13. 60 धनुष्य, | 14. 50 धनुष्य, | 15. 45 धनुष्य, | 16. 40 धनुष्य, | 17. 35 धनुष्य, | 18. 30 धनुष्य, |
| 19. 25 धनुष्य, | 20. 20 धनुष्य, | 21. 15 धनुष्य, | 22. 10 धनुष्य, | 23. 9 हाथ, | 24. 7 हाथ |

### उम्र द्वार—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| 1. 84 लाख पूर्व, | 2. 72 लाख पूर्व, | 3. 60 लाख पूर्व, | 4. 50 लाख पूर्व, | 5. 40 लाख पूर्व, | 6. 30 लाख पूर्व, |
| 7. 20 लाख पूर्व, | 8. 10 लाख पूर्व, | 9. 2 लाख पूर्व, | 10. 1 लाख पूर्व, | 11. 84 लाख वर्ष, | 12. 72 लाख वर्ष, |
| 13. 60 लाख वर्ष, | 14. 30 लाख वर्ष, | 15. 10 लाख वर्ष, | 16. 1 लाख वर्ष, | 17. 95 हजार वर्ष, | 18. 84 हजार वर्ष, |
| 19. 55 हजार वर्ष, | 20. 30 हजार वर्ष, | 21. 10 हजार वर्ष, | 22. 1 हजार वर्ष, | 23. 100 वर्ष, | 24. 72 वर्ष |

### विशेष ज्ञातव्य—
(1) 84 लाख वर्ष का एक पूर्वांग, 84 लाख पूर्वांग का एक पूर्व,
(70560000000000 वर्ष=एक पूर्व) (7 नील, 5 खरब, 60 अरब वर्ष=1 पूर्व),
(2) 24 अंगुल = 1 हाथ, 4 हाथ = 1 धनुष, 2000 धनुष = 1 कोस

### तीर्थंकर जानकारी—
अविवाहित बाल ब्रह्मचारी तीर्थंकर—2 (19, 22),
कुमारावस्था राजलक्ष्मी नहीं भोगी—5 (12, 19, 22, 23, 24)
राज्यलक्ष्मी भोगी तीर्थंकर—19 (1 से 11, 13 से 18 व 20, 21),
एक चौबीसी जी से दूसरी चौबीसी जी का अन्तर
जघन्य 84 हजार वर्ष उत्कृष्ट देशोन अठारह कोड़ाकोड़ी सागरोपम।

**नोट : इनमें कहीं-कहीं थोड़ी भिन्नता देखने में आती है। तत्त्व केवली गम्य हैं।**

## साधना की नींव

# सामायिक सूत्र अर्थ चित्र सहित

### नमस्कार महामंत्र

**मूल** *णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं, एसो पंच णमोक्कारो, सव्व पावप्पणासणो, मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं॥*

| मूल शब्द | अर्थ |
|---|---|
| णमो— | नमस्कार हो |
| अरिहंताणं— | अरिहन्तों को |
| सिद्धाणं— | सिद्ध भगवन्तों को |
| आयरियाणं— | आचार्य महाराज जी को |
| उवज्झायाणं— | उपाध्याय महाराज जी को |
| लोए— | लोक में (अढ़ाईद्वीप में वर्तमान) |
| सव्वसाहूणं— | सभी साधुजी महाराज को |
| एसो— | यह |
| पंच णमोक्कारो— | पंच नमस्कार (पाँच परमेष्ठियों को किया हुआ नमस्कार) |
| सव्व पावप्पणासणो— | सब पापों का नाश करने वाला है |
| च— | और |
| सव्वेसिं— | सब |
| मंगलाणं— | मंगलों में |
| पढमं— | प्रथम-प्रधान (श्रेष्ठ) |
| मंगलं— | मंगल |
| हवइ— | है |

### मूल गुरू वंदन का पाठ (तिक्खुत्तो)

*तिक्खुत्तो, आयाहिणं, पयाहिणं, करेमि, वंदामि, णमंसामि, सक्कारेमि, सम्माणेमि, कल्लाणं, मंगलं, देवयं, चेइयं, पज्जुवासामि, मत्थएण वंदामि।*

| मूल शब्द | अर्थ |
|---|---|
| तिक्खुत्तो— | तीन बार, |
| आयाहिणं— | दाहिनी ओर से "आदक्षिणं", |
| पयाहिणं— | प्रदक्षिणापूर्वक, |
| करेमि— | करता हूँ, |
| वंदामि— | वंदन करता हूँ अर्थात् मुख से स्तुति करता हूँ, |
| णमंसामि— | नमस्कार करता हूँ, काया से झुकता हूँ, प्रणाम करता हूँ, |
| सक्कारेमि— | सत्कार करता हूँ, |

| मूल शब्द | अर्थ |
|---|---|
| सम्माणेमि— | आपका सम्मान-विनय करता हूँ, |
| कल्लाणं— | आप कल्याणकारी हैं, |
| मंगलं— | आप मंगल रूप हैं, |
| देवयं— | आप धर्म देव रूप हैं, |
| चेइयं— | आप ज्ञानवंत हैं, |
| पज्जुवासामि— | (मैं) आपकी पर्युपासना (सेवा) करता हूँ, |
| मत्थएण— | मस्तक नमाकर, |
| वंदामि— | वन्दना करता हूँ। |

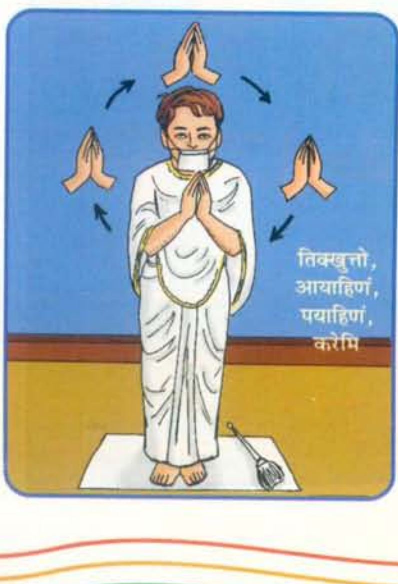


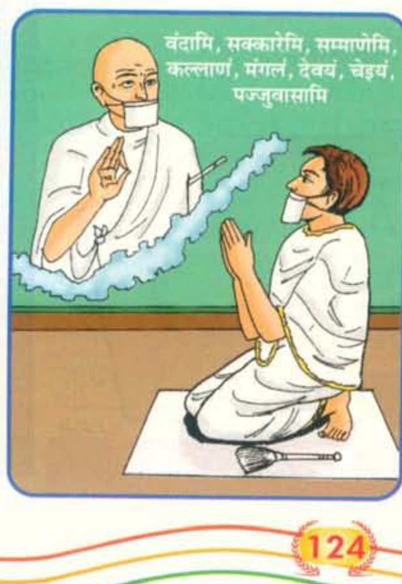


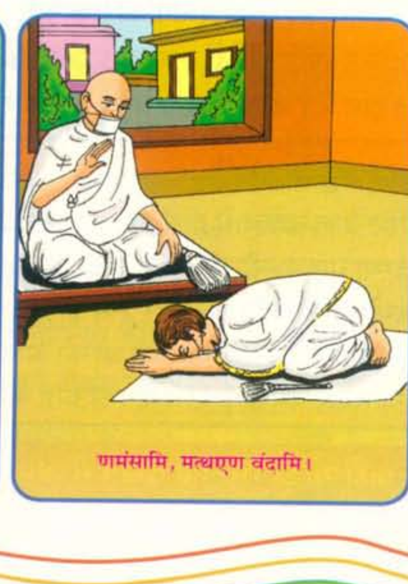


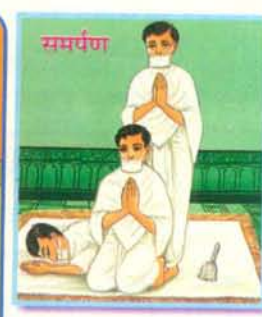

# इरियावहियं (इच्छाकारेणं) का पाठ

इच्छाकारेणं संदिसह भगवं! इरियावहियं पडिक्कमामि, इच्छं इच्छामि, पडिक्कमिउं, इरिया-वहियाए विराहणाए, गमणागमणे, पाणक्कमणे, बीयक्कमणे, हरियक्कमणे, ओसा, उत्तिंग पणग-दग-मट्टी मक्कड़ा संताणा संकमणे, जे मे जीवा विराहिया एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अभिहया, वत्तिया, लेसिया, संघाइया, संघट्टिया, परियाविया, किलामिया, उद्दविया ठाणाओ ठाणं संकामिया, जीवियाओ ववरोविया तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

| मूल शब्द | अर्थ |
|---|---|
| भगवं | हे भगवन् |
| इच्छाकारेणं | इच्छा पूर्वक |
| संदिसह | आज्ञा दीजिए (ताकि) |
| इरियावहियं | ईर्यापथिकी क्रिया का |
| पडिक्कमामि | प्रतिक्रमण करूँ (गुरुदेव के आज्ञा देने पर) |
| इच्छं | आज्ञा प्रमाण है |
| इच्छामि | इच्छा करता हूँ |
| पडिक्कमिउं | प्रतिक्रमण करने की |
| इरियावहियाए | मार्ग में चलने से होने वाली |
| विराहणाए | विराधना से |
| गमणागमणे | जाने-आने में |
| पाणक्कमणे | किसी प्राणी को दबाया हो |
| बीयक्कमणे | बीज को दबाया हो |
| हरियक्कमणे | हरी वनस्पति को दबाया हो |
| ओसा | ओस को |
| उत्तिंग | कीड़ी आदि के बिल को |
| पणग | पाँच वर्ण की काई को (लीलन फूलन) |
| दग | कच्चे पानी को |
| मट्टी | सचित्त मिट्टी को |
| मक्कड़ा संताणा | मकड़ी के जालों को |
| संकमणे | कुचला हो |
| मे | मैंने |
| जे | जो |
| जीवा | जीव हैं (उन्हें) |
| विराहिया | पीड़ित किया हो |
| एगिंदिया | एक इन्द्रिय वाले |

गमणागमणे
जाने-आने में

पाणक्कमणे
किसी प्राणी को दबाने से

हरियक्कमणे
वनस्पति को दबाने से

बीयक्कमणे
बीज को दबाने से

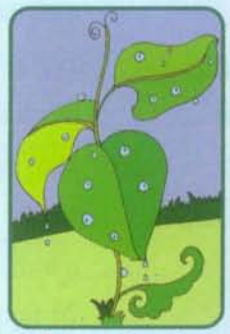

ओसा—ओस को

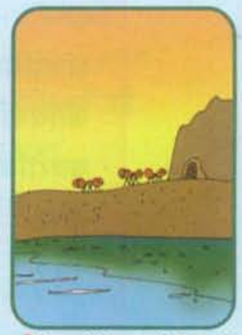

उत्तिंग—कीड़ी आदि के बिल को

पणग—पाँच वर्ण की काई को

दग—जल को

मक्कडा संताणा
मकड़ी के जालों को

मट्टी—मिट्टी को

| मूल शब्द | अर्थ |
|---|---|
| बेइंदिया | दो इन्द्रिय वाले |
| तेइंदिया | तीन इन्द्रिय वाले |
| चउरिंदिया | चार इन्द्रिय वाले |
| पंचिंदिया | पाँच इन्द्रिय वाले |
| अभिहया | सन्मुख आते हुए को हना हो |
| वत्तिया | धूल आदि से ढका हो |
| लेसिया | परस्पर मसला हो |
| संघाइया | इकट्ठा किया हो |
| संघट्टिया | छुआ हो |
| परियाविया | परिताप (कष्ट) पहुँचाया हो |
| किलामिया | किलामना उपजाई हो, मृत तुल्य किया हो |
| उद्दविया | हैरान या भयभीत किया हो |
| ठाणाओ | एक स्थान से |
| ठाणं | दूसरे स्थान पर |
| संकामिया | रखा हो |
| जीवियाओ | जीवन से |
| ववरोविया | रहित किया हो |
| तस्स | उसका |
| दुक्कडं | दुष्कृत-पाप |
| मि | मेरे लिए |
| मिच्छा | निष्फल हो |

एगिंदिया— एक इन्द्रिय वाले

बेइंदिया— दो इन्द्रिय वाले

तेइंदिया— तीन इन्द्रिय वाले

चउरिंदिया— चार इन्द्रिय वाले

पंचिंदिया— पाँच इन्द्रिय वाले

# तस्स उत्तरी का पाठ (उत्तरीकरण)

*तस्स उत्तरी-करणेणं, पायच्छित्त-करणेणं, विसोहि-करणेणं, विसल्ली-करणेणं, पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए, ठामि काउस्सग्गं। अण्णत्थ ऊससिएणं, णीससिएणं, खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं, भमलीए, पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं अंग-संचालेहिं, सुहुमेहिं खेल-संचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठि-संचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो। जाव अरिहंताणं भगवंताणं णमोक्कारेणं न पारेमि, ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि।*

ऊससिएणं
उच्छ्वास से

नीससिएणं
नि:श्वास से

**खासिएणं** खाँसी से

**छीएणं** छींक से

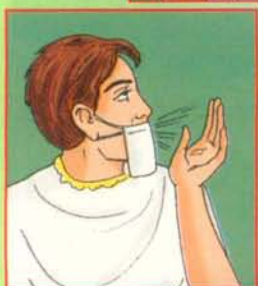

**जंभाइएणं** जँभाई–उबासी से

**उड्डुएणं** डकार से

**वाय-निसग्गेणं** अपानवायु से

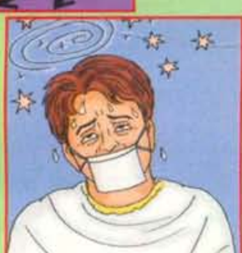

**भमलीए** चक्कर आने से

**पित्तमुच्छाए** पित्त-विकार की मूर्च्छा से

| मूल शब्द | अर्थ |
|---|---|
| **तस्स** | उस दूषित आत्मा की |
| **उत्तरी-करणेणं** | विशेष उत्कृष्टता के लिए |
| **पायच्छित्त-करणेणं** | प्रायश्चित्त करने के लिए |
| **विसोहि-करणेणं** | विशुद्धि करने के लिए |
| **विसल्ली-करणेणं** | शल्यों का त्याग करने के लिए |
| **पावाणं** | पाप |
| **कम्माणं** | कर्मों का |
| **निग्घायणट्ठाए** | नाश करने के लिए |
| **काउसग्गं** | कायोत्सर्ग |
| **ठामि** | करता हूँ |
| **अण्णत्थ** | आगे कहे जाने वाले आगारों के अतिरिक्त कायोत्सर्ग में शेष व्यापारों का त्याग करता हूँ |
| **1. ऊससिएणं** | उच्छ्वास से |
| **2. नीससिएणं** | निःश्वास से |
| **3. खासिएणं** | खाँसी से |
| **4. छीएणं** | छींक से |
| **5. जंभाइएणं** | जँभाई (उबासी) से |
| **6. उड्डुएणं** | डकार से |
| **7. वायनिसग्गेणं** | अपानवायु से |
| **8. भमलीए** | चक्कर आने से |
| **9. पित्तमुच्छाए** | पित्त-विकार की मूर्च्छा से |
| **10. सुहुमेहिं** | सूक्ष्म |
| **अंग-संचालेहिं** | अंग के संचार से |

**नोट : ये काउसग्ग के 12 आगार हैं।**

| मूल शब्द | अर्थ |
|---|---|
| **11. सुहुमेहिं** | सूक्ष्म |
| **खेल-संचालेहिं** | कफ के संचार से |
| **12. सुहुमेहिं** | सूक्ष्म |
| **दिट्ठि-संचालेहिं** | दृष्टि के संचार से |
| **एवमाइएहिं** | इत्यादि |
| **आगारेहिं** | आगारों से |
| **मे** | मेरा |
| **काउस्सग्गो** | कायोत्सर्ग |
| **अभग्गो** | अभग्न |
| **अविराहिओ** | अविराधित |
| **हुज्ज** | हो (कायोत्सर्ग कब तक?) |
| **जाव** | जब तक |
| **अरिहंताणं** | अरिहन्त |
| **भगवंताणं** | भगवंतों को |
| **णमोक्कारेणं** | नमस्कार करके कायोत्सर्ग को |
| **न पारेमि** | न पारूँ |
| **ताव** | तब तक |
| **ठाणेणं** | (एक स्थान पर) स्थिर रहकर |
| **मोणेणं** | मौन रहकर |
| **झाणेणं** | ध्यानस्थ रहकर |
| **अप्पाणं** | अपने |
| **कायं** | शरीर को |
| **वोसिरामि** | (पापकर्मों से) अलग करता हूँ। |

**नोट :** ये सभी शरीर की स्वाभाविक क्रियाएँ हैं। ध्यान में ये क्रियाएँ हो जाने पर भी कायोत्सर्ग भंग नहीं होता।

**सुहुमेहिं अंग-संचालेहिं–** सूक्ष्म अंग के संचार से

**सुहुमेहिं खेल-संचालेहिं–** सूक्ष्म कफ के संचार से

**सुहुमेहिं दिट्ठि-संचालेहिं–** सूक्ष्म दृष्टि के संचार से

# लोगस्स का पाठ

*लोगस्स उज्जोयगरे, धम्म-तित्थयरे जिणे। अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसंपि केवली॥1॥*
*उसभमजियं च वंदे, संभवमभिणंदणं च सुमइं च। पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे॥2॥*
*सुविहिं च पुप्फदंतं, सीयल-सिज्जंस वासुपुज्जं च। विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि॥3॥*
*कुंथुं अरं च मल्लिं, वंदे मुणिसुव्वयं नमि जिणं च। वंदामि रिट्ठनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च॥4॥*
*एवं मए अभित्थुआ, विहुय-रयमला पहीण-जर-मरणा। चउवीसंपि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु॥5॥*
*कित्तिय-वंदिय-महिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा। आरुग्ग-बोहिलाभं, समाहिवर-मुत्तमं दिंतु॥6॥*
*चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा। सागर-वर-गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसन्तु॥7॥*

| मूल शब्द | अर्थ |
|---|---|
| (1) लोगस्स | लोक में, |
| उज्जोयगरे | उद्योत करने वाले, |
| धम्म-तित्थयरे | धर्मतीर्थ के कर्त्ता, |
| जिणे | राग-द्वेष के विजेता, |
| अरिहंते | अरिहन्त, |
| चउवीसंपि | चौबीसों ही, |
| केवली | केवल ज्ञानी तीर्थंकरों का, |
| कित्तइस्सं | कीर्तन करूँगा। |
| (2) उसभं | श्री ऋषभदेव स्वामी को |
| अजियं च | और अजितनाथ स्वामी को, |
| वंदे | वंदन करता हूँ, |
| संभवं | श्री संभवनाथ स्वामी को, |
| अभिणंदणं च | और श्री अभिनंदन स्वामी को, |
| सुमइं च | श्री सुमतिनाथ स्वामी को और |
| पउमप्पहं | श्री पद्मप्रभ स्वामी को, |
| सुपासं | श्री सुपार्श्वनाथ |
| जिणं च | जिनेश्वर को और |
| चंदप्पहं | श्री चन्द्रप्रभ स्वामी को, |
| वंदे | वंदन करता हूँ। |
| (3) सुविहिं | श्री सुविधि नाथ स्वामी को |
| च | और, |

| मूल शब्द | अर्थ |
|---|---|
| पुप्फदंतं | श्री पुष्पदंत स्वामी को (सुविधिनाथ का दूसरा नाम) |
| सीयल | श्री शीतल नाथ स्वामी को, |
| सिज्जंस | श्री श्रेयांस नाथ स्वामी को, |
| वासुपुज्जं | श्री वासुपूज्य स्वामी को |
| च | और, |
| विमलं | श्री विमलनाथ स्वामी को |
| अणंतं च | और श्री अनन्तनाथ |
| जिणं | जिनेश्वर को, |
| धम्मं | श्री धर्मनाथ स्वामी को |
| संतिं च | और श्री शांतिनाथ स्वामी को, |
| वंदामि | वन्दना करता हूँ। |
| (4) कुंथुं | श्री कुंथुनाथ स्वामी को |
| अरं च | श्री अरनाथ स्वामी को और |
| मल्लिं | श्री मल्लिनाथ स्वामी को |
| वंदे | वंदना करता हूँ |
| मुणिसुव्वयं | श्री मुनिसुव्रत स्वामी को |
| नमि जिणं च | और श्री नमिनाथ जिनेश्वर को |
| वंदामि | वन्दना करता हूँ, |
| रिट्ठनेमिं | श्री अरिष्टनेमि (श्री नेमिनाथ) स्वामी को |
| पासं | श्री पार्श्वनाथ स्वामी को |
| तह | तथा, |
| वद्धमाणं च | और श्री वर्द्धमान (महावीर) स्वामी को |
| (5) एवं | इस प्रकार, |
| मए | मेरे द्वारा, |
| अभित्थुआ | स्तुति किए गए, |
| विहुय-रयमला | पाप रज के मल से रहित |
| पहीण-जर-मरणा | बुढ़ापे तथा मरण से मुक्त, |

| मूल शब्द | अर्थ |
|---|---|
| चउवीसंपि | चौबीसों |
| जिणवरा | जिनेश्वर देव |
| तित्थयरा | तीर्थ की स्थापना करने वाले, |
| मे | मुझ पर, |
| पसीयंतु | प्रसन्न हो, |
| (6) कित्तिय | वाणी से कीर्तन किये हुए |
| वंदिय | काया से वंदना किये हुए |
| महिया | मन से पूजन किये हुए |
| जे | जो, |
| ए | ये, |
| लोगस्स | लोक में, |
| उत्तमा | उत्तम, |
| सिद्धा | सिद्ध भगवान है |
| आरुग्ग-बोहिलाभं | आरोग्य अर्थात् समकित का लाभ और |
| समाहिवर-मुत्तमं | सर्वोत्कृष्ट भाव समाधि को |
| दिंतु | देवें। |
| (7) चंदेसु | चन्द्रमाओं से भी, |
| निम्मलयरा | विशेष निर्मल, |
| आइच्चेसु | सूर्यों से भी, |
| अहियं | अधिक, |
| पयासयरा | प्रकाश करने वाले, |
| सागर-वर | श्रेष्ठ सागर के समान, |
| गंभीरा | गम्भीर, |
| सिद्धा | सिद्ध भगवान् है, |
| मम | मुझे, |
| सिद्धिं | सिद्धि, |
| दिसन्तु | दिलावें। |

## सामायिक लेने का पाठ करेमि भंते

*करेमि भंते! सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जावनियमं पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि, मणसा वयसा कायसा तस्स भंते! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।*

हरिभद्रीयावश्यक पृष्ठ 454

| मूल शब्द | अर्थ |
|---|---|
| करेमि | करता हूँ |
| भंते | भगवन् |
| सामाइयं | सामायिक को (कैसी सामायिक?) |
| सावज्जं | सावद्य |
| जोगं | योगों के व्यापार का |
| पच्चक्खामि | प्रत्याख्यान करता हूँ। (कब तक के लिए?) |
| जावनियमं | जितना समय (1 सामायिक/2 सामायिक) |
| पज्जुवासामि | पर्युपासना करता हूँ। |
| दुविहं | दो करण (करना नहीं, कराना नहीं) से त्याग करता हूँ। |
| तिविहेणं | तीनों योगों से (वह कैसे?) |

| मूल शब्द | अर्थ |
|---|---|
| मणसा | मन से |
| वयसा | वचन से |
| कायसा | काया से |
| न करेमि | न करूँगा (सावद्य कर्म) |
| न कारवेमि | न कराऊँगा |
| तस्स | उस पूर्व पाप से |
| भंते | भगवन् |
| पडिक्कमामि | निवृत्त होता हूँ |
| निंदामि | निन्दा करता हूँ |
| गरिहामि | गर्हा करता हूँ |
| अप्पाणं | अपनी आत्मा को उस पाप व्यापार से |
| वोसिरामि | हटाता हूँ, त्याग करता हूँ। |

एक सामायिक का समय - 48 मिनट

### कायोत्सर्ग शुद्धि का पाठ

कायोत्सर्ग में आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान ध्याया हो, धर्मध्यान, शुक्लध्यान न ध्याया हो एवं मन, वचन और काया चलित हुए हो, तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

## णमोत्थुणं (शक्रस्तव का पाठ)

(औपपातिक सूत्र 12) (कल्पसूत्र 27 शक्रस्तव)

*णमोत्थुणं अरिहंताणं, भगवंताणं, आइगराणं, तित्थयराणं, सयंसंबुद्धाणं, पुरिसुत्तमाणं, पुरिससीहाणं, पुरिसवरपुंडरीयाणं, पुरिसवरगंधहत्थीणं, लोगुत्तमाणं, लोगनाहाणं, लोगहियाणं, लोगपईवाणं, लोगपज्जोयगराणं, अभयदयाणं, चक्खुदयाणं, मग्गदयाणं, सरणदयाणं, जीवदयाणं, बोहिदयाणं, धम्मदयाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मनायगाणं, धम्मसारहीणं, धम्म-वरचाउरंत-चक्कवट्टीणं, दीवोत्ताणं-सरण- गइपइट्ठाणं, अप्पडिहय-वरनाण- दंसणधराणं, विअट्टछउमाणं, जिणाणं जावयाणं, तिण्णाणं तारयाणं, बुद्धाणं बोहियाणं, मुत्ताणं मोयगाणं, सव्वण्णूणं, सव्वदरिसीणं, सिवमयल-मरुअ-मणंत-मक्खय मव्वाबाह मपुणरावित्ति सिद्धिगइ नामधेयं ठाणं संपत्ताणं, (ठाणं संपाविउकामाणं) णमो जिणाणं जियभयाणं।*

| मूल शब्द | अर्थ |
|---|---|
| णमोत्थुणं | नमस्कार हो |
| अरिहंताणं | अरिहन्त |
| भगवंताणं | भगवान को (भगवान कैसे हैं?) |
| आइगराणं | धर्म की आदि करने वाले |
| तित्थयराणं | धर्मतीर्थ की स्थापना करने वाले |
| सयं | स्वयं ही |
| संबुद्धाणं | सम्यग्बोध को पाने वाले |
| पुरिसुत्तमाणं | पुरुषों में उत्तम श्रेष्ठ |
| पुरिससीहाणं | पुरुषों में सिंह के समान |
| पुरिसवरपुंडरियाणं | पुरुषों में श्रेष्ठ पुंडरीक कमल के समान |
| पुरिसवरगंधहत्थीणं | पुरुषों में प्रधान गंधहस्ती के समान |
| लोगुत्तमाणं | लोक में उत्तम |
| लोगनाहाणं | लोक के नाथ |
| लोगहियाणं | लोक का हित करने वाले |
| लोगपईवाणं | लोक के लिए दीपक के समान |
| लोगपज्जोयगराणं | लोक में उद्योत करने वाले |
| अभयदयाणं | अभय देने वाले |
| चक्खुदयाणं | ज्ञान रूपी नेत्र देने वाले |
| मग्गदयाणं | धर्ममार्ग के दाता |
| सरणदयाणं | शरण देने वाले |
| जीवदयाणं | संयम या ज्ञान रूपी जीवन देने वाले |
| बोहिदयाणं | बोधि अर्थात् सम्यक्त्व देने वाले |
| धम्मदयाणं | धर्म के दाता |
| धम्मदेसयाणं | धर्म के उपदेशक |
| धम्मनायगाणं | धर्म के नायक |
| धम्मसारहीणं | धर्म के सारथि |
| धम्मवर | धर्म के श्रेष्ठ |
| चाउरंत | चार गति का अन्त करने वाले |
| चक्कवट्टीणं | धर्म चक्रवर्ती |
| दीवो-ताणं | संसार-समुद्र में द्वीप के समान रक्षक रूप |
| सरणगई पइट्ठाणं | गति रूप-संसार कूप में गिरते हुए प्राणियों के शरणभूत |

| मूल शब्द | अर्थ |
|---|---|
| अप्पडिहय | अप्रतिहत (बाधा रहित) तथा |
| वरनाण-दंसण | श्रेष्ठ ज्ञान दर्शन के |
| धराणं | धर्त्ता (धारण करने वाले) |
| वियट्टछउमाणं | छद्म से रहित |
| जिणाणं | राग-द्वेष के विजेता |
| जावयाणं | औरों के जिताने वाले |
| तिण्णाणं | स्वयं तरे हुए |
| तारयाणं | दूसरों को तारने वाले |
| बुद्धाणं | स्वयं बोध को प्राप्त |
| बोहियाणं | दूसरों को बोध देने वाले |
| मुत्ताणं | स्वयं मुक्त |
| मोयगाणं | दूसरों को मुक्त कराने वाले |
| सव्वण्णूणं | सर्वज्ञ |
| सव्वदरिसीणं | सर्वदर्शी तथा |
| सिवं | उपद्रवरहित |
| अयलं | अचल (स्थिर) |
| अरुअं | रोगरहित |
| अणंत | अन्तरहित |
| अक्खय | क्षयरहित |
| मव्वाबाहं | बाधारहित |
| अपुणराविति | पुनरागमन से रहित ऐसे |
| सिद्धिगइ | सिद्धि गति |
| नामधेयं | नामक |
| ठाणं | स्थान को |
| संपत्ताणं | प्राप्त करने वाले |
| (ठाणं संपाविउकामाणं) | (सिद्धि गति रूप स्थान को पाने की इच्छा रखने वाले अरिहन्त भगवान् को) |
| जियभयाणं | भय के जीतने वाले |
| जिणाणं | जिनेश्वर/सिद्ध भगवान को |
| णमो | नमस्कार हो। |

# सामायिक पारने का पाठ एयस्स नवमस्स

*एयस्स नवमस्स सामाइय वयस्स पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तंजहा ते आलोउं मणदुप्पणिहाणे, वयदुप्पणिहाणे, कायदुप्पणिहाणे, सामाइयस्स सइ अकरणया, सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणया तस्स मिच्छामि दुक्कडं।*

| मूल शब्द | अर्थ |
|---|---|
| एयस्स | इस |
| नवमस्स | नवमें |
| सामाइयवयस्स | सामायिक व्रत के |
| पंच | पाँच |
| अइयारा | अतिचार |
| जाणियव्वा | जानने योग्य हैं किन्तु |
| न समायरियव्वा | आचरण करने योग्य नहीं है |
| तंजहा | वे इस तरह हैं |
| ते | उनकी |
| आलोउं | आलोचना करता हूँ |
| मणदुप्पणिहाणे | मन में बुरे विचार उत्पन्न करना |

| मूल शब्द | अर्थ |
|---|---|
| वयदुप्पणिहाणे | कठोर या पाप जनक वचन बोलना |
| कायदुप्पणिहाणे | बिना देखे पृथ्वी पर बैठना- उठना आदि |
| सामाइयस्स सइ | सामायिक करने का काल |
| अकरणया | विस्मरण करना |
| सामाइयस्स | सामायिक का समय होने से पहले |
| अणवट्ठियस्स | ही पार लेना या अनवस्थित रूप से |
| करणया | सामायिक करना |
| तस्स | उससे होने वाला |
| मि | मेरा |
| दुक्कडं | पाप |
| मिच्छा | मिथ्या (निष्फल) हो |

*सामाइयं सम्मं काएणं न फासियं, न पालियं, न तीरियं, न किट्टियं, न सोहियं, न आराहियं, आणाएअणुपालियं न भवइ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।*

| मूल शब्द | अर्थ |
|---|---|
| सामाइयं | सामायिक का |
| सम्मं | सम्यक् प्रकार |
| काएणं | काया से |
| न फासियं | स्पर्श न किया हो |
| न पालियं | पालन न किया हो |
| न तीरियं | पूर्ण न किया हो |
| न किट्टियं | कीर्तन न किया हो |
| न सोहियं | शुद्धता पूर्वक न की हो |
| न आराहियं | आराधन न किया हो |
| आणाए | आज्ञानुसार |
| अणुपालियं न भवइ | पालन न किया हो |
| तस्स | उससे होने वाला |
| मि | मेरा |
| दुक्कडं | पाप |
| मिच्छा | मिथ्या हो |

- सामायिक में दस मन के, दस वचन के, बारह काया के इन बत्तीस दोषों में से कोई दोष लगा हो, तो **तस्स मिच्छामि दुक्कडं।**
- सामायिक में स्त्रीकथा*, भक्त (भोजन) कथा, देशकथा, राजकथा इन चार कथाओं में से कोई कथा की हो, तो **तस्स मिच्छामि दुक्कडं।** (* नोट : श्राविकाएँ स्त्रीकथा के स्थान पर पुरुषकथा बोलें)
- सामायिक में आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा, परिग्रह संज्ञा इन चार संज्ञाओं में से कोई संज्ञा की हो, तो **तस्स मिच्छामि दुक्कडं।**
- सामायिक में अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार, अनाचार जानते अजानते मन-वचन-काया से कोई दोष लगा हो, तो **तस्स मिच्छामि दुक्कडं।**
- सामायिक व्रत विधिपूर्वक लिया, विधि से पूर्ण किया, विधि में कोई अविधि हुई हो, तो **तस्स मिच्छामि दुक्कडं।**
- सामायिक का पाठ बोलने में काना, मात्रा, अनुस्वार, पद, अक्षर, ह्रस्व, दीर्घ, न्यूनाधिक, विपरीत पढ़ने में आया हो, तो अनन्त सिद्ध केवली भगवान् की साक्षी से **तस्स मिच्छामि दुक्कडं।**

# सामायिक लेने की विधि

सर्वप्रथम स्थान, आसन, पूंजणी, मुखवस्त्रिका आदि की पडिलेहणा करना। फिर यतनापूर्वक पूंजकर आसन बिछाना। बाद में आसन छोड़कर पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुँह करके दोनों हाथ जोड़कर '**तिक्खुत्तो**' के पाठ से तीन बार विधिपूर्वक वंदना करके और शासनपति श्रमण भगवान महावीर स्वामी और अपने धर्माचार्य जी (गुरुदेव) की आज्ञा लेकर '**नमस्कार मंत्र**', '**इच्छाकारेणं**' और '**तस्स उत्तरी**' का पाठ बोलकर काउस्सग्ग करना। काउस्सग्ग में **दो लोगस्स** का पाठ मन में कहना और '**णमो अरिहंताणं**' कहकर काउस्सग्ग पारना। बाद में '**काउस्सग्ग शुद्धि का पाठ**' (काउस्सग्ग में आर्त्तध्यान रौद्रध्यान ध्याया हो, धर्मध्यान शुक्लध्यान न ध्याया हो, काउस्सग्ग में मन वचन काया चलित हुए हों तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं) और '**एक लोगस्स**' का पाठ बोलना। फिर '**करेमि' भंते**' के पाठ से सामायिक लेना। 'करेमि भंते' के पाठ में जहाँ '**जाव नियमं**' शब्द आता है, वहाँ जितनी सामायिक लेनी हो (सामायिक का काल दो घड़ी अर्थात् एक मुहूर्त या अड़तालीस मिनट का होता है) उतनी सामायिक लेकर आगे का पाठ समाप्त करना। बाद में नीचे बैठकर बायाँ घुटना खड़ा रख कर दो '**णमोत्थुणं**' का पाठ बोलें। दूसरी बार 'णमोत्थुणं' का पाठ बोलते समय '**ठाणं संपत्ताणं**' के बदले '**ठाणं संपाविउकम्माणं**' बोलना।

नोट—कहीं-कहीं काउसग्ग में "**एक इच्छाकारेणं**" का पाठ बोला जाता है, तब अंत में **तस्स मिच्छामि दुक्कडं** के स्थान पर **तस्स आलोऊँ** कहना।

# सामायिक पारने की विधि

सामायिक पारने के समय '**नमस्कार मंत्र**', '**इच्छा-कारेणं**' और '**तस्स उत्तरी**' का पाठ बोलकर काउस्सग्ग करना। काउस्सग्ग में दो बार '**लोगस्स**' का पाठ मन में कहना और '**णमो अरिहंताणं**' कहकर काउस्सग्ग पारना। काउस्सग्ग शुद्धि का पाठ बोलकर एक '**लोगस्स**' का पाठ प्रगट कहना। बाद में बायाँ घुटना खड़ा रखकर ऊपर लिखे अनुसार दो बार '**णमोत्थुणं**' का पाठ बोलना। फिर '**एयस्स नवमस्स**' का पूरा पाठ बोलकर अन्त में तीन बार '**नमस्कार मंत्र**' बोलना

# मांगलिक का पाठ

चत्तारि मंगलं, अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं,
साहू मंगलं, केवलि-पण्णत्तो धम्मो मंगलं।
चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंता लोगुत्तमा,
सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा,
केवलि-पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो।
चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरिहंते सरणं
पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि,
साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि-पण्णत्तं
धम्मं सरणं पव्वज्जामि।
अरिहंतों का शरणा, सिद्धों का शरणा,
साधुओं का शरणा,
केवली प्ररूपित दया धर्म का शरणा।
ये चार शरणा, दुःख हरणा,
और न शरणा कोय।
जो भव्य प्राणी आदरे तो,
अक्षय अमर पद होय॥

# सामायिक में वर्जनीय बत्तीस दोष

## मन के 10 दोष

1. **अविवेक**— विवेक बिना सामायिक करे तो "**अविवेक**" दोष।
2. **यशकीर्ति**— यश-कीर्ति के लिये सामायिक करे तो "**यशकीर्ति**" दोष।
3. **लाभार्थ**— धनादि के लाभ की इच्छा से सामायिक करे तो "**लाभ वाँछा**" दोष।
4. **गर्व**— गर्व (अहंकार) सहित सामायिक करे तो "**गर्व**" दोष।
5. **भय**— राज्यादि के अपराध के भय से सामायिक करे तो "**भय**" दोष।
6. **निदान**— सामायिक में नियाणा (निदान) करे तो "**निदान**" दोष।
7. **संशय**— फल में सन्देह रख कर सामायिक करे तो "**संशय**" दोष।
8. **रोष**— सामायिक में क्रोध, मान, माया, लोभ करे तो "**रोष**" दोष।
9. **अविनय**— विनयपूर्वक सामायिक न करे तथा सामायिक में देव, गुरु, धर्म की अविनय-आशातना करे तो "**अविनय**" दोष।
10. **अबहुमान**— बहुमान भक्तिभावपूर्वक सामायिक न करके बेगारी के समान सामायिक करे तो "**अबहुमान**" दोष।

*अविवेग जसोकित्ती, लभत्थी गव्व-भय नियाणत्थी।*
*संसय रोस अविणउ, अबहुमाणा ए दोसा भणियव्वा॥*

## वचन के 10 दोष

*कुवयणसहसाकारे, सच्छंद संखेव कलहं च।*
*विगहा वि हासोऽसुद्धं, णिरवेक्खो मुणमुणा दोसा दस।*

1. कुवचन— सामायिक में कुवचन (कुत्सित वचन) बोले तो "**कुवचन**" दोष।
2. सहसाकार— सामायिक में बिना विचारे बोले तो "**सहसाकार**" दोष।
3. स्वच्छन्द— सामायिक में राग उत्पन्न करने वाले संसार सम्बन्धी गीत, ख्यालादि गाने गावे तो "**स्वच्छन्द**" दोष।
4. संक्षेप— सामायिक के पाठ और वाक्य कम करके (Shortcut) बोले तो "**संक्षेप**" दोष।
5. कलह— सामायिक में क्लेशकारी वचन बोले तो "**कलह**" दोष।
6. विकथा— सामायिक में स्त्रीकथा, भोजनकथा, देशकथा, राजकथा इन चार कथाओं में से कोई कथा करे तो "**विकथा**" दोष।
7. हास्य— सामायिक में हँसी-मजाक करे तो "**हास्य**" दोष।
8. अशुद्ध— सामायिक में पाठों का उच्चारण भली प्रकार से नहीं करे अथवा सामायिक में अव्रती को 'आओ पधारो' कहकर सत्कार-सम्मान देवे या उसे आने-जाने का कहे तो "**अशुद्ध**" दोष।
9. निरपेक्ष— सामायिक में उपयोग बिना बोले तो "**निरपेक्ष**" दोष।
10. मुणमुण— सामायिक में स्पष्ट उच्चारण न करके गुण-गुण बोले (गुनगुनावे) तो "**मुणमुण**" दोष।

## काया के 12 दोष

*कुआसणं चलासणं चलदिट्ठी, सावज्जकिरिया-लंबणा-कुंचणा पसारणं।*
*आलस्स मोडण मल विमासणं, निद्दा वेयावच्च त्ति बारस काय दोसा॥*

1. कुआसन— सामायिक में अयोग्य आसन से बैठे तो "**कुआसन**" दोष। ठांसणी मार के बैठना, पाँव पे पाँव रखकर बैठना, पाँव पसार कर बैठना, अभिमान-सूचक आसन से बैठना आदि सभी कुआसन (अयोग्य आसन) है।
2. चलासन— सामायिक में स्थिर आसन (Seating style) न रखे, आसन बदलता रहे तो "**चलासन**" दोष।
3. चलदृष्टि— सामायिक में दृष्टि को स्थिर न रखे तो "**चलदृष्टि**" दोष।
4. सावद्यक्रिया— सामायिक में शरीर से सावद्य-क्रिया करे, घर की रखवाली करे इशारा करे तो "**सावद्य-क्रिया**" दोष।
5. आलम्बन— सामायिक में बिना कारण भींत आदि का सहारा लेवे तो "**आलम्बन**" दोष।
6. आकुंचन प्रसारण— सामायिक में बिना प्रयोजन हाथ-पाँव को संकोचे पसारे तो "**आकुंचन प्रसारण**" दोष।
7. आलस्य— सामायिक में अंग मोडे तो "**आलस्य**" दोष।
8. मोडण— सामायिक में हाथ-पाँव का कड़का निकाले तो "**मोडण**" दोष।
9. मल— सामायिक में मैल उतारे तो "**मल**" दोष।
10. विमासण— गाल (कपोल), सिर आदि पर हाथ लगाकर शोकासन से बैठे (जैसे Tension हो वैसे) तो "**विमासण**" दोष अथवा सामायिक में बिना पूँजे खाज करे या बिना पूँजे चले तो "**विमासण**" दोष।
11. निद्रा— सामायिक में नींद लेवे तो "**निद्रा**" दोष।
12. वैयावृत्य— सामायिक में बिना कारण दूसरे से सेवा करावे तो "**वैयावृत्य**" दोष।

# पच्चीस बोल

*1. पहले बोले : गति चार–*

जीव मरकर जहाँ जाता है, उसे **गति** कहते हैं।

1. नरक गति, 2. तिर्यंच गति, 3. मनुष्य गति, 4. देव गति।

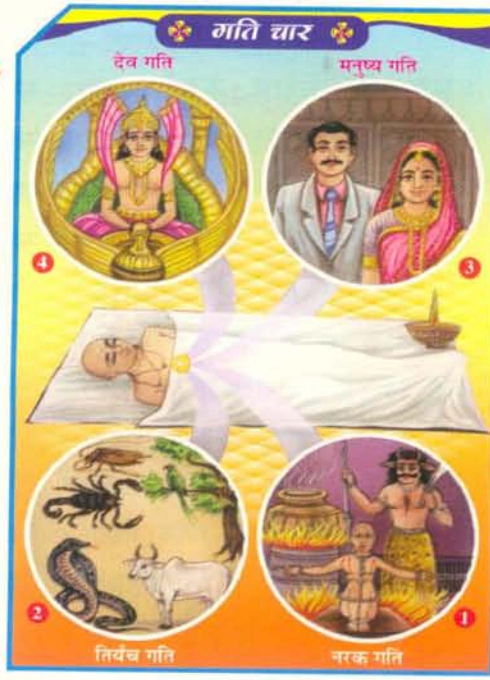


*2. दूसरे बोले : जाति पाँच–*

समान इन्द्रिय वाले जीवों के समूह को **जाति** कहते हैं।

1. एकेन्द्रिय, 2. बेइन्द्रिय, 3. तेइन्द्रिय, 4. चउरिन्द्रिय, 5. पंचेन्द्रिय।

*3. तीसरे बोले : काया छह–*

जीव जिस शरीर में उत्पन्न होता है, उसे **काया** कहते हैं।

1. पृथ्वीकाय,
2. अप्काय,
3. तेउकाय,
4. वायुकाय,
5. वनस्पतिकाय,
6. त्रसकाय।

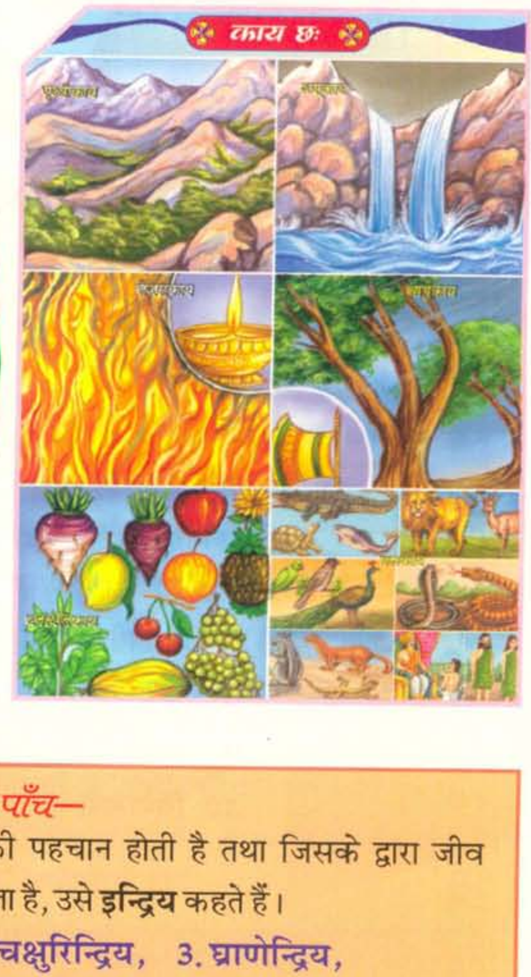


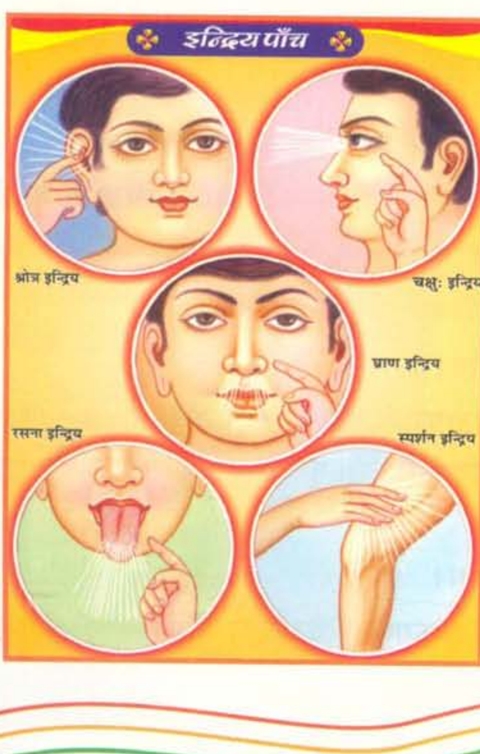


*4. चौथे बोले : इन्द्रिय पाँच–*

जिसके द्वारा जीव की पहचान होती है तथा जिसके द्वारा जीव विषयों को ग्रहण करता है, उसे **इन्द्रिय** कहते हैं।

1. श्रोत्रेन्द्रिय, 2. चक्षुरिन्द्रिय, 3. घ्राणेन्द्रिय, 4. रसनेन्द्रिय, 5. स्पर्शनेन्द्रिय।

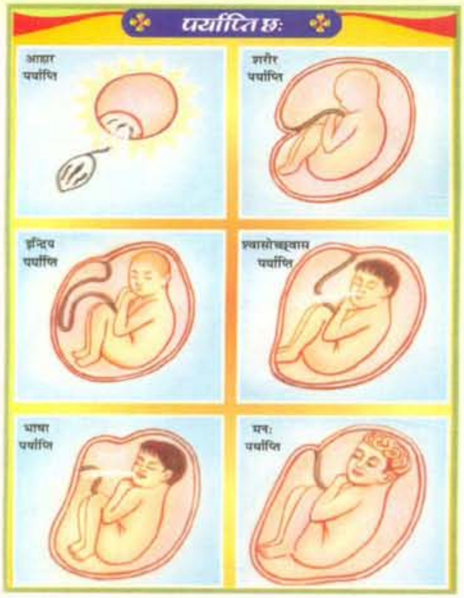


## 5. पाँचवे बोले : पर्याप्ति छह—

जीव उत्पन्न होते समय आहारादि के पुद्गलों को ग्रहण करने की शक्ति विशेष को, **पर्याप्ति** कहते हैं।

1. आहार पर्याप्ति,
2. शरीर पर्याप्ति,
3. इन्द्रिय पर्याप्ति,
4. श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति,
5. भाषा पर्याप्ति,
6. मनः पर्याप्ति।

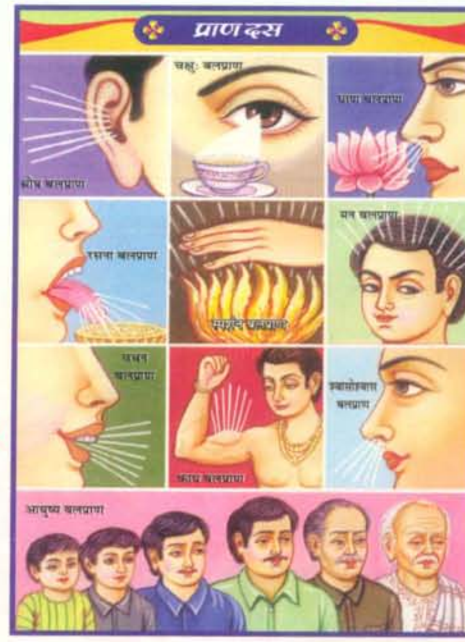


## 6. छठे बोले : प्राण दस—

जिसके सहारे से जीव जीता है और वियोग होने पर मृत्यु को प्राप्त होता है, उसे **प्राण** कहते हैं।

1. श्रोत्रेन्द्रिय बल प्राण,
2. चक्षुरिन्द्रिय बल प्राण,
3. घ्राणेन्द्रिय बल प्राण,
4. रसनेन्द्रिय बल प्राण,
5. स्पर्शनेन्द्रिय बल प्राण,
6. मन बल प्राण,
7. वचन बल प्राण,
8. काय बल प्राण,
9. श्वासोच्छ्वास बल प्राण,
10. आयुष्य बल प्राण।

## 7. सातवें बोले : शरीर पाँच—

जो समय-समय पर जीर्ण-शीर्ण होता है, उसे **शरीर** कहते हैं।

1. औदारिक शरीर,
2. वैक्रिय शरीर,
3. आहारक शरीर,
4. तैजस् शरीर,
5. कार्मण शरीर।

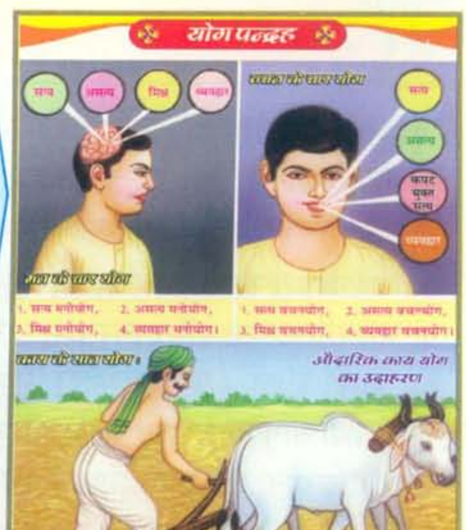


## 8. आठवें बोले : योग पन्द्रह—

मन-वचन और काया की प्रवृत्ति के निमित्त से आत्म प्रदेशों के चंचल होने को '**योग**' कहते हैं।

**4 मन के :** सत्य मन योग, असत्य मन योग, मिश्र मन योग, व्यवहार मन योग

**4 वचन के :** सत्य भाषा, असत्य भाषा, मिश्र भाषा, व्यवहार भाषा

**7 काया के :** औदारिक शरीर काय योग, औदारिक शरीर मिश्र काय योग, वैक्रिय शरीर काय योग, वैक्रिय शरीर मिश्र काय योग, आहारक शरीर काय योग, आहारक शरीर मिश्र काय योग, कार्मण काय योग।

### 9. नवमें बोले : उपयोग बारह—

सामान्य और विशेष रूप से वस्तु के स्वरूप को जानना, **उपयोग** कहलाता है।

5 ज्ञान : मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन:पर्यवज्ञान, केवलज्ञान

3 अज्ञान : मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान, विभंग ज्ञान

4 दर्शन : चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधि दर्शन, केवल दर्शन

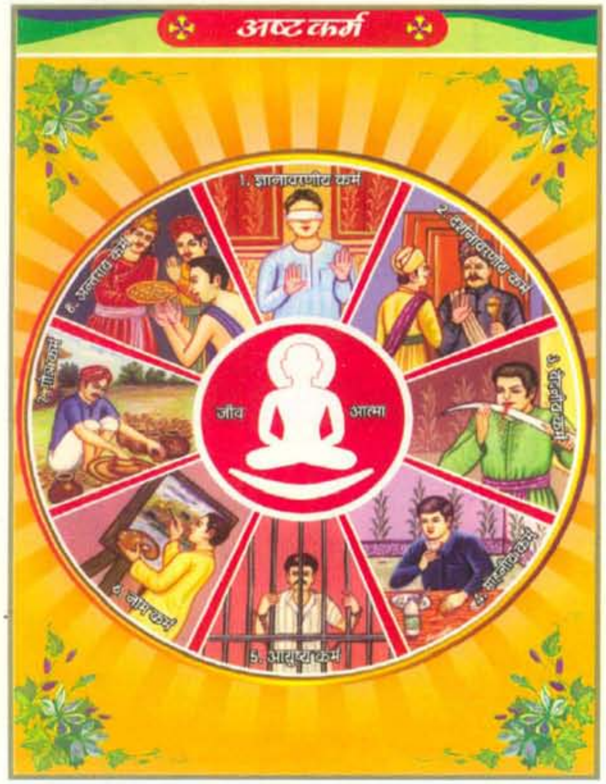


### 10. दसवें बोले—कर्म आठ—

कषाय और योग के निमित्त से आत्म-प्रदेशों के साथ जो कार्मण वर्गणा के पुद्‌गल बंध को प्राप्त होता है, उन्हें कर्म कहते हैं।

1. ज्ञानावरणीय, 2. दर्शनावरणीय, 3. वेदनीय,
4. मोहनीय, 5. आयुष्य, 6. नाम,
7. गौत्र, 8. अन्तराय।

### 11. ग्यारहवें बोले : गुणस्थान चौदह—

आत्मा के ज्ञान, दर्शन, चारित्र आदि गुणों की शुद्धि-अशुद्धि और उत्कर्ष-अपकर्ष अवस्था के वर्गीकरण को गुणस्थान कहते हैं।

1. मिथ्यात्व गुणस्थान, 2. सास्वादन गुणस्थान, 3. मिश्र गुणस्थान, 4. अविरति सम्यक् दृष्टि गुणस्थान, 5. देशविरति श्रावक गुणस्थान, 6. प्रमत्त संयत (प्रमादी साधु) गुणस्थान, 7. अप्रमत्त संयत (अप्रमादी साधु) गुणस्थान, 8. निवृत्ति बादर गुणस्थान, 9. अनिवृत्ति बादर गुणस्थान, 10. सूक्ष्म संपराय गुणस्थान, 11. उपशांत मोहनीय गुणस्थान, 12. क्षीण मोहनीय गुणस्थान, 13. सयोगी केवली गुणस्थान, 14. अयोगी केवली गुणस्थान।

## 12. बारहवें बोले : पाँच इन्द्रियों के 23 विषय और 240 विकार—

इन्द्रियाँ जिसको ग्रहण करती हैं, उसे **विषय** कहते हैं। विषयों पर राग-द्वेष की भावना को **विकार** कहते हैं।

| नं. | इन्द्रिय | विषय | विकार |
|---|---|---|---|
| 1. | श्रोत्रेन्द्रिय | 3 : जीव शब्द, अजीव शब्द, मिश्र शब्द, | 12 : 3 शुभ, 3 अशुभ। इन 6 पर राग और 6 पर द्वेष |
| 2. | चक्षुरिन्द्रिय | 5 : काला, नीला, लाल, पीला, सफेद | 60 : 5 सचित्त, 5 अचित्त, 5 मिश्र। 15 शुभ और 15 अशुभ—ये 30, इन 30 पर राग और 30 पर द्वेष |
| 3. | घ्राणेन्द्रिय | 2 : सुरभिगंध और दुरभिगंध | 12 : 2 सचित्त, 2 अचित्त, 2 मिश्र। इन 6 पर राग और 6 पर द्वेष। |
| 4. | रसनेन्द्रिय | 5 : तीखा, कड़वा, कषैला, खट्टा, मीठा | 60 : 5 सचित्त, 5 अचित्त, 5 मिश्र, 15 शुभ और 15 अशुभ। ये 30, इन 30 पर राग और 30 पर द्वेष। |
| 5. | स्पर्शनेन्द्रिय | 8 : खुरदरा, कोमल, हल्का, भारी, ठंडा, गर्म, लूखा, चिकना | 96 : 8 सचित्त, 8 अचित्त, 8 मिश्र। ये 24 शुभ और 24 अशुभ। ये 48, इन 48 पर राग और 48 पर द्वेष |

## 13. तेरहवें बोले : मिथ्यात्व के दस बोल—

जीव, अजीव आदि जो तत्त्व जैसे है, उन्हें वैसा नहीं मानना, न्यूनाधिक या विपरीत मानना अथवा कुदेव, कुगुरु, कुधर्म और कुशास्त्र को मानना मिथ्यात्व कहलाता है।

1. जीव को अजीव श्रद्धे तो मिथ्यात्व।
2. अजीव को जीव श्रद्धे तो मिथ्यात्व।
3. धर्म को अधर्म श्रद्धे तो मिथ्यात्व।
4. अधर्म को धर्म श्रद्धे तो मिथ्यात्व।
5. साधु को असाधु श्रद्धे तो मिथ्यात्व।
6. असाधु को साधु श्रद्धे तो मिथ्यात्व।
7. संसार के मार्ग को मोक्ष का मार्ग श्रद्धे तो मिथ्यात्व।
8. मोक्ष के मार्ग को संसार का मार्ग श्रद्धे तो मिथ्यात्व।
9. आठ कर्मों से मुक्त को अमुक्त श्रद्धे तो मिथ्यात्व।
10. आठ कर्मों से अमुक्त को मुक्त श्रद्धे तो मिथ्यात्व।

### 14. चौदहवें बोले : छोटी नवतत्त्व के 115 भेद— वस्तु के वास्तविक स्वरूप को **तत्त्व** कहते हैं।

| नव तत्त्वों के नाम | जीव तत्त्व | अजीव तत्त्व | पुण्य तत्त्व | पाप तत्त्व | आस्रव तत्त्व | संवर तत्त्व | निर्जरा तत्त्व | बंध तत्त्व | मोक्ष तत्त्व | कुल |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| भेद | 14 | 14 | 9 | 18 | 20 | 20 | 12 | 4 | 4 | 115 |

#### (1) जीव तत्त्व के 14 भेद—

1. सूक्ष्म एकेन्द्रिय के 2 भेद — अपर्याप्त और पर्याप्त
2. बादर एकेन्द्रिय के 2 भेद — अपर्याप्त और पर्याप्त
3. बेइन्द्रिय के 2 भेद — अपर्याप्त और पर्याप्त
4. तेइन्द्रिय के 2 भेद — अपर्याप्त और पर्याप्त
5. चउरिन्द्रिय के 2 भेद — अपर्याप्त और पर्याप्त
6. असन्नी पंचेन्द्रिय के 2 भेद — अपर्याप्त और पर्याप्त
7. सन्नी पंचेन्द्रिय के 2 भेद — अपर्याप्त और पर्याप्त

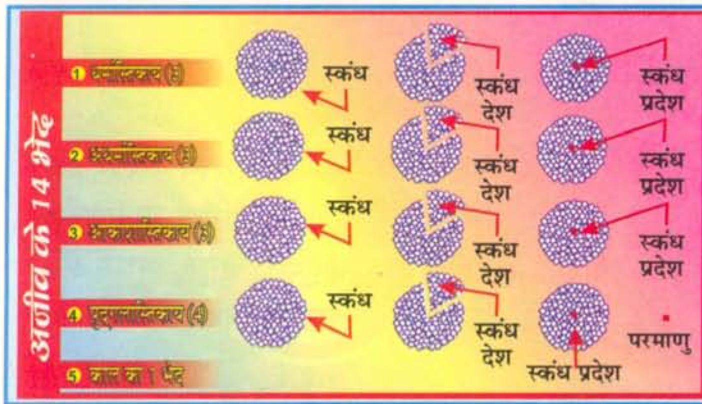


#### (2) अजीव के 14 भेद— अरूपी अजीव के 10 भेद—

✦ धर्मास्तिकाय के तीन भेद — स्कंध, देश और प्रदेश।
✦ अधर्मास्तिकाय के तीन भेद — स्कंध, देश और प्रदेश।
✦ आकाशास्तिकाय के तीन भेद — स्कंध, देश और प्रदेश।

यह नव और दसवाँ काल। ये दस भेद अरूपी अजीव के हुए, रूपी अजीव के चार भेद—स्कंध, देश, प्रदेश और परमाणु पुद्गल।

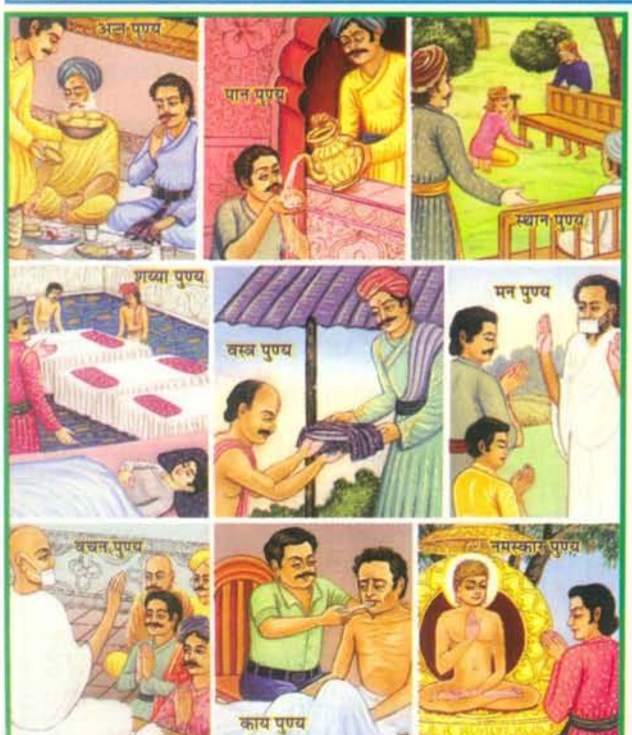


#### (3) पुण्य के 9 भेद—

1. **अन्न पुण्य**—अन्न देने से पुण्य होता है।
2. **पान पुण्य**—पानी देने से पुण्य होता है।
3. **लयन पुण्य**—जगह, स्थान देने से पुण्य होता है।
4. **शयन पुण्य**—शय्या, आसन, पाट, पाटला, बाजोट आदि देने से पुण्य होता है।
5. **वस्त्र पुण्य**—वस्त्र देने से पुण्य होता है।
6. **मन पुण्य**—शुभ मन रखने से पुण्य होता है।
7. **वचन पुण्य**—शुभ वचन बोलने से पुण्य होता है।
8. **काय पुण्य**—शरीर द्वारा सेवा तथा विनय करने से पुण्य होता है।
9. **नमस्कार पुण्य**—गुणवानों को नमस्कार करने से पुण्य होता है।

*(4) पाप के 18 भेद—*

1. **प्राणातिपात**—जीवों की हिंसा करना। 2. **मृषावाद**—झूठ बोलना। 3. **अदत्तादान**—चोरी करना। 4. **मैथुन**—कुशील सेवन करना। 5. **परिग्रह**—धन-धान्य आदि का संग्रह व उसकी लालसा रखना। 6. **क्रोध**—रोष, गुस्सा करना। 7. **मान**—अहंकार करना। 8. **माया**—छल-कपट करना। 9. **लोभ**—लालच-तृष्णा बढ़ाना। 10. **राग**—स्नेह-प्रीति करना। 11. **द्वेष**—वैर भाव रखना। 12. **कलह**—क्लेश करना। 13. **अभ्याख्यान**—झूठा कलंक लगाना। 14. **पैशुन्य**—चुगली करना। 15. **पर-परिवाद**—दूसरों की निंदा करना। 16. **रति-अरति**—मनोज्ञ वस्तुओं पर प्रसन्न होना और अमनोज्ञ वस्तुओं पर नाराज होना। 17. **माया मृषावाद**—छल-कपट के साथ झूठ बोलना। 18. **मिथ्यादर्शन शल्य**—कुदेव, कुगुरु और कुधर्म पर श्रद्धा रखना।

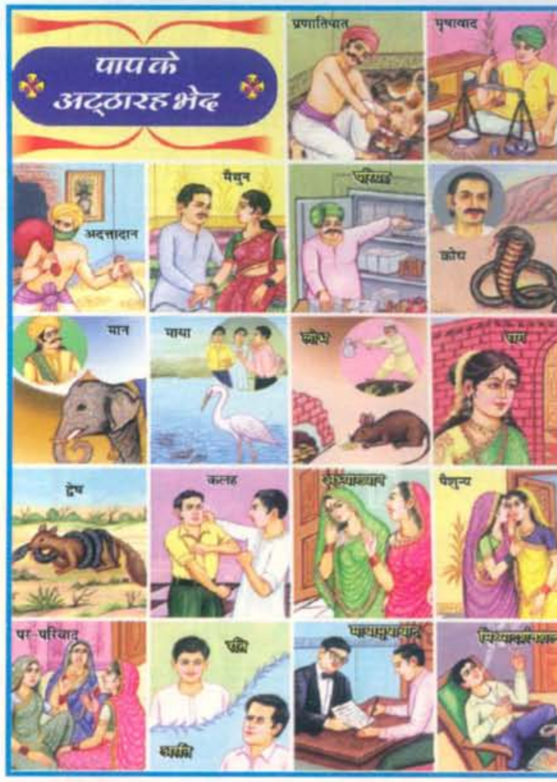


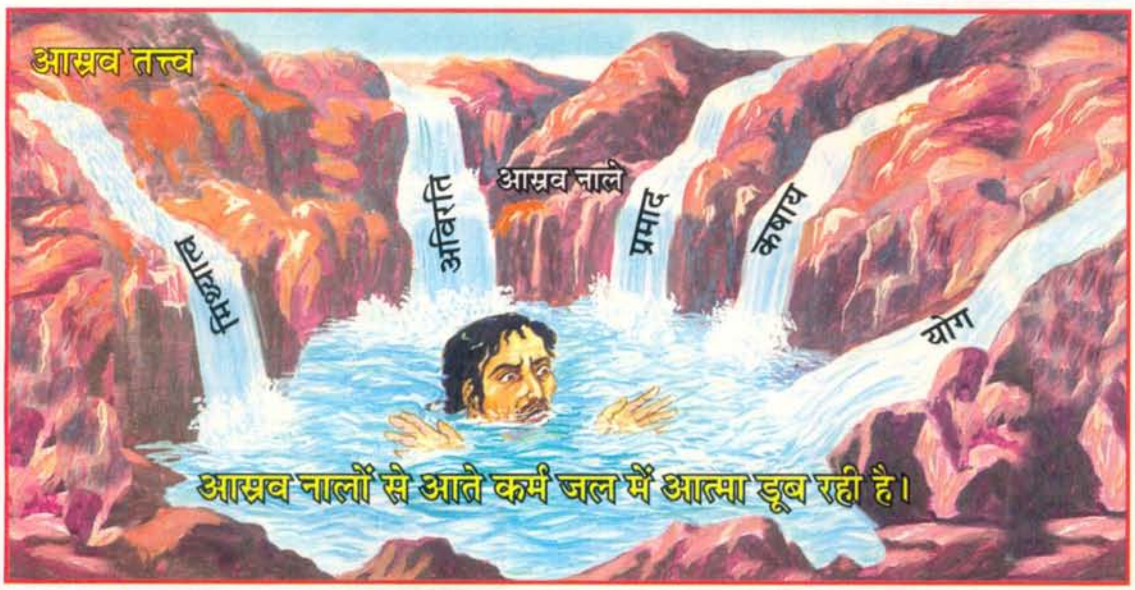


*(5) आस्रव के 20 भेद—*

1. **मिथ्यात्व**—मिथ्यात्व का सेवन करे तो आस्रव। 2. **अव्रत**—व्रत प्रत्याख्यान नहीं करे तो आस्रव। 3. **प्रमाद**—पाँच प्रमाद का सेवन करे तो आस्रव। 4. **कषाय**—क्रोध, मान, माया और लोभ का सेवन करे तो आस्रव। 5. **अशुभयोग**—मन, वचन और काया द्वारा अशुभ प्रवृत्ति करे तो आस्रव। 6. **प्राणातिपात**—जीव हिंसा करे तो आस्रव। 7. **मृषावाद**—झूठ बोले तो आस्रव। 8. **अदत्तादान**—चोरी करे तो आस्रव। 9. **मैथुन**—कुशील सेवन करे तो आस्रव। 10. **परिग्रह**—धन-धान्य आदि का संग्रह करे तो आस्रव। 11. श्रोत्रेन्द्रिय वश में नहीं रखे तो आस्रव। 12. चक्षुरिन्द्रिय वश में नहीं रखे तो आस्रव। 13. घ्राणेन्द्रिय वश में नहीं रखे तो आस्रव। 14. रसनेन्द्रिय वश में नहीं रखे तो आस्रव। 15. स्पर्शनेन्द्रिय वश में नहीं रखे तो आस्रव। 16. मन वश में नहीं रखे तो आस्रव। 17. वचन वश में नहीं रखे तो आस्रव। 18. काया वश में नहीं रखे तो आस्रव। 19. भण्ड उपकरण अयतना से लेवे और अयतना से रखे तो आस्रव। 20. सूई कुशाग्र मात्र कोई भी वस्तु अयतना (असावधानी) से लेवे और अयतना से रखे तो आस्रव।

*(6) संवर के 20 भेद—*

1. समकित संवर। 2. व्रत पच्चक्खाण करे तो संवर। 3. प्रमाद नहीं करे तो संवर। 4. कषाय नहीं करे तो संवर। 5. शुभयोग प्रवर्तावे तो संवर। 6. अप्राणातिपात—जीव हिंसा न करे तो संवर। 7. अमृषावाद—झूठ नहीं बोले तो संवर। 8. अदत्तादान त्याग—चोरी नहीं करे तो संवर। 9. अमैथुन—कुशील नहीं सेवे तो संवर। 10. अपरिग्रह—मूर्च्छा-संग्रह नहीं रखे तो संवर। 11. श्रोत्रेन्द्रिय वश में करे तो

संवर। 12. चक्षुरिन्द्रिय वश में करे तो संवर। 13. घ्राणेन्द्रिय वश में करे तो संवर। 14. रसनेन्द्रिय वश में करे तो संवर। 15. स्पर्शनेन्द्रिय वश में करे तो संवर। 16. मन वश में करे तो संवर। 17. वचन वश में करे तो संवर। 18. काया वश में करे तो संवर। 19. भंड—उपकरण यतना से लेवे और यतना से रखे तो संवर। 20. सूई—कुशाग्र मात्र यतना से लेवे और यतना से रखे तो संवर।

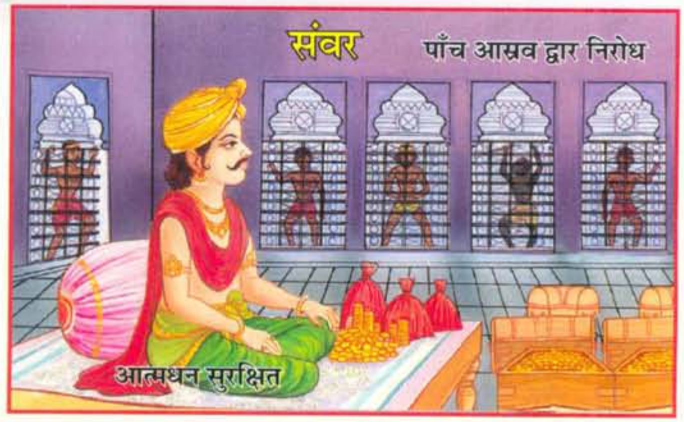


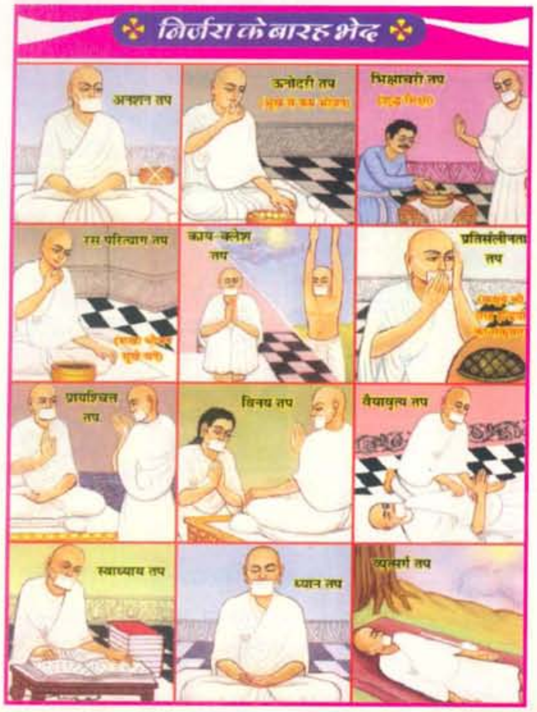


*(7) निर्जरा के 12 भेद—*

1. **अनशन**—चार प्रकार के या तीन प्रकार के आहार का त्याग करना।
2. **ऊनोदरी**—भोजन की अधिक रुचि होने पर भी कम भोजन करना।
3. **भिक्षाचर्या**—शुद्ध आहार आदि की गवेषणा करना।
4. **रसपरित्याग**—विगयादि का त्याग करना, स्वाद पर विजय करना।
5. **कायक्लेश**—वीर आसन आदि कष्टप्रद क्रिया करना।
6. **प्रतिसंलीनता**—इन्द्रियों को वश में करना तथा कषाय और योगों को रोकना।
7. **प्रायश्चित्त**—लगे हुए दोषों की आलोचना करके प्रायश्चित्त लेकर आत्मा को शुद्ध करना।
8. **विनय**—गुरु आदि का भक्तियुक्त अभ्युत्थानादि से आदर, सत्कार एवं विनय करना।
9. **वैयावृत्य**—आचार्यादि की सेवा करना।
10. **स्वाध्याय**—शास्त्र की वाचना, पृच्छना आदि करना।
11. **ध्यान**—मन को एकाग्र करके शुभ विचारों में लगाना।
12. **व्युत्सर्ग**—काया के व्यापार का त्याग करना।

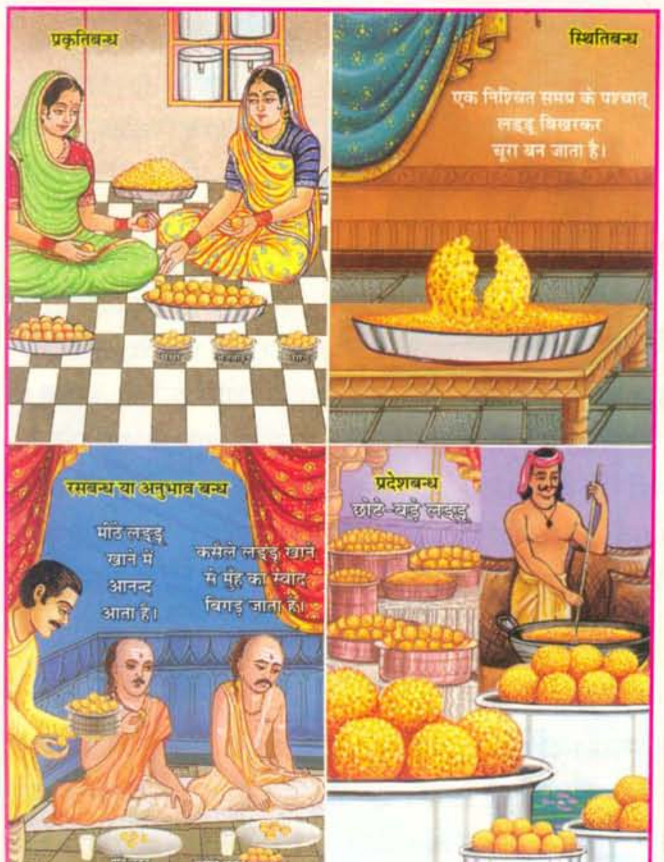


*(8) बंध के 4 भेद—*

1. प्रकृति बंध,
2. स्थिति बंध,
3. अनुभाग बंध, और
4. प्रदेश बंध।

*(9) मोक्ष के 4 भेद—*

1. सम्यक्ज्ञान,
2. सम्यक्दर्शन,
3. सम्यक् चारित्र, और
4. सम्यक् तप।

### 15. पन्द्रहवें बोले : आत्मा आठ—

जो ज्ञान, दर्शन आदि गुण पर्यायों में निरन्तर गमन करे, उसे **आत्मा** कहते हैं।

1. द्रव्य आत्मा, 2. कषाय आत्मा,
3. योग आत्मा, 4. उपयोग आत्मा,
5. ज्ञान आत्मा, 6. दर्शन आत्मा,
7. चारित्र आत्मा, 8. वीर्य आत्मा।

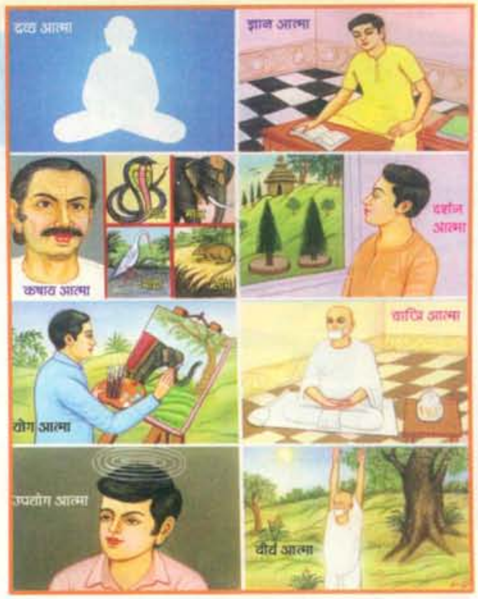


### 16. सोलहवें बोले : दंडक चौबीस—

अपने किए हुए शुभाशुभ कर्मों के फल भोगने के स्थान को दण्डक कहते है।

| | | |
|---|---|---|
| 1. 7 नारकी का | एक दण्डक | **नाम :** 1. घम्मा, 2. वंसा, 3. शीला, 4. अंजणा, 5. रिट्ठा, 6. मघा, 7. माघवई<br>**गौत्र :** रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तमप्रभा, तम:तम प्रभा |
| 2. 10 भवनपति देवों के | दस दण्डक | 1. असुरकुमार, 2. नागकुमार, 3. सुवर्णकुमार, 4. विद्युत्कुमार, 5. अग्निकुमार, 6. द्वीपकुमार, 7. उदधिकुमार, 8. दिशाकुमार, 9. पवनकुमार (वायुकुमार), 10. स्तनितकुमार |
| 3. 5 स्थावरों के | पाँच दण्डक | 1. पृथ्वीकाय, 2. अप्काय, 3. तेउकाय, 4. वायुकाय, 5. वनस्पतिकाय |
| 4. 3 विकलेन्द्रिय के | तीन दण्डक | 1. बेइन्द्रिय, 2. तेइन्द्रिय, 3. चौरिन्द्रिय |
| 5. तिर्यंच पंचेन्द्रिय का | एक दण्डक | |
| 6. मनुष्य का | एक दण्डक | |
| 7. वाणव्यंतर देव का | एक दण्डक | |
| 8. ज्योतिषी देव का | एक दण्डक | |
| 9. वैमानिक देवों का | एक दण्डक | |

### 17. सत्रहवें बोले—लेश्या छह—

आत्मा के शुभाशुभ परिणामों को, लेश्या कहते हैं।

1. कृष्ण लेश्या, 2. नील लेश्या, 3. कापोत लेश्या,
4. तेजो लेश्या, 5. पद्म लेश्या, 6. शुक्ल लेश्या।

*18. अठारहवें बोले — दृष्टि तीन—*
तत्त्व विचारणा की रुचि को दृष्टि कहते हैं।
1. सम्यग् दृष्टि, 2. मिथ्या दृष्टि, 3. मिश्र दृष्टि।

*19. उन्नीसवें बोले — ध्यान चार—*
किसी भी एक ही विषय पर मन की एकाग्रता रखना **ध्यान** कहलाता है।
1. आर्त्तध्यान, 2. रौद्रध्यान, 3. धर्मध्यान, 4. शुक्लध्यान।

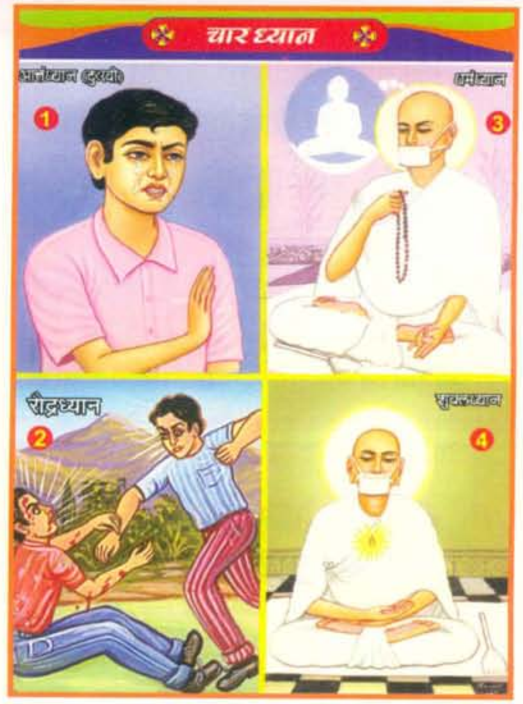


*20. बीसवें बोले : षट् द्रव्यों के 30 भेद—*

| | धर्मास्तिकाय | अधर्मास्तिकाय | आकाशास्तिकाय | कालद्रव्य | जीवास्तिकाय | पुद्गलास्तिकाय |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1. द्रव्य से | एक द्रव्य | एक द्रव्य | एक द्रव्य | एक काल अनंत द्रव्यों पर प्रवर्ते | जीव द्रव्य अनंत | पुद्गल द्रव्य अनंत |
| 2. क्षेत्र से | सम्पूर्ण लोक प्रमाण | सम्पूर्ण लोक प्रमाण | सम्पूर्ण लोकालोक प्रमाण | अढ़ाई द्वीप प्रमाण | सम्पूर्ण लोक प्रमाण | सम्पूर्ण लोक प्रमाण |
| 3. काल से | आदि-अंत रहित | आदि-अंत रहित | आदि-अंत रहित | आदि-अंत रहित | आदि-अंत रहित | आदि-अंत रहित |
| 4. भाव से | वर्ण नहीं, गंध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं अरूपी, अजीव, शाश्वत्, लोकव्यापी और असंख्यात प्रदेशी हैं। | वर्ण नहीं, गंध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं अरूपी, अजीव, शाश्वत्, लोकव्यापी और असंख्यात प्रदेशी है। | वर्ण नहीं, गंध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं, अरूपी, अजीव, शाश्वत्, सर्वव्यापी और अनन्त प्रदेशी है। (लोक की अपेक्षा असं. प्रदेशी है। अलोक की अपेक्षा अनंत प्रदेशी है।) | वर्ण नहीं, गंध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं अरूपी, अजीव, शाश्वत् और अप्रदेशी है। | वर्ण नहीं, गंध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं अरूपी, जीव, शाश्वत्, लोकव्यापी अनन्त प्रदेशी है। (एक जीव की अपेक्षा असंख्यात प्रदेशी है।) (अनंत जीवों की अपेक्षा अनंत प्रदेशी है।) | वर्ण है, गंध है, रस है, स्पर्श है रूपी, अजीव शाश्वत् और संख्यात्, असंख्यात्, अनन्त प्रदेशी है। |
| 5. गुण से | चलन गुण | स्थिर गुण | अवगाहन (स्थान देने का गुण) | वर्तन गुण | उपयोग गुण | पूरण, गलन, सड़न, विध्वंसन गुण |
| 6. दृष्टांत | पानी में मछली का दृष्टान्त | थके हुए पथिक को छाया का दृष्टान्त | भीत में खूंटी का/दूध में पताशा का दृष्टांत | कपड़े में कैंची का दृष्टांत | चन्द्रमा की कला का दृष्टान्त | बादल का दृष्टांत |

1. जैसे पानी के आधार से मछली चलती है, वैसे ही जीव और पुद्गल दोनों धर्मास्तिकाय के आधार से चलते हैं।
2. जैसे थके हुए पथिक को छाया का आधार है, वैसे ही ठहरे हुए जीव और पुद्गल को अधर्मास्तिकाय का आधार है।
3. जैसे खूँटी को स्थान देने में भीत सहायक है, वैसे ही धर्मास्तिकाय आदि द्रव्यों को आकाशास्तिकाय स्थान देने में सहायक है।
4. नये को पुराना करे, पुराने को नष्ट करे। प्रदेश रहित होने से काल अप्रदेशी कहलाता है।
5. जैसे आवरण के कारण चन्द्रमा न्यूनाधिक प्रकाशित होता है, वैसे ही ज्ञानावरणादि के कारण आत्मा का उपयोग गुण न्यूनाधिक प्रकट होता है। 6. जैसे बादल मिलते और बिखरते हैं, वैसे ही पुद्गल मिलते और बिखरते हैं।

## 21. इक्कीसवें बोले– राशि दो–

वस्तु के समूह को '**राशि**' कहते हैं। 1. जीव राशि, और 2. अजीव राशि।
जीव राशि के 563 और अजीव राशि के 560 भेद होते हैं।
संसारी जीवों के 563 भेद इस प्रकार हैं–

### जीव के 563 भेद (स्थान) – नारकी के 14 भेद

**1. घम्मा, 2. वंशा, 3. शीला, 4. अंजना, 5. अरिष्ठा (रिट्ठा), 6. मघा, 7. माघवती**

इन सात नरकों के नारकी जीवों के अपर्याप्त और पर्याप्त 7+7 = 14 भेद हैं।

### तिर्यंच के 48 भेद

| एकेन्द्रिय के 22 | | | विकलेन्द्रिय के 6 | | | पंचेन्द्रिय के 20 | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| पृथ्वीकाय | 4 | सूक्ष्म, बादर के अपर्याप्त, पर्याप्त | बेइन्द्रिय | 2 | अप. प. | 1 | जलचर | ये 5 सन्नी |
| अप्काय | 4 | सूक्ष्म, बादर के अपर्याप्त, पर्याप्त | तेइन्द्रिय | 2 | अप. प. | 2 | स्थलचर | 5 असन्नी |
| तेउकाय | 4 | सूक्ष्म, बादर के अपर्याप्त, पर्याप्त | चउरिन्द्रिय | 2 | अप. प. | 3 | खेचर | 10 अपर्याप्त |
| वायुकाय | 4 | सूक्ष्म, बादर के अपर्याप्त, पर्याप्त | | | | 4 | उरपरिसर्प | 10 पर्याप्त |
| वनस्पतिकाय | 6 | सूक्ष्म, साधारण, प्रत्येक के अप., प. | | | | 5 | भुजपरिसर्प | ये 20 |

### –: पंचेन्द्रिय तिर्यंच के 5 भेदों का स्पष्टीकरण :–

**जलचर**—जल में रहने वाले प्राणी। जैसे—मच्छ, कच्छ, मेंढक, मगर, ग्राह, सुंसुमार आदि।
**स्थलचर**—जमीन पर चलने वाले प्राणी। जैसे—गाय, भैंस, बकरी, घोड़ा, गधा, ऊँट, शेर, चीता, बिल्ली, कुत्ता आदि।
**खेचर**—आकाश में उड़ने वाले प्राणी। जैसे—चिड़िया, कबूतर, कौआ, सारस, हंस, तोता आदि।
**उरपरिसर्प**—पेट के बल पर चलने वाले प्राणी। जैसे—सर्प, अजगर, असालिया, महोरग आदि।
**भुजपरिसर्प**—भुजा के बल पर चलने वाले प्राणी। जैसे—चूहा, छिपकली, गिरगिट, नेवला, गिलहरी आदि।

### मनुष्य के 303 भेद

| 15 कर्मभूमिज मनुष्य + | 30 अकर्मभूमिज मनुष्य + | 56 अन्तर्द्वीपज मनुष्य = | 101 अपर्याप्त 101 पर्याप्त |
|---|---|---|---|
| 5 भरत | 5 देवकुरू-5 उत्तरकुरू | गर्भज मनुष्य के — | 202 ⌉ 303 |
| 5 ऐरावत | 5 हरिवास-5 रम्यक्वास | सम्मूर्च्छिम मनुष्य के — | 101 ⌋ |
| 5 महाविदेह | 5 हेमवत-5 हेरण्यवत | | |

**सम्मूर्च्छिम मनुष्य :** मनुष्य के 14 अशुचि स्थानों में उत्पन्न होने वाले मनुष्य गति नामकर्म वाले अपर्याप्त जीवों को सम्मूर्च्छिम मनुष्य कहते हैं।

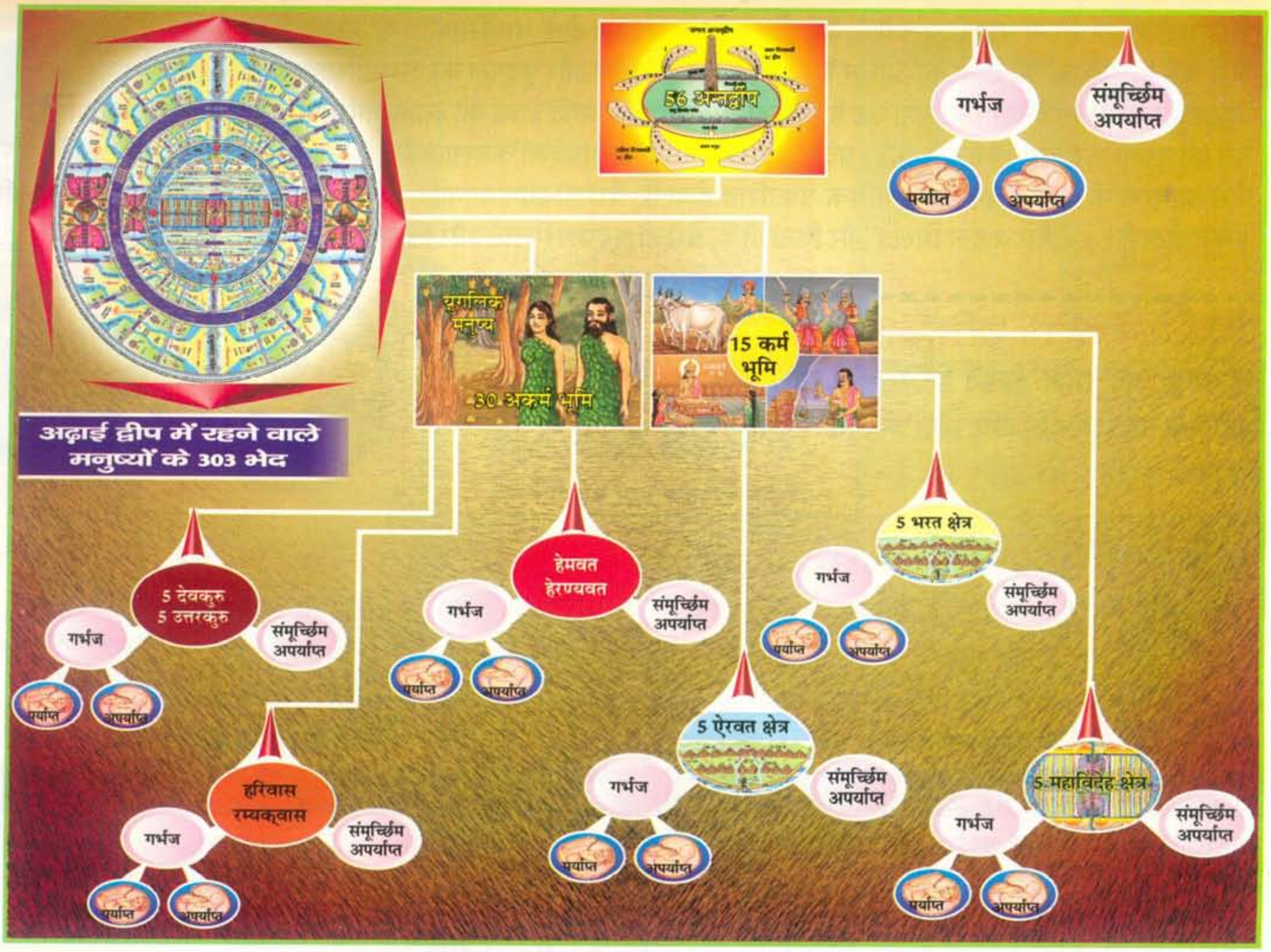


## देवता के 198 भेद

**25 भवनपति + 26 वाणव्यन्तर + 10 ज्योतिषी + 38 वैमानिक = 99 अपर्याप्त + 99 पर्याप्त = 198 भेद**

| 25 भवनपति | | | | | | | 26 वाणव्यन्तर | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 10 भवनपति | | 15 परमाधार्मिक | | | | | 16 वाणव्यन्तर | | | | 10 जृम्भक | |
| 1. | असुरकुमार | 1. | अम्ब | 11. | कुम्भ | | पिशाचादि-8 | | आणपन्ने आदि-8 | | 1. | अन्न जृम्भक |
| 2. | नागकुमार | 2. | अम्बरीष | 12. | बालुका | | 1. | पिशाच | 1. | आणपन्ने | 2. | पाण जृम्भक |
| 3. | सुवर्ण कुमार | 3. | श्याम | 13. | वैतरणी | | 2. | भूत | 2. | पाणपन्ने | 3. | लयण जृम्भक |
| 4. | विद्युत् कुमार | 4. | शबल | 14. | खरस्वर | | 3. | यक्ष | 3. | इसिवाई | 4. | शयन जृम्भक |
| 5. | अग्नि कुमार | 5. | रौद्र | 15. | महाघोष | | 4. | राक्षस | 4. | भूयवाई | 5. | वस्त्र जृम्भक |
| 6. | द्वीप कुमार | 6. | महारौद्र | 10 ज्योतिषी | | | 5. | किन्नर | 5. | कंदे | 6. | पुष्प जृम्भक |
| 7. | उदधि कुमार | 7. | काल | 1. | चन्द्र | ये पाँच चर पाँच अचर कुल 10 भेद ज्योतिषी के हुए। | 6. | किंपुरुष | 6. | महाकंदे | 7. | फल जृम्भक |
| 8. | दिशा कुमार | 8. | महाकाल | 2. | सूर्य | | 7. | महोरग | 7. | कोहंडे | 8. | पुष्प-फल जृम्भक |
| 9. | पवन कुमार | 9. | असिपत्र | 3. | ग्रह | | 8. | गंधर्व | 8. | पयंग देव | 9. | विद्या जृम्भक |
| 10. | स्तनित कुमार | 10. | धनुष | 4. | नक्षत्र | | | | | | 10. | अव्यक्त जृम्भक |
| | | | | 5. | तारा | | | | | | | |

## 38 वैमानिक देव

| 12 देवलोक + | 3 किल्विषिक + | 9 लोकान्तिक + | 9 ग्रैवेयक + | 5 अनुत्तर विमान |
|---|---|---|---|---|
| 1. सौधर्म | 1. त्रिपल्योपमिक | 1. सारस्वत | 1. भद्र | 1. विजय |
| 2. ईशान | 2. त्रिसागरिक | 2. आदित्य | 2. सुभद्र | 2. वैजयन्त |
| 3. सनत् कुमार | 3. त्रयोदशसागरिक | 3. वन्हि | 3. सुजात | 3. जयन्त |
| 4. माहेन्द्र | | 4. वरूण | 4. सुमनस | 4. अपराजित |
| 5. ब्रह्मलोक | | 5. गर्दतोय | 5. सुदर्शन | 5. सर्वार्थसिद्ध |
| 6. लान्तक | | 6. तुषित | 6. प्रियदर्शन | |
| 7. महाशुक्र | | 7. अव्याबाध | 7. आमोह | |
| 8. सहस्रार | | 8. आग्नेय (मरुतो) | 8. सुप्रतिबद्ध | |
| 9. आणत | | 9. अरिष्ट | 9. यशोधर | |
| 10. प्राणत | ● इन 99 देवता के अपर्याप्त और पर्याप्त कुल 198 भेद हुए। | | | |
| 11. आरण | ● इस प्रकार नारकी के 14 | मनुष्य के 303 | कुल जीव के | |
| 12. अच्युत | तिर्यंच के 48 | देवता के 198 | 563 भेद हुए। | |

## अजीव राशि के 560 भेद

अरूपी अजीव के 30 + रूपी अजीव के 530 भेद = 560 भेद

### अरूपी अजीव के 30 भेद

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| धर्मास्तिकाय के तीन भेद– | स्कंध | देश | प्रदेश | 3 |
| अधर्मास्तिकाय के तीन भेद– | स्कंध | देश | प्रदेश | 3 |
| आकाशास्तिकाय के तीन भेद– | स्कंध | देश | प्रदेश | 3 |
| काल द्रव्य का एक भेद | काल | | | 1 |
| | | | कुल | ★10 |

| | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| धर्मास्तिकाय के पाँच भेद– | द्रव्य | क्षेत्र | काल | भाव | गुण | 5 |
| अधर्मास्तिकाय के पाँच भेद– | द्रव्य | क्षेत्र | काल | भाव | गुण | 5 |
| आकाशास्तिकाय के पाँच भेद– | द्रव्य | क्षेत्र | काल | भाव | गुण | 5 |
| काल द्रव्य के पाँच भेद– | द्रव्य | क्षेत्र | काल | भाव | गुण | 5 |
| | | | | | कुल | ★20 |

★10 + ★20 = 30 भेद अरूपी अजीव के हुए

### रूपी अजीव के 530 भेद

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| वर्ण पाँच | काला, नीला, लाल, पीला और सफेद (श्वेत)। | प्रत्येक के 2 गंध, 5 रस, 8 स्पर्श और 5 संस्थान=20 | 20 × 5 = | 100 भेद |
| गंध दो | सुगंध और दुर्गन्ध। | प्रत्येक के 5 वर्ण, 5 रस, 8 स्पर्श और 5 संस्थान=23 | 23 × 2 = | 46 भेद |
| रस पाँच | तीखा, कड़वा, कषैला, खट्टा और मीठा। | प्रत्येक के 5 वर्ण, 2 गंध, 8 स्पर्श और 5 संस्थान=20 | 20 × 5 = | 100 भेद |
| स्पर्श आठ | खुरदरा, कोमल, हल्का, भारी, ठंडा, गर्म, लूखा, चिकना | प्रत्येक के 5 वर्ण, 2 गंध, 5 रस, 6 स्पर्श और 5 संस्थान=23 | 23 × 8 = | 184 भेद |
| संस्थान पाँच | परिमण्डल, वृत्त, त्रिकोण, चतुष्कोण और आयत। | प्रत्येक के 5 वर्ण, 2 गंध, 5 रस और 8 स्पर्श=20 | 20 × 5 = | 100 भेद |

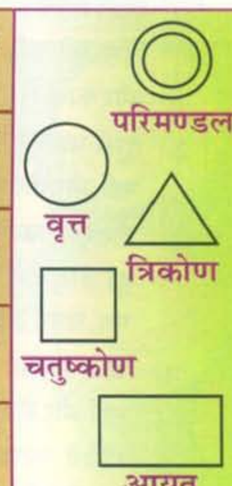


इस प्रकार 100 + 46 + 100 + 184 + 100 = 530 भेद **रूपी अजीव** के हुए। **अजीव राशि के कुल भेद 530 + 30 = 560**

## 22. बाईसवें बोले — श्रावकजी के बारह व्रत : (हिंसा, असत्य, चोरी, मैथुन और परिग्रह से मन-वचन-काया को निवृत्त करना व्रत है।)

1. पहले स्थूल प्राणातिपात विरमण व्रत में श्रावकजी निरपराधी त्रस जीव को संकल्पपूर्वक मारे नहीं, मरवावे नहीं, मन, वचन और काया से। दो करण, तीन योग से।
2. दूसरे स्थूल मृषावाद विरमण व्रत में श्रावकजी स्थूल (मोटा) झूठ बोले नहीं, बोलावे नहीं, मन, वचन और काया से। दो करण, तीन योग से।
3. तीसरे स्थूल अदत्तादान विरमण व्रत में श्रावकजी स्थूल चोरी करे नहीं, करावे नहीं, मन वचन और काया से। दो करण, तीन योग से।
4. चौथे स्थूल मैथुन विरमण व्रत में श्रावकजी पर-स्त्री सेवन का त्याग करे और अपनी स्त्री की मर्यादा करे। एक करण, एक योग से।
5. पाँचवें स्थूल परिग्रह-परिमाण व्रत में श्रावक जी नौ प्रकार के परिग्रह की मर्यादा करे। एक करण, तीन योग से।
6. छठे दिशा-परिमाण व्रत में श्रावक जी पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ऊँची और नीची, इन छह दिशाओं में गमन करने की मर्यादा करे। एक करण, तीन योग से।

7. सातवें उपभोग-परिभोग परिमाण व्रत में श्रावकजी छब्बीस बोलों की मर्यादा करे और पन्द्रह कर्मादानों का त्याग करे। एक करण, तीन योग से।
8. आठवें अनर्थ-दण्ड विरमण व्रत में श्रावकजी चार प्रकार के अनर्थ-दण्ड का त्याग करे। दो करण, तीन योग से।
9. नौवें सामायिक व्रत में श्रावकजी प्रतिदिन शुद्ध सामायिक करे (कम से कम एक सामायिक का नियम रखे)। दो करण, तीन योग से।
10. दसवें देशावकासिक व्रत में श्रावकजी संवर करे, चौदह नियम धारण करे, तीन मनोरथ का चिन्तन करे। दो करण, तीन योग से।
11. ग्यारहवें पौषध व्रत में श्रावकजी प्रतिपूर्ण पौषध करे। दो करण, तीन योग से।
12. बारहवें अतिथि-संविभाग व्रत में श्रावकजी श्रमण निर्ग्रंथों को प्रतिदिन चौदह प्रकार की वस्तु में से जो निर्दोष हो उन्हें देने की भावना रखे तथा भोजन के समय विशेष भावना भावे। दो करण तीन योग से।

## 23. तेईसवें बोले—साधुजी के पाँच महाव्रत।

सर्व-विरति अर्थात् सम्पूर्ण रीति से हिंसा, झूठ (असत्य), चोरी, कुशील और परिग्रह का त्याग करना 'महाव्रत' कहलाता है।

1. पहले महाव्रत में साधुजी महाराज, सर्वथा प्रकार से छह काय के जीवों की हिंसा करे नहीं, करावे नहीं और करते हुए को भला जाने नहीं। मन वचन और काया से (तीन करण तीन योग से)।
2. दूसरे महाव्रत में साधुजी महाराज, सर्वथा प्रकार से झूठ बोले नहीं, बोलावे नहीं और बोलते हुए को भला जाने नहीं। मन, वचन और काया से।
3. तीसरे महाव्रत में साधुजी महाराज, सर्वथा प्रकार से चोरी करे नहीं (बिना दी हुई वस्तु लेवे नहीं) चोरी करावे नहीं, चोरी करते हुए को भला जाने नहीं। मन, वचन और काया से।
4. चौथे महाव्रत में साधुजी महाराज, सर्वथा प्रकार से मैथुन सेवे नहीं, सेवावे नहीं और सेवते हुए को भला जाने नहीं। मन, वचन और काया से।
5. पाँचवें महाव्रत में साधुजी महाराज, सर्वथा प्रकार से परिग्रह रखे नहीं, रखावे नहीं और रखते हुए को भला जाने नहीं। मन, वचन और काया से।

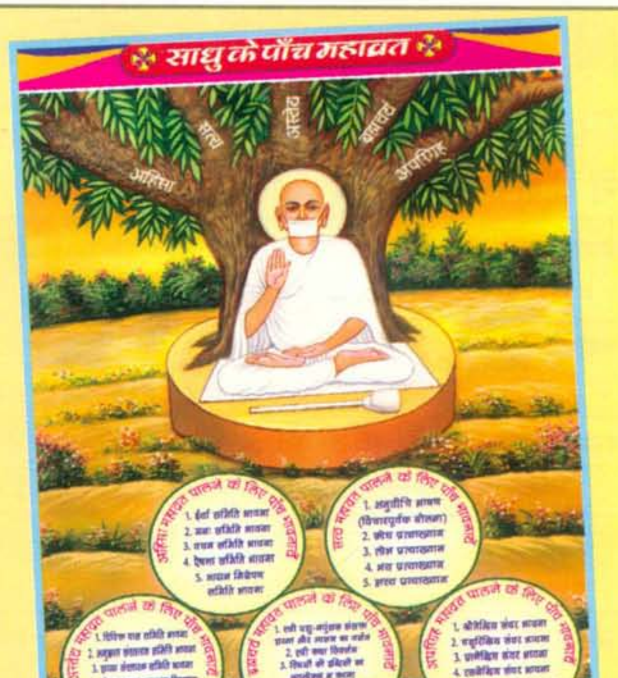

## 24. चौबीसवें बोले भांगा 49 उनपच्चास—

कोई भी व्रत, नियम, त्याग-प्रत्याख्यान जितने प्रकार के करण-योगों से ग्रहण किया जा सकता है, उन प्रकारों को 'भंग' कहते हैं।

| भंग | अंक 11 के भंग 9<br>एक करण एक योग से | भंग | अंक 12 के भंग 9<br>एक करण दो योग से | भंग | अंक 13 के भंग 3<br>एक करण तीन योग से |
|---|---|---|---|---|---|
| 1. | करूँ नहीं—मन से | 1. | करूँ नहीं—मन से, वचन से | 1. | करूँ नहीं—मन से, वचन से, काया से |
| 2. | करूँ नहीं—वचन से | 2. | करूँ नहीं—मन से, काया से | 2. | कराऊँ नहीं—मन से, वचन से, काया से |
| 3. | करूँ नहीं—काया से | 3. | करूँ नहीं—वचन से, काया से | 3. | अनुमोदूँ नहीं—मन से, वचन से, काया से |
| 4. | कराऊँ नहीं—मन से | 4. | कराऊँ नहीं—मन से, वचन से | | |
| 5. | कराऊँ नहीं—वचन से | 5. | कराऊँ नहीं—मन से, काया से | | |
| 6. | कराऊँ नहीं—काया से | 6. | कराऊँ नहीं—वचन से, काया से | | |
| 7. | अनुमोदूँ नहीं—मन से | 7. | अनुमोदूँ नहीं—मन से, वचन से | | |
| 8. | अनुमोदूँ नहीं—वचन से | 8. | अनुमोदूँ नहीं—मन से, काया से | | |
| 9. | अनुमोदूँ नहीं—काया से | 9. | अनुमोदूँ नहीं—वचन से, काया से | | |

| भंग | अंक 21 के भंग 9<br>दो करण एक योग से | भंग | अंक 22 के भंग 9<br>दो करण दो योग से | भंग | अंक 23 के भंग 3<br>दो करण तीन योग से |
|---|---|---|---|---|---|
| 1. | करूँ नहीं, कराऊँ नहीं—मन से | 1. | करूँ नहीं, कराऊँ नहीं—मन से, वचन से | 1. | करूँ नहीं, कराऊँ नहीं<br>—मन से, वचन से, काया से |
| 2. | करूँ नहीं, कराऊँ नहीं—वचन से | 2. | करूँ नहीं, कराऊँ नहीं—मन से, काया से | 2. | करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं<br>—मन से, वचन से, काया से |
| 3. | करूँ नहीं, कराऊँ नहीं—काया से | 3. | करूँ नहीं, कराऊँ नहीं—वचन से, काया से | 3. | कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं<br>—मन से, वचन से, काया से |
| 4. | करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—मन से | 4. | करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—मन से, वचन से | | |
| 5. | करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—वचन से | 5. | करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—मन से, काया से | | |
| 6. | करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—काया से | 6. | करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—वचन से, काया से | | |
| 7. | कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—मन से | 7. | कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—मन से, वचन से | | |
| 8. | कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—वचन से | 8. | कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—मन से, काया से | | |
| 9. | कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—काया से | 9. | कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—वचन से, काया से | | |

| भंग | अंक 31 के भंग 3<br>तीन करण एक योग से | भंग | अंक 32 के भंग 3<br>तीन करण दो योग से | भंग | अंक 33 के भंग एक |
|---|---|---|---|---|---|
| 1. | करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—मन से, | 1. | करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—मन से, वचन से | 1. | करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—मन से, वचन से, काया से |
| 2. | करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—वचन से, | 2. | करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—मन से, काया से | | |
| 3. | करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—काया से | 3. | करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं—वचन से, काया से | | |

## 25. पच्चीसवें बोलें—चारित्र पाँच—

1. आत्मा को अशुद्ध प्रवृत्ति से रोकना,
2. आत्मा को शुद्ध दशा में स्थिर रखना,
3. जिससे कर्म का क्षय होता है, वैसी प्रवृत्ति करना चारित्र कहलाता है।

### चारित्र के पाँच प्रकार—

1. सामायिक चारित्र,
2. छेदोपस्थापनीय चारित्र,
3. परिहारविशुद्धि चारित्र,
4. सूक्ष्म संपराय चारित्र,
5. यथाख्यात चारित्र।

## नवकार मंत्र हैं महामंत्र

नवकार मंत्र हैं महामंत्र, इस मंत्र की महिमा भारी हैं।
आगम में कथी गुरुवर से सुनी, अनुभव में जिसे उतारी हैं... ॥ धृ ॥
अरिहंताणं पद पहला हैं, अरि आरति दूर भगाता हैं।
सिद्धाणं सुमिरण करने से, मनवांछित सिद्धि पाता हैं।
आयरियाणं तो अष्ट सिद्धि और नवनिधि के भंडारी हैं।
नवकार मंत्र.....

उवज्झायाणं अज्ञान तिमिर हर, ज्ञान प्रकाश फैलाता हैं।
सव्वसाहूणं सब सुखदाता, तन मन को स्वस्थ बनाता हैं।
पद पाँच के सुमिरण करने से, मिट जाती सकल बिमारी हैं।
नवकार मंत्र.....

श्रीपाल सुदर्शन मेणरया, जिसने भी जपा आनन्द पाया
जीवन के सूने पतझड़ में, फिर फूल खिले सौरभ छाया।
मन नंदनवन में रमण करे, यह ऐसा मंगलकारी हैं।
नवकार मंत्र.....

नित नई बधाई सुने कान, लक्ष्मी वरमाला पहनाती,
अशोक मुनि जय-विजय मिले, शांति प्रसन्नता बढ़ जाती।
सम्मान मिले, सत्कार मिले, भवजल से नैया तारी हैं।
नवकार मंत्र.....

# साधना की शुरुआत

## सेवो सिद्ध सदा जयकार

सेवो सिद्ध सदा जयकार, जाँसे होवे मंगलाचार ॥टेर॥
अज अविनाशी अगम अगोचर, अमल अचल अविकार।
अन्तर्यामी त्रिभुवन स्वामी, अमित शक्ति भंडार ॥1॥
कर पणट्ठ-कमट्ठ-अट्ठ गुण, युक्त मुक्त संसार।
पायो पद परमेष्ठी तास पद, वन्दू वारम्बार ॥2॥
सिद्ध प्रभु का सुमिरण जग में, सकल सिद्धि दातार।
मनवांछित पूरण सुर-तरु-सम, चिंता चूरणहार ॥3॥
जपे जाप योगीश रात दिन, ध्यावे हृदय मंझार।
तीर्थंकर हूँ प्रणमें उनको, जब होवे अणगार ॥4॥
सूर्योदय के समय भक्तियुत, स्थिर चित्त दृढ़ता धार।
जपे सिद्ध यह जाप तास घर, होवे ऋद्धि अपार ॥5॥
सिद्ध स्तुति यह पढ़े भाव से, प्रतिदिन जो नर-नार।
सो दिव शिव सुख पावे निश्चिय, बना रहे सरदार ॥6॥
'माधव मुनि' कहे सकल संघ में, बढ़े हमेशा प्यार।
विद्या-विनय-विवेक समन्वित, पावे प्रचुर प्रचार ॥7॥

## साता कीजो जी

**साता कीजो जी, श्री शांतिनाथ प्रभु,**
**शिव सुख दीजो जी।।साता।।टेर।।**
शांतिनाथ है नाम आपका, सबने साता कारी जी।
तीन भुवन में चावां प्रभु जी, मृगी निवारी जी।।१।।
आप सरीखा देव जगत में, और नजर नहीं आवे जी।
त्यागी ने वीतरागी मोटा, मुझ मन भावे जी।।२।।
शांति जाप मन मांहि जपता, चाहे सो फल पावे जी।
ताव तेजरो दुख दारिद्र, सब टल जावे जी।।३।।
विश्वसेन राजाजी के नंदन, अचला देवी राणी जाया जी।
गुरु प्रसादे चौथमल कहे, घणा सुहाया जी।।४।।

## अरिहंत जय-जय सिद्ध प्रभु जय-जय

अरिहंत जय जय, सिद्ध प्रभु जय जय।
साधु जीवन जय जय, जिनधर्म जय जय॥
अरिहंत मंगल, सिद्ध प्रभु मंगल।
साधु जीवन मंगल, जिनधर्म मंगल॥
अरिहंत उत्तम, सिद्ध प्रभु उत्तम।
साधु जीवन उत्तम, जिनधर्म उत्तम॥
अरिहंत शरण, सिद्ध प्रभु शरण।
साधु जीवन शरण, जिनधर्म शरण॥
चार शरण दुःख, हरण जगत में,
और न शरणा, कोई होगा।
जो भव्य प्राणी, करे आराधन,
उसका अजर-अमर पद होगा॥

## जय बोलो महावीर स्वामी की

*जय बोलो महावीर स्वामी की, घट-घट के अन्तरयामी की॥ध्रुव॥*
*जिस जगति का उद्धार किया, जो आया शरण भव पार किया।*
*जिसने पीड़ सुनी हर प्राणी की, जय बोलो महावीर स्वामी की॥1॥*
*जो पाप मिटाने आया था, भारत को आन जगाया था।*
*उस त्रिशला नंदन ज्ञानी की, जय बोलो महावीर स्वामी की॥2॥*
*हो लाख बार प्रणाम तुम्हें, हे वीर प्रभु भगवान तुम्हें।*
*"मुनि दर्शन" मुक्ति गामी की, जय बोलो महावीर स्वामी की॥3॥*

## आत्म पुकार

अरिहंत देव मेरी सुनिये पुकार, अगला भव मिले तेरे दरबार ॥टेर ॥
महाविदेह क्षेत्र में मेरा हो जनम, जैन कुल पाऊँ होवे आर्य करम।
पालने में सुनने को मिले नवकार..... अगला भव..... ॥ 1 ॥
आठ बरस की उम्र हो मेरी, समोवसरण में सुनूँ देशना तेरी।
अंतर में बहे वैराग्य की धार..... अगला भव..... ॥ 2 ॥
करेमि भंते का पाठ पढ़ूँ, गुणस्थानों की श्रेणि चढ़ूँ,
तब ही होगा मेरा उद्धार..... अगला भव..... ॥ 3 ॥
मिथ्यात्व मोह दूर हटे, काल अनादि की वासना घटे।
स्वाध्याय से करूँ निज का निखार..... अगला भव..... ॥ 4 ॥
संयम की उत्कृष्ट पालना करूँ, सहजानंदी स्वरूप वरूँ।
ज्ञाता दृष्टा बनूँ अविकार..... अगला भव..... ॥ 5 ॥
हट जाये मेरे सब आवरण, केवल ज्ञान पाऊं होवे ऐसा आचरण।
आत्म-विजय से मिले मुक्ति का द्वार..... अगला भव..... ॥ 6 ॥

## अपना कर्त्तव्य करते चलो...

**(तर्ज : जिन्दगी प्यार का गीत है...)**

अपना कर्त्तव्य करते चलो, चिंता करने से कैसे चलेगा।
आँधी हो चाहे तूफान हो, चिंता करने से कैसे चलेगा ॥टेर ॥
जिनको अपना समझते हैं हम, ज्यादा मिलते उन्हीं से ही गम।
साए रहते नहीं एक सम, चिंता करने से....... ॥1 ॥
जब आशा कोई तोड़ दे, बीच मझधार में छोड़ दे।
दिल को थामे अकेले चलो, चिंता करने से....... ॥2 ॥
माना मंजिल बहुत दूर है, साथ में कोई साथी नहीं।
आत्म बल को बढ़ाते चलो, चिंता करने से....... ॥3 ॥

## तुमसे लागी लगन

तुमसे लागी लगन, ले लो अपनी शरण।
पारस प्यारा, मेटो-मेटो जी संकट हमारा॥
निश-दिन तुमको जपूं, पर से नेहा तजूँ।
जीवन सारा, तेरे चरणों में बीते हमारा॥टेर॥
अश्वसेन के राजदुलारे, वामादेवी के सुत प्राण प्यारे।
सब से नाता तोड़ा, जग से मुखड़ा मोड़ा, संयम धारा॥1॥
इन्द्र और धरणेन्द्र भी आये, देवी पद्मावती मंगल गाये।
आशा पूरो सदा, दुःख नहीं पावे कदा, सेवक थांरां॥2॥
जग के दुःख की परवाह नहीं है, स्वर्ग सुख की भी चाह नहीं है।
मेटो जनम-मरण, होवे ऐसा यतन, तारण हारा॥3॥
लाखों बार तुम्हें शीष नमाऊँ, जग के नाथ तुम्हें कैसे पाऊँ।
'पंकज' व्याकुल भया, दर्शन बिन ये जिया, लागे खारा॥4॥

## श्री आदि जिनंदं (चौबीसी)

श्री आदि जिनंदं, समरस कन्दम्, अजित जिनंदं, भज प्राणी।
संभव जग त्राता, शिव मग राता, दो सुखसाता हित आणी।
अभिनन्दन देवा, सुमति सुसेवा, करो नित मेवा, रिपु घाता।
चौबीस जिन राया, मन-वच-काया, प्रणमूं पाया, दो साता ॥1 ॥
श्री पद्म सुपासं, शशि गुण रासं, सुविधि सुवासं, हितकारी।
श्री शीतल स्वामी, अंतर्यामी, शिवगति गामी, उपकारी।
श्रेयांस दयाला, परम कृपाला, भविजन व्हाला, जग त्राता।
चौबीस जिन राया, मन-वच-काया, प्रणमूं पाया, दो साता ॥2 ॥
वासुपूज्य सुकंतं, विमल अनंतं, धर्म श्री संतं, शांतिकारी।
कुंथू अरनाथं, तज जग साथं, मल्लि सुवासं संग धारी।
मुनिसुव्रत सुनमि, आत्मा ने दमी, दुर्मति ने वमी, तप राता।
चौबीस जिन राया, मन-वच-काया, प्रणमूं पाया, दो साता ॥3 ॥
रिष्ठनेमि बड़ाई, नार न ब्याही, तोरण जाई, छिटकाई।
नाग नागण तांई, दिया बचाई, पारस सांई, सुखदाई।
जय-जय वर्द्धमानं, गुणनिधि खानं, त्रिजग भानं, शुद्ध आता।
चौबीस जिन राया, मन-वच-काया, प्रणमूं पाया, दो साता ॥4 ॥
संसार का फन्दा, दूर निकन्दा, धर्म का छन्दा, जिन लीना।
प्रभु केवल पाया, धर्म सुनाया, भवि समझाया, मुनि कीना।
कहे 'रिख तिलोकं', सदा तस धोकं, दो सुख थोकं, चित चाता।
चौबीस जिन राया, मन-वच-काया, प्रणमूं पाया, दो साता ॥5 ॥

## संयम उसको मिले

**तर्ज—नील गगन के तले.........**

संयम उसको मिले, पुण्य हो जिसके फले।
ऐसे हैं प्राणी, लाखों ही जग में, भोगों में बहते चले... ॥ टेर ॥
मुश्किल से मानव, जीवन को पाए, काम करो कुछ भले... ॥ 1 ॥
भोगों के रंग में, रंगी है दुनियाँ, विषयों के झूले में झूले... ॥ 2 ॥
कर्मों का क्षय हो, इन्द्रियों का जय हो, भव-भव के फेरे टले... ॥ 3 ॥
संयमी जीवन, ऐसा हो जैसे, कीचड़ में कमल खिले... ॥ 4 ॥
शास्त्रों को सुनकर, श्रद्धा के बल पर, वीर के पथ पे चले... ॥ 5 ॥
संयम को लेकर, कर्मों से लड़कर, मुक्ति के पथ पे चले... ॥ 6 ॥

## महावीर का पंथ

*मेरे जीवन का जब अंत हो, मेरे सामने एक संत हो।*
*मेरे होवें पर अरिहंत हो और महावीर का पंथ हो... ॥टेर॥*
*कषायों की आग में, जलता जलता आया हूँ।*
*वासना की राह से, चलता चलता आया हूँ।*
*दुःख भरी इस यात्रा का-2, सुखद अब अंत हो... ॥1॥*
*धर्म से मेरी प्रीत हो, वेदना से जीत हो।*
*आगम का संगीत हो, प्रभु नाम का गीत हो।*
*साधना के नंदनवन में-2, भावना बसंत हो... ॥2॥*
*तन में जब तक साँस हो, मन में एक विश्वास हो।*
*मुक्ति की मुझे प्यास हो,*
*पंडित मरण की आस हो।*
*तन अचल और मन अटल-2,*
*अब कोई भी न द्वन्द हो... ॥4॥*

## उम्र थोड़ी-सी हमको

(तर्ज—खिल उठा है चमन.......)

*उम्र थोड़ी-सी हमको मिली थी मगर,*
*वो भी घटने लगी देखते-देखते।*
*ये करूँ, वो करूँ, कुछ न मैं कर सका,*
*साँस रुकने लगी देखते-देखते॥टेर॥*

*कितना काया का शृंगार मैंने किया,*
*कितना माया से भंडार ये भर दिया।*
*काया बेनूर थी, माया भी दूर थी-2,*
*माटी गलने लगी, देखते-देखते॥1॥*

*काया अकड़ी हुई भी बदल जायेगी,*
*जो बची है अक्कड़ वो निकल जायेगी।*
*ले तकाजा हुआ और जनाजा उठा,*
*डोली चलने लगी देखते-देखते॥2॥*

*इस जहाँ ने मुझे ऐसा ठुकरा दिया,*
*आग ने मुझको सीने से लिपटा लिया।*
*राख को छोड़ परिजन चले सब गये-2,*
*वो भी उड़ने लगी देखते-देखते॥3॥*

(तर्ज : होठों से छू लो तुम.....)

माता की दया हम पर, हरदम ही बनी रहती-२
संतान के सारे गम, माँ खुद में समा लेती...॥टेर॥
माँ से बढ़कर जग में, कोई चीज नहीं होती
माँ जैसी दुनिया में, कोई और नहीं होती,
सारे दुःख सह कर भी, खुशियाँ वो हमें देती...॥1॥
चाहे पूत कपूत बने, पर माँ तो माँ ही है,
माता की क्षमा का तो, कोई पार न पाया है,
वो स्नेह के आँसू को, आँचल में छुपा लेती...॥2॥
वो प्रेम का सागर है, ममता की देवी है,
हम सबकी शक्ति है, ये जग की जननी है,
भगवान से भी पहले, माँ की पूजा होती...॥3॥
माँ तेरे चरणों में, बीते मेरा हर पल,
माँ तेरे आशिष की, छाया ही हो हम पर,
जग की इस ज्वाला को, माँ तू ही बुझा सकती...॥4॥
जब-जब संकट आया, संतान पे माँ तेरे,
लहू अपना बहाया है, बेटों की रक्षा में,
माँ सबकुछ भूल के तुम, हम सबको बचा लेती...॥5॥
संसार छलावे है, माँ तू ही निश्छल है,
हमें छोड़ के मत जाना, माँ तेरा सहारा है,
सब कुछ मिल जाता है, पर माँ तो नहीं मिलती...॥6॥

## सहना ही जिन्दगी है...

तर्ज : मिलती है जिन्दगी.....

सहना ही जिन्दगी है, मनवा तू मान ले,
शास्त्रों का सार है यही, इसको तू जान ले॥टेर॥
पूर्वभवों में कर्म जो बाँधे अज्ञान से,
इस भव में काट ले उसे, प्रभु के फरमान से,
हल्की करूँगा आत्मा, मन में तू ठान ले॥1॥
सहने से कर्म टूटते, मिटता कषाय है,
कर्मों को काटने के लिए, उत्तम उपाय है,
जप तप से भी ये बड़ा, दिल में तूं धार ले॥2॥
दुःख ना मिले मुझे कभी, करना ना याचना,
समता से कष्ट को सहूँ, ऐसी हो प्रार्थना,
विश्वास मेरा ना हिले, वरदान माँग ले॥3॥
मजबूती से सहो भलो, मजबूती से सहो,
जैसा भी होवे सामने, समता से तुम सहो,
महापुरुषों की साधना, ऐसी ही जान ले॥4॥

# ३२ आगमों के दस द्वार

| क्र. सं. | सूत्र नाम | सूत्र विषय | गाथा | उपधान आयंबिल | अनुयोग | कालिक /उत्का. | प्रकार | स्थान | अध्ययन | स्कंध वर्गादि |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1. | आचारांग | 5 आचार का वर्णन | 2500 | 50 | चरण | कालिक | अंग | पैर | 25 | श्रुत स्कंध 2 |
| 2. | सूत्रकृतांग | जैन अजैन धर्म दर्शन का वर्णन | 2100 | 30 | द्रव्य | कालिक | अंग | पैर | 23 | श्रुत स्कंध 2 |
| 3. | स्थानांग | 1 से 10 संख्या में द्रव्य पर्याय वर्णन | 3770 | 18 | द्रव्य | कालिक | अंग | जंघा | 10 | – |
| 4. | समवायांग | 1 से कोटि संख्या में द्रव्य पर्याय वर्णन | 1667 | 3 | द्रव्य | कालिक | अंग | जंघा | – | 100 समवाय |
| 5. | भगवती | व्याख्या सहित तत्त्व निरूपण | 15752 | 186 | द्रव्य | कालिक | अंग | उरु | – | 41 शतक |
| 6. | ज्ञाताधर्म कथा | दृष्टांत तथा धर्मकथाएँ | 5500 | 33 | कथा | कालिक | अंग | उरु | 19/206 | – |
| 7. | उपासक दशांग | 10 श्रावकों की धर्म कथा | 820 | 14 | कथा | कालिक | अंग | पेट | 10 | – |
| 8. | अंतकृत् दशांग | 90 मोक्षगामी जीवों की धर्म कथा | 900 | 12 | कथा | कालिक | अंग | छाती | 90 | 8 वर्ग |
| 9. | अनुत्तरोपपातिक | अनुत्तर विमान उत्पन्न की धर्म कथा | 292 | 7 | कथा | कालिक | अंग | बाहु | 33 | 3 वर्ग |
| 10. | प्रश्न व्याकरण | आस्रव संवर द्वारों का वर्णन | 1250 | 14 | चरण | कालिक | अंग | बाहु | 3 | 10 द्वार |
| 11. | विपाक | पुण्यफल पापफल की धर्मकथा | 1296 | 24 | कथा | कालिक | अंग | गला | 20 | – |
| 1. | औपपातिक | समवसरण+धर्मदेशना+देवगति | 1167 | 3 | कथा | उत्का | उपांग | पैर | – | 2 अधिकार |
| 2. | राजप्रश्नीय | प्रदेशी–केशी प्रश्न उत्तर | 2078 | 3 | कथा | उत्का | उपांग | पैर | – | पूर्वार्ध उत्तरार्ध |
| 3. | जीवाभिगम | 1 से 10 भेद से जीव वर्णन | 4700 | 3 | द्रव्य | उत्का | उपांग | जंघा | – | 10 प्रतिपति |
| 4. | प्रज्ञापना | 36 पदों में विविध विषय | 7187 | 3 | द्रव्य | उत्का | उपांग | जंघा | – | 36 पद |
| 5. | जंबू द्वीपप्रज्ञप्ति | जंबू द्वीप+6 आरों का वर्णन | 4146 | 10 | गणित | कालिक | उपांग | उरु | – | 7 वक्षस्कार |
| 6. | चंद्र प्रज्ञप्ति | चंद्र मण्डल गति नक्षत्र इ. वर्णन | 1200 | 3 | गणित | कालिक | उपांग | उरु | – | 20 प्राभृत |
| 7. | सूर्य प्रज्ञप्ति | सूर्य मण्डल गति नक्षत्र इ. वर्णन | 2200 | 3 | गणित | उत्का | उपांग | पेट | – | 20 प्राभृत |
| 8. | निरयावलिका | कोणिकादि नरकगामी जीव वर्णन | | 7 | कथा | कालिक | उपांग | छाती | 10 | – |
| 9. | कल्पवंतसिका | पुत्र स्वर्गगामी जीव वर्णन | | 7 | कथा | कालिक | उपांग | छाती | 10 | – |
| 10. | पुष्पिका | आराधक विराधक जीव वर्णन | 1107 | 7 | कथा | कालिक | उपांग | बाहु | 10 | – |
| 11. | पुष्पचूलिका | विराधक सतियों की कथा | | 7 | कथा | कालिक | उपांग | बाहु | 10 | – |
| 12. | वृष्णिदशा | नेमिशासन के देवगामी जीवों की कथा | | 7 | कथा | कालिक | उपांग | गला | 12 | – |
| 1. | दशाश्रुत स्कंध | 10 चित्त समाधि आदि का वर्णन | 1830 | 20 | चरण | कालिक | छेद | | 10 | – |
| 2. | बृहत्कल्प | साधु के कल्प अकल्प का वर्णन | 473 | 20 | चरण | कालिक | छेद | | – | 6 उद्देशक |
| 3. | व्यवहार | 5 व्यवहारों का वर्णन | 600 | 10 | चरण | कालिक | छेद | | – | 10 उद्देशक |
| 4. | निशीथ | मासिकादि प्रायश्चित्त वर्णन | 815 | 10 | चरण | कालिक | छेद | | – | 20 उद्देशक |
| 1. | दशवैकालिक | संक्षेप में आचार सार | 700 | 15 | चरण | उत्का | मूल | | 10 | – |
| 2. | उत्तराध्ययन | वीर प्रभु की अंतिम देशना | 2000 | 29 | कथा | कालिक | मूल | | 36 | – |
| 3. | नंदी | 5 ज्ञान का वर्णन | 700 | 3 | द्रव्य | उत्का | मूल | | – | – |
| 4. | अनुयोग द्वार | नय निक्षेप अनुगम उपक्रम वर्णन | 1899 | 8 | द्रव्य | उत्का | मूल | | – | – |
| 5. | आवश्यक | आवश्यकों का वर्णन | 125 | – | चरण | – | आवश्यक | | 6 | – |

# पुरुषाकार चक्रम्

## द्वादशांगी पुरुष

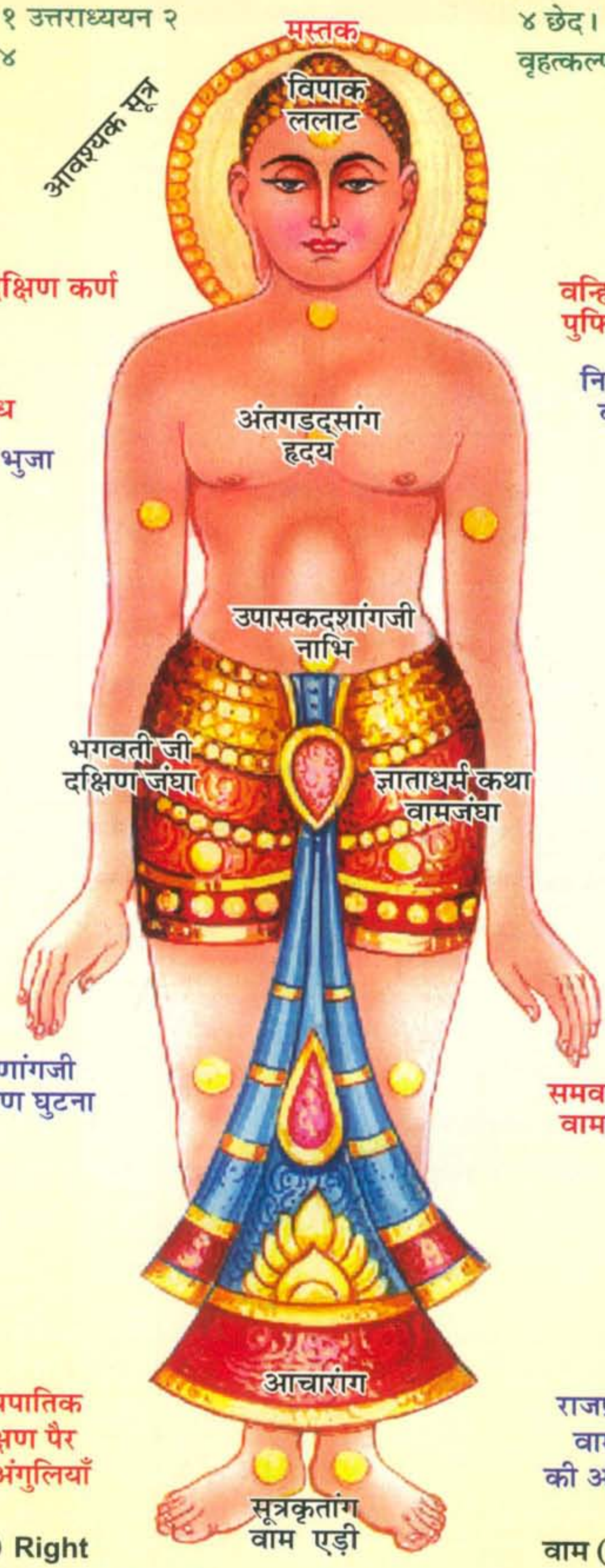


ACHARYA SHRI KAILASSAGARSURI GYANMANDIR
SHRI MAHAVIR JAIN ARADHANA KENDRA
Koba, Gandhinagar-382007.
Phone : (079) 23276252, 23276204-05

# श्री तीर्थंकर चालीसा

दोहा: तीर्थंकर प्रभु के चरणा, वंदन बारम्बार ।
तीन लोक में पूज्य हैं, तीन लोक आधार ॥
चौंतीस अतिशय के धनी, प्रणमें इन्द्र तमाम।
कर्म विजय करके प्रभु, मुक्त बने अभिराम ॥

अतिशयी जीवन के धारी, तीर्थंकर की महिमा भारी ॥१॥
आस्था के आधार है स्वामी, तीर्थंकर होते हित कामी ॥२॥
इन्द्र ध्वजा चलती है आगे, तीर्थंकर से भविजन जागे ॥३॥
ईति भीति ना पाँव पसारे, तीर्थंकर जहाँ चरण पधारें ॥४॥
उज्ज्वल आभा मंडल चमके, तीर्थंकर सिंहासन दमके ॥५॥
ऊर्जा का महास्रोत बहाते, तीर्थंकर छवि देख अघाते ॥६॥
एक चित्त से जो भी ध्यावे, तीर्थंकर-सी शक्ति पावे ॥७॥
ऐश्वर्य कहीं न ऐसा देखा, तीर्थंकर में मीन न मेखा ॥८॥
ओज तेज तुम-सा ना कोई, तीर्थंकर सम तीर्थंकर होई ॥९॥
औपाधिक सब बंधन तोड़े, तीर्थंकर जग वैभव छोड़े ॥१०॥
कंटक सारे उल्टे होते, तीर्थंकर ना खावे गोते ॥११॥
खत्म न होती गुण-गण गणना, तीर्थंकर मुक्ति पद वरणा ॥१२॥
गजगामिनी गति तिहारी, तीर्थंकर-सा नहीं उपकारी ॥१३॥
घनघाती कर्म का क्षय है करते, तीर्थंकर कैवल्य को वरते ॥१४॥
चतुर्विध संघ की रचना करते, तीर्थंकर भव सागर तरते ॥१५॥
छप्पन दिशाकुमारियाँ आवे, तीर्थंकर की गरिमा गावे ॥१६॥
जन्माभिषेक मेरू पर करते, तीर्थंकर को इन्द्र सुमरते ॥१७॥
झरना झर-झर बहता जैसे, तीर्थंकर की करूणा वैसे ॥१८॥
टले युद्ध महामारियाँ भागे, तीर्थंकर का पुण्य जो आगे ॥१९॥
ठहरे आँधी तूफां भारी, तीर्थंकर की है बलिहारी ॥२०॥
डगमग नैया पार लगावे, तीर्थंकर चरणां जो आवे ॥२१॥
ढकी ज्ञान राशि प्रकटावे, तीर्थंकर दर्शन जो पावे ॥२२॥
तज संसार बने अणगारा, तीर्थंकर है तारणहारा ॥२३॥
थल जल नभ में गूंजे वाणी, तीर्थंकर वाणी कल्याणी ॥२४॥
दश धर्मों का नाद गुंजावे, तीर्थंकर सन्मार्ग दिखावे ॥२५॥
धर्म चक्र नभ में है चलता, तीर्थंकर का बोध है फलता ॥२६॥
नभ में देव दुन्दुभि बाजे, तीर्थंकर जगति पर राजे ॥२७॥
परिषद् बारह प्रवचन सुनती, तीर्थंकर को हृदय सुमरती ॥२८॥
फलित होय भव्यों की आशा, तीर्थंकर दे ज्ञान प्रकाशा ॥२९॥
बल अनन्त एक खजाना, तीर्थंकर-सा और न माना ॥३०॥
भविजन चरणों में सुख पाए, तीर्थंकर आनंद बरसाए ॥३१॥
मरण समाधि भविजन पाए, तीर्थंकर का ध्यान जगाए ॥३२॥
यश त्रैलोक्य में तेरा भारी, तीर्थंकर जगति हितकारी ॥३३॥
रक्षण हित देवे उपदेशा, तीर्थंकर दुःख हरे किलेशा ॥३४॥
लखकर तीर्थंकर के दर्शन, पावन होगा वह दिन वह क्षण ॥३५॥
वर्षीदान प्रभु है करते, तीर्थंकर सारे अघ हरते ॥३६॥
शब्दों से क्या महिमा गाएँ, तीर्थंकर सम हम बन जाएँ ॥३७॥
समोसरण की छवि निराली, तीर्थंकर है महापुण्यशाली ॥३८॥
षट्काया की रक्षा करना, तीर्थंकर पद जल्दी वरना ॥३९॥
हलचल मेटे मन की सारी, तीर्थंकर जय-विजय तिहारी ॥४०॥

दोहा: क्षत्रिय कुल में जन्म ले, करे धर्म स्वीकार ।
शरणागत रक्षा करे, कर दे बेड़ा पार ॥
त्रस्त जनों के त्रात हो, तीर्थंकर भगवान,
त्रय योग से अर्पणा, करे सदा मतिमान ।
ज्ञानलोक फैला जहाँ, किया दूर अज्ञान,
कर्म 'विजय' की साधना, दिया महत् वरदान ॥

## प्रतिज्ञा

मैं जैन हूँ, मुझे जैन होने का गर्व है, अरिहंत और सिद्ध मेरे देव हैं, सुसाधु मेरे गुरु हैं, जहाँ दया है वहाँ धर्म है, मैं सुदेव, सुगुरु, सुधर्म और संघ के प्रति अपने आपको समर्पित करता हूँ।
सादर जय जिनेन्द्र !

हार्दिक आभार,

"ज्ञानं सुज्ञानम्" A to Z Jainism

का नन्हा सा गुलदस्ता आपके हाथों में है। इसके एक-एक फूल की एक-एक पंखुड़ी पर अनंत महापुरुषों के उपकार हैं। सुंदर-सुंदर वाटिकाओं से हमने फूल चुने और गुलदस्ता बनाया है। हमारा अपना कुछ नहीं। सब महापुरुषों का ही है और उन्हीं के चरणों में सादर समर्पित है।

## Heartly Gratitude

***The Beautiful flower vase is in your hand. The single flower & the petals, are selected & described, knowledged, sounded by the great personalities is the uniqueness of this vase. The beautifulness of these flowers are selected all over in the different fields, nothing is ours description everything, everyward is of the great personalities & this book is dedicated to them.***

**आभार**

# ऊपर जिसका अंत नहीं, उसे आसमां कहते हैं,
# जहां में जिसका अंत नहीं, उसे माँ कहते हैं।

## माँ-बाप

मुझे इस दुनिया में लाया,
मुझे बोलना चलना सिखाया,
ओ मात-पिता तुम्हें वंदन,
मैंने किस्मत से तुम्हें पाया ॥ टेर ॥
मैं जब से जग में आया, बन तब से शीतल छाया,
कभी सहलाया गोदी में, कभी कंधों पे बिठाया,
मेरे सर पर हाथ रखकर, बस प्यार ही प्यार लुटाया ॥ 1 ॥
मैं उठाकर सर चल पाऊँ, इस लायक तुमने किया है,
कहीं हाथ नहीं फैलाऊँ, मुझे तुमने इतना दिया है,
मुझे जग की रीत सिखाई, मुझे धर्म का पाठ पढ़ाया ॥ 2 ॥
माँ-बाप की आँखों से मैं, आँसू बनकर न गिरूँगा,
माँ-बाप का दिल जो दुखादे, मैं ऐसा कुछ न करूँगा,
माँ-बाप के रूप में मैंने, भगवान को जैसे पाया ॥ 3 ॥
जब देव भी मात-पिता के, उपकार चुका ना पाये,
नाकोड़ा दरबार 'प्रदीप', किन शब्दों में गुण गाएँ,
मैं कर्ज निभा पाऊँ तो,


त सिखाई, मुझे धर्म का पाठ पढ़ाया ॥
प की आँखों से मैं, आँसू बनकर न गिरूँगा,
प का दिल जो दुखादे, मैं ऐसा कुछ न करूँगा,
प के रूप में मैंने, भगवान को जैसे पाया ॥ 3 ॥
देव भी मात-पिता के, उपकार चुका ना पाये,
दरबार 'प्रदीप', किन शब्दों में गुण गाएँ,
मैं कर्ज निभा पाऊँ तो,


## माँ

तूं कितनी अच्छी है, तूं कितनी भोली है,
प्यारी-प्यारी है, ओ माँ ! ओ माँ !
ये जो दुनियां है ये वन है कांटों का,
तूं फुलवारी है, ओ माँ ! ओ माँ ! तूं कितनी अच्छी है.....
दुखन लागी माँ तेरी अखियाँ - २
मेरे लिए जागी है तूं सारी-सारी रतियां,
मेरी निंदिया पे अपनी निंदिया भी,
तूने वारी है, ओ माँ ! ओ माँ ! तूं कितनी अच्छी है.....
अपना नहीं तुझे सुख-दु:ख कोई - २
मैं मुस्काया तू मुस्काई मैं रोया तू रोई,
मेरे हंसने पे मेरे रोने पे,
तूं बलिहारी है, ओ माँ ! ओ माँ ! तूं कितनी अच्छी है.....
माँ बच्चों की जां होती है - २
वो होते हैं किस्मत वाले जिनकी माँ होती है,
कितनी सुंदर है कितनी सुशील है,
न्यारी - न्यारी है, ओ माँ ! ओ माँ !
तूं कितनी अच्छी है.....

(तर्ज : उसको...

उसको नहीं देखा हमने कभी,
पर उसकी जरूरत क्या होगी।
ए माँ - २ तेरी सूरत से अलग,
भगवान की सूरत क्या होगी ॥टेर ॥
...सान तो क्या देवता भी, आँचल में पले तेरे SSS,
है स्वर्ग इसी दुनियाँ में, कदमों के तले तेरे,
ममता ही लुटाए जिसके नयन, ऐसी कोई मूरत क्या होगी ॥१॥
क्यों धूप जलाए दु:खों की, क्यों गम की घटा बरसे SSS,
ये हाथ दुवाओं वाले, रहते हैं सदा सर पे,
तू है अंधेरेपन में हमें, सूरज की जरूरत क्या होगी ॥२॥
कहते हैं तेरी शान में जो, कोई ऊँचे बोल नहीं SSS,
भगवान के पास भी माता, तेरे प्यार का मोल नहीं।
हम तो यही जाने तुझसे बड़ी,
संसार की दौलत क्या होगी ॥३॥